



Impact Factor :  
7.834

## गीना देवी शोध संस्थान

द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित  
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037

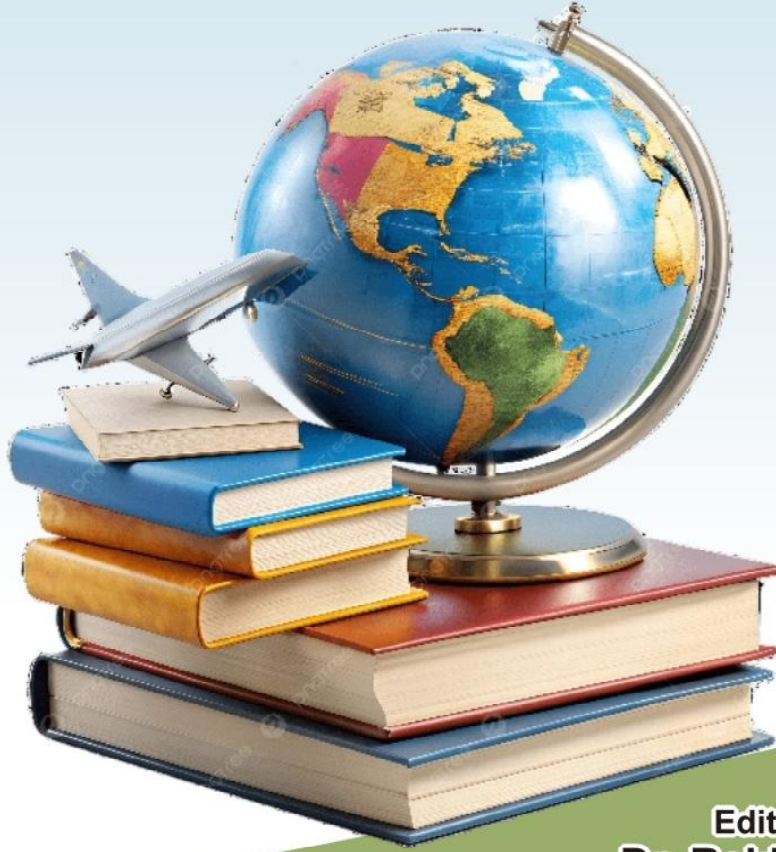
March-April 2026

Volume 14, Issue 3-4

# Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)



Editor :  
**Dr. Rekha Soni**  
Chief-Editor :  
**Dr. Naresh Sihag Adv.**



संस्थापक सम्पादिका :  
स्मृति शेष  
डॉ. विश्वकीर्ति

# संगम SANGAM

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI  
LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

[www.ginajournal.com](http://www.ginajournal.com)



संस्थापक संरक्षक :  
स्मृति शेष  
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 14

अंक : 3 - 4, भाग - 5

मार्च - अप्रैल : 2026

आईएसएसएन : 23 21 - 803 7

सम्पादक :

डॉ. रेखा सोनी

टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर, राज.

प्रधान सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,  
भिवानी (हरियाणा)

विशेषांक सम्पादक :

डॉ. नरेश कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी,

राजकीय महा., आदमपुर (हिसार)

अंतर्राष्ट्रीय सम्पादक मण्डल :

डॉ. लक्ष्मी जोशी

त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।

शिओंग छन श्यू, चीन।

डॉ. ऋतु शर्मा ननन पाँडे

साहित्यकार, शिक्षाविद, नीदरलैंड।

डॉ. सुनीता शर्मा

हिन्दी साहित्यकार, कवयित्री, संपादक

एवं शिक्षाविद मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया

डॉ. सृष्टि चौधरी

लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्प्युनिकेशन,

सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर गर्ल्स,

पटियाला, पंजाब।

श्री श्रेष्ठ चौधरी,

सीनियर मैनेजर,

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा

अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

कानूनी सलाहकार :

डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट,

श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

## सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग

नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल

बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,

रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला

चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा

आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे

बाबा साहेब चितले महाविद्यालय

भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल

राजीव गांधी बीएड कॉलेज

धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी

दशमेश गर्ल्स कॉलेज,

अल्ला बक्श, मुकरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती

साहित्यकार, अनुवादक, यूक्रेन।

डॉ. हेमराज न्यौपाने

काठमाण्डु, नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा

अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल

बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप

ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

डॉ. मधुबाला

राजकीय महाविद्यालय, लाखनमाजरा।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग

विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका

राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,

श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया

संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा

शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय,

श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया

माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,

सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट

हिन्दी विभाग,

कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी

सीहेच एसडीएसटी थरेसा महिला

महाविद्यालय, एलुरु, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.

यूनाईटेड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,

अंकारा विश्वविद्यालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास

अध्यक्ष होम्योपैथिक, लखनऊ।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

# संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

**AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI  
LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL**

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerce, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

**डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट**  
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,  
भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

*Published by :*

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

**Price**

Individual/Institutional : 1300/-

- Disclaimer :**
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
  2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
  3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originality of their views/opinions expressed in their articles.
  4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdiction only.

*Printed by :* Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

# Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gagan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

50

THE GAZETTE OF INDIA : EXTRAORDINARY

[PART III—SEC. 4]

तालिका- 2

शैक्षणिक/ शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसे: प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि )

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान/ अभियांत्रिकी/ कृषि/ चिकित्सा/ पशु-चिकित्सा/ विज्ञान संकाय	भाषा/ सामाजिक/ पुस्तकालय/ शिक्षा/ शैक्षणिक/ वाणिज्य/ प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त )		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान- अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 www.bohalsm.blogspot.com

✉ grsbohals@gmail.com

☎ 8708822674

📞 9466532152

## अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07-07
2.	हिंदी साहित्य की विकास यात्रा और बदलती परिस्थितियां : आदिकाल से वर्तमान काल तक एक आलोचनात्मक अध्ययन	Siksha	08-13
3.	वैश्वीकरण और हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श	देवेन्द्र कुमारी	14-17
4.	वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप	सुचित्रा	18-24
5.	बदलते भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श का उत्कर्ष संवेदना से विमर्श तक	पुष्पा	25-29
6.	हिंदी साहित्य और बाल मनोविज्ञान	रमेश कुमार	30-33
7.	शिक्षा की वर्तमान स्थिति और आगे की राह : स्त्री आत्मकथा के संदर्भ में	पूनम	34-39
8.	वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप	डॉ. रामकुमार	40-44
9.	हिंदी भाषा का वैश्विक प्रभाव	श्रीमती सुनील कुमारी	45-51
10.	वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य में नारी विमर्श	अक्षय कुमार, डॉ. सुनीता सिंह	52-55
11.	हनुमानगढ़ जिले के भू आवरण के बदलते स्वरूप पर नगरीकरण का प्रभाव : एक भौगोलिक अध्ययन	भीमसेन मालिया, डॉ. सचिन कुमार	56-60
12.	Role of Regional Rural Banks in Financial Inclusion : A Case on Uttar Bihar Gramin Bank	Priti Kumari, Dr. Niraj Kumar Verma	61-68
13.	हिंदी साहित्य में संस्कृति का वैश्विक प्रभाव	सुनीता देवी	69-76
14.	आत्मकथा 'जूठन' में यथार्थ जीवन	पुनीत भारती	77-80
15.	भारतीय शिक्षा प्रणाली में कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता एवं संभावनाएँ तथा ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच अंतर : चुनौतियाँ एवं समाधान	डॉ. पूराराम मेघवाल	81-89
16.	Unsung Heroines of Resistance : A Historical Study of the Personality and Work of Women Freedom Fighters of Bihar and Their Contemporary Relevance for Young Women	Vikash Kumar Roushan	90-100
17.	उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता पर आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के प्रभाव का अध्ययन	सुप्रीति चावला, डॉ. प्रीति श्रोवर	101-105
18.	To Study the Impact of Smart Phone Dependency on Social Adjustment of Adolescents	Varinder Kaur, Dr. Sangeeta Agarwal	106-110

19. Impact of Microplastics on Soil Microfauna — A Review	Dr. Bhavna Grover	111-116
20. छत्तीसगढ़ में जल संरक्षण में सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का अध्ययन	डॉ. जसवंत सिंह जांगडे	117-119
21. स्मृतिशास्त्रसमालोके गार्हस्थ्यश्रमे नारीणां भूमिका	ड.नटवरकयालः	120-124
22. कुमाऊँ के आर्थिक विकास में अल्पसंख्यक समुदाय का योगदान : विकास खण्ड भीमताल में स्वनियोजित अल्पसंख्यकों का अध्ययन	सुनील कुमार	125-131
23. कठोपनिषदः मतानुसारेण आत्मनः स्वरूपम्	SHRABANIMANNA, DR. AJAYKUMAR	132-135
24. हिंदी सिनेमा में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति	रुवेता कंडुलना	136-141
25. 'अग्निदाह' एवं 'चार बेटों वाली माँ' कहानियों में अभिव्यक्त वृद्ध-विमर्श	परमार निशाबेन	142-145
26. आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में गांधीवादी विचारों की प्रासंगिकता	डॉ. राजेश गुप्ता	146-158
27. A study on the Growth of E-commerce in India and its future prospects	Ms. Shahin Shaikh, DR. B.L. Patidar	159-169
28. लोक संस्कृति में इतिहास लेखन-एक दृष्टि	डॉ. ज्योति रानी जायसवाल	170-176
29. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध आयाम	जयप्रकाश रौशन, डॉ. विनोद कुमार शर्मा	177-183
30. प्रेमचंद युगीन समाज में नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार : साहित्यिक विश्लेषण	मनोज कुमार यादव, डॉ. विनोद कुमार शर्मा	184-190
31. वैश्वीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में हाशिये के समाज की पीड़ा : एक समालोचनात्मक अध्ययन	डॉ. नरेश कुमार	191-195
32. भगवद्गीता में नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों का अध्ययन	डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'	196-204
33. Artificial Intelligence in Homoeopathy : A New Era of Individualized Prescription	Prof. Dr. Vijay Kumar Pushkar <sup>1</sup> , Prof. Dr Ruchi Wadhwa (Biswas) <sup>2</sup> , Prof. Dr. Dileep kumar Sonkar <sup>3</sup> , Prof. Dr. Rinku Bishwas <sup>4</sup> , Dr. Mansi Srivastava <sup>5</sup>	205-210
34. Research in Library and Information Science : Historical Development and Current Trends	ANIL KANT SAHU	211+216
35. समकालीन कहानियों में भ्रमंडलोत्तर जीवन यथार्थ (कैलाश वानखेड़े, नीलाक्षी सिंह, कैलाश वनवासी की कहानियों के संदर्भ में)	अजय सिंह रावत, प्रो. संजीव कुमार दुबे	217-226

## सम्पादक की कलम से.....

“शब्दों की लौ से ज्ञान का दीप जले,  
हर पंक्ति में सृजन का संगीत ढले।”

प्रिय पाठकों,

नवसृजन और शोध की इस यात्रा में एक बार फिर गीना शोध संगम का नया अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। साहित्य, शोध और अभिव्यक्ति के इस मंच पर, हम हर बार नई सोच, नई धारा और नई दृष्टि को स्थान देने का प्रयास करते हैं। यह अंक भी उसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए, विचारों के गहरे सागर से निकले कुछ अनमोल मोतियों को संजोकर आपके सामने ला रहा है।

इस बार के अंक में हमने साहित्य और शोध की उन प्रवृत्तियों पर विशेष ध्यान दिया है, जो समाज के बौद्धिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को नई दिशा देती हैं। हमारे रचनाकारों ने अपने विचारों को शब्दों में ढालते हुए, जीवन के विभिन्न आयामों को उकेरा है। कविता, लेख, समीक्षाएँ और शोध आलेखों के माध्यम से, यह अंक एक सार्थक विमर्श को जन्म देगा।

“हर शब्द में एक आकाश छिपा होता है,  
हर विचार में उजाले की तलाश छिपी होती है।”

आज के समय में जब सूचनाओं की बाढ़ है, तब सही शोध और सारगर्भित साहित्य की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। एक ओर साहित्य समाज का दर्पण है, तो दूसरी ओर शोध वह मशाल है, जो हमें सटीक और तर्कसंगत निष्कर्ष तक पहुँचाती है। इसी दृष्टिकोण से हमारे लेखकगण अपनी मौलिक और शोधपरक रचनाएँ प्रस्तुत कर रहे हैं, जो निश्चित रूप से पाठकों के मन-मस्तिष्क को प्रबुद्ध करेंगी।

इस अंक में प्रस्तुत कविताएँ मानवीय संवेदनाओं को उजागर करती हैं, तो आलेख समाज के विविध पक्षों पर विचार प्रस्तुत करते हैं। आशा है कि यह अंक आपकी सोच को नई दिशा देगा और ज्ञान के प्रसार में एक छोटी-सी भूमिका निभाएगा।

“कलम की रोशनी से अंधेरे छँटते रहेंगे,  
हम विचारों से नई दुनिया गढ़ते रहेंगे।”

आपकी प्रतिक्रियाओं और सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

—संपादक,

गीना शोध संगम



# हिंदी साहित्य की विकास यात्रा और बदलती परिस्थितियां : आदिकाल से वर्तमान काल तक एक आलोचनात्मक अध्ययन

Siksha

Student, MAHARAJA AGARSAIN COLLEGE OF EDUCATION, DAROLI (HISAR)

## 1. सारांश :-

साहित्य का समाज से बहुत गहरा संबंध होता है। किसी समाज को यदि समझना हो तो उस समाज के साहित्य के माध्यम से आसानी से समझ सकते हैं क्योंकि साहित्य को समाज का प्रतिबिंब कहा गया है। इसी के मध्य यदि हम बदलती हुई परिस्थितियों का एक और बिंदु जोड़ दें तो यह संबंध त्रि-आयामी हो जाएगा। बदलती हुई परिस्थितियां साहित्य व समाज दोनों में बदलाव लाती है। हिंदी साहित्य पर यदि हम एक आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टि डालें तो हम पाएंगे कि कहीं ना कहीं इसके विकास और परिवर्तन में समाज और परिस्थितियों की बहुत बड़ी भूमिका रही है। हमारे भारतीय समाज में साहित्य का योगदान बहुत बड़ा है। साहित्य के माध्यम से समाज में बड़ा बदलाव संभव है। हिंदी साहित्य के शुरुआती काल आदिकाल से लेकर भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिक काल की ओर एक समग्र दृष्टि से यदि विश्लेषण करके देखें तो इन बदलावों को आसानी से समझा जा सकता है।

इस प्रकार यदि हम वर्तमान हिंदी साहित्य की बदलती हुई स्थितियों को समझना चाहते हैं तो इसके ऐतिहासिक बदलावों से लेकर समकालीन बदलावों की ओर एक समग्र दृष्टिकोण अपनाना होगा। अतः प्रस्तुत शोध का मूल उद्देश्य हिंदी साहित्य की विकास यात्रा को युगीन परिस्थितियों के माध्यम से समझते हुए वर्तमान समाज की परिस्थितियों से उसके अंतर्संबंधों का एक आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना है। साथ ही वर्तमान परिस्थितियों जैसे बाजारवाद, डिजिटल क्रांति, अस्मितामूलक विमर्श, वैश्वीकरण तथा बदलते नैतिक मूल्यों में साहित्य के योगदान का मूल्यांकन करना है।

## प्रमुख शब्द :-

हिंदी साहित्य, बदलती परिस्थितियां, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, आदिकाल, वर्तमान काल, आलोचनात्मक विश्लेषण, बाजारवाद, डिजिटल युग तथा अस्मितामूलक विमर्श।

## 2. प्रस्तावना :-

### 2.1 साहित्य और समाज का परस्परिक संबंध :-

साहित्य समाज के लिए दर्पण के साथ-साथ पथ प्रदर्शक का भी काम करता है। यह न केवल यह

दिखाता है कि समाज में क्या घटित हो रहा है बल्कि समाज को कैसा होना चाहिए, यह भी हमें समझाता है। रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो “संसार को समझना दर्शन का काम है, उसे बदलना राजनीति का और उसकी पुनर्चना साहित्य का दायित्व है।”<sup>1</sup> आदिकाल से वर्तमान काल तक का हिंदी साहित्य समाज के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया है। इसी प्रकार प्रेमचंद जी ने ‘साहित्य का उद्देश्य’ निबंध में कहा था कि “साहित्य राजनीति के आगे-आगे चलने वाली मशाल है।”<sup>2</sup> इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्य और समाज के संबंधों को लेकर आलोचकों तथा विचारकों के भाव वही हैं, बस कहने का तरीका सभी का अपना-अपना है। परिस्थितियों के अनुसार समाज की संवेदनाएं बदलती रहती हैं तथा साहित्य के माध्यम से समाज में परिवर्तन का काम करती हैं।

## 2.2 हिंदी साहित्य की युगीन परिस्थितियां (राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक) और ऐतिहासिक विकास :-

प्रत्येक युग की अलग-अलग परिस्थितियां होती हैं। हिंदी साहित्य भी इससे अछूता नहीं है। हिंदी साहित्य की अलग-अलग युग की परिस्थितियों ने इस पर गहरा प्रभाव डाला है। इन्हीं युगीन परिस्थितियों का प्रभाव साहित्य में साफ तौर पर देख सकते हैं। आदिकाल के रासो साहित्य में युद्धों का वर्णन है तो भक्तिकाल में ईश्वर की उपासना देखने को मिलती है, वहीं रीतिकाल में श्रृंगारिक भावना पर प्रबलता है तथा आधुनिक काल के गोदान में किसानों की दुर्दशा का वर्णन है। यह सब और कुछ नहीं बल्कि युगीन परिस्थितियों के अनुसार बदलते साहित्यिक विषयों के उदाहरण हैं। इससे हमें पता चलता है कि कैसे परिस्थितियों के अनुसार साहित्य खुद को बदलकर समाज में अपनी भूमिका अदा करता है।

रामचंद्र शुक्ल जी के अनुसार “प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है। तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति में परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।”<sup>3</sup> शुक्ल जी जनता की जिस चित्तवृत्ति का वर्णन कर रहे हैं, वह भी परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है तथा साहित्य परिवर्तन का कारण बनती है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य के ऐतिहासिक विकास में युग की परिस्थितियों का बड़ा योगदान रहा है।

## 2.3 वर्तमान में युग की परिस्थितियों में शोध की प्रासंगिकता :-

वर्तमान युग तेजी से बदल रहा है तथा साथ ही इस युग की परिस्थितियां भी तेजी से बदल रही हैं। हर परिस्थिति अपने साथ एक नई चुनौती लिए खड़ी है। ऐसे में साहित्य का उत्तरदायित्व भी बढ़ जाता है। आज हम उत्तर आधुनिकता के दौर में जी रहे हैं। आज का साहित्य पाठकों की रुचि के दबाव में लिखा जाता है। सोशल मीडिया ने वर्तमान समय में डिजिटल क्रांति ला दी है। पहले (आदिकाल, भक्तिकाल) जो साहित्य लिखा जाता था, वह सुना जाता था। फिर प्रिंट होने लगा (भारतेंदु युग) तथा अब वर्तमान समय में यह डिजिटल स्क्रीन पर आ गया है। पहले पाठकों को हजारों पंक्तियां याद रखनी पड़ती थी। लेकिन अब यह केवल कोट्स पर सीमित होने के कारण साहित्य के लिए बड़ी चुनौती बन गई है।

आज के बाजारवाद तथा वैश्वीकरण ने साहित्यिक ढांचे को पूरी तरह बदल दिया है। ऐसे में साहित्यकार की जिम्मेदारी पूरी तरह बदल गई है। वर्तमान साहित्य न केवल वर्तमान समस्याओं को उजागर करता है बल्कि उसके बदलाव की और भी एक प्रश्न चिन्ह खड़ा करता है। प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य वर्तमान चुनौतियों का

एक आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करके इन्हीं प्रश्नों का उत्तर तलाशने का प्रयास करना है कि कैसे इस डिजिटल युग में मनुष्य अपनी संवेदना की रक्षा करता है तथा साथ ही यह भी समझाने का प्रयास करेगा कि परिस्थितियां चाहे कितनी भी बदल जाए साहित्य का केंद्र हमेशा मनुष्य ही रहता है।

### 3. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :-

#### 3.1 आदिकाल और भक्ति काल : युद्ध से लेकर भक्ति भावना तक :-

आदिकाल में युद्ध की परिस्थितियों के कारण वीर काव्य की रचनाएं हुईं। जैसे— रासो काव्य के अंतर्गत पृथ्वीराज रासो। युद्धों के कारण समाज में अस्थिरता की स्थिति थी। वस्तुतः आदिकालीन साहित्य राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का ही परिणाम है। इस समय देश में विदेशी आक्रमण हो रहे थे तथा देशी राजाओं में आपसी एकता का अभाव था। इस समय कवियों ने राजाओं को खुश करने के लिए युद्ध में उनकी वीरता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है। प्रमाणिकता की यदि इस साहित्य में बात की जाए तो कुछ तो प्रमाणिक है, कुछ अप्रमाणिक तथा कुछ संदिग्ध है। जैसे— रासो साहित्य। इसके अलावा इस काल में सिद्ध साहित्य, जैन साहित्य, नाथ साहित्य तथा लौकिक साहित्य भी लिखा गया।

इस काल की तलवार की धार ने साहित्य को वीरता की ओर मोड़ा। भक्तिकाल को 'लोक जागरण काल' भी कहा जाता है। मुगलों के आक्रमण के जो बीज आदिकाल में बोने शुरू हुए थे, भक्ति काल में मुगल सत्ता के रूप में पनपने लगे थे। रामचंद्र शुक्ल बताते हैं कि विदेशी आक्रमणों के कारण हिंदुओं में कुंठा की भावना घर कर गई जिसने भक्ति भावना को जन्म दिया। उनके अनुसार "अपने पौरुष से हताश जाति के लिए भगवान की शक्ति और करुणा की ओर ध्यान ले जाने के अतिरिक्त दूसरा मार्ग ही क्या था?"<sup>4</sup>

भक्तिकाल को 'स्वर्ण युग' की संज्ञा दी गई है। इसी काल ने हमें कबीर, तुलसी, सूरदास और जायसी जैसे महान कवि दिए जिन्होंने भारतीय समाज में लोकमंगल तथा समन्वय की भावना को बढ़ावा दिया। आदिकाल में साहित्य का केंद्र राजा था जबकि भक्ति काल में निर्गुण तथा सगुण काव्य की प्रधानता थी। निर्गुण काव्य के अंतर्गत संत तथा सूफी काव्य आते हैं और सगुण काव्य में राम और कृष्ण को केंद्र में रखा गया है। भक्ति काव्य से पता चलता है कि कैसे सामाजिक संकट तथा आध्यात्मिक भूख से महान साहित्य की रचना हुई।

#### 3.2 उत्तर मध्यकाल से आधुनिकता की ओर : रीतिकाल और भारतेंदु युग :-

रीतिकालीन काव्य में हमें दरबारी विलासिता की आहट सुनाई देती है। इस काल में दरबारी संस्कृति को बढ़ावा मिला। इस युग तक आते-आते मुगलों का शासन स्थिर हो चुका था। जिसके परिणामस्वरूप युद्धों की विभीषिका कम हो गई तथा राजाओं और सामंतों का ध्यान विलास और कला की ओर चला गया। राजाओं का शौर्य केवल काव्यों में सिमट कर रह गया। इस काल के कवियों का प्रमुख उद्देश्य केवल राजाओं की प्रशंसा करना तथा उनका मनोरंजन करना था। उदाहरण के लिए बिहारी के रीति और श्रृंगार के दोहों को ले सकते हैं। इसके अतिरिक्त नायक-नायिका भेद का वर्णन देखने को भी मिल जाता है। शिवाजी तथा छत्रसाल की जैसी सच्ची वीरता का वर्णन इस काल के कवियों में बहुत कम देखने को मिलती है।

भारतेंदु युग को आधुनिक काल का प्रवेश द्वार कहा जाता है तथा साथ ही इसे 'पुनर्जागरण काल' की संज्ञा दी जाती है। इस युग में अंग्रेजों, प्रेस तथा पाश्चात्य शिक्षा ने पूरी तरह क्रांतिकारी स्थिति पैदा कर दी थी।

पहली बार साहित्य में ज्वलंत सामाजिक मुद्दों को स्थान मिला। भारतेंदु ने साहित्य को राष्ट्र प्रेम तथा जनसाधारण की समस्याओं तथा सामाजिक सुधार की तरफ मोड़ा। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से जनसाधारण में क्रांति की भावना को बल मिला। इस काल में साहित्य दरबार से निकलकर जनसाधारण तक पहुंचा। रीतिकाल का कवि जहां राजा की प्रशंसा ही करता था, वहां इस युग का कवि राष्ट्रीय भावना पर बल देने लगा। सामाजिक कुरीतियों जैसे सती प्रथा, बाल विवाह को खत्म करने के प्रयास किए गए तथा सामाजिक सुधार के कार्य जैसे स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह को बढ़ावा मिला।

इस काल में भारतीयों में राष्ट्रीय गौरव की भावना बढ़ी तथा राष्ट्रीय भाषा पर बल दिया गया। भारतेंदु जी ने तो स्पष्ट शब्दों में कहा है कि अपनी भाषा में ही राष्ट्र की उन्नति हो सकती है। भारतेंदु जी के 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' निबंध का वर्णन उल्लेखनीय है। इसके पश्चात बीसवीं शताब्दी के आरंभ में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य की दिशा को ही बदल दिया। इस युग के साहित्य में भाषा संस्कार और आदर्शवाद को बढ़ावा मिला। साहित्यिक विषयों को मनोरंजन से मोड़कर नैतिकता की ओर ले जाया गया। इस युग में काव्य की प्रमुख भाषा खड़ी बोली को बनाया गया। मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में 'केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए उसमें उचित उपदेश का मर्म होना चाहिए।'

#### 4. वर्तमान समय की बदलती हुई परिस्थितियां :-

##### 4.1 बाजारवाद :-

वर्तमान समय की परिस्थितियों में इसका प्रमुख स्थान है। आजकल साहित्य रचना को बाजारवाद ने मुख्य रूप से प्रभावित किया है। वर्तमान युग में साहित्यकारों पर पाठकों की रुचि अनुसार साहित्य रचना करने का दबाव बढ़ गया है। इस कारण साहित्य की गंभीरता कुछ हद तक कम हो गई है। लेकिन इसकी पहुंच जनसाधारण तक बढ़ गई है। बाजारवाद के कारण 'बेस्ट सेलर' की होड़ बढ़ गई है। अब साहित्य बिक्री के लिए लिखा जाने लगा है। प्रकाशक उसी साहित्य को बढ़ावा देते हैं जो ट्रेंड में हो या पाठकों की रुचि के अनुसार हो, चाहे उसका कोई सामाजिक मूल्य ही ना हो। इस कारण लेखन पर बाजार का दबाव बढ़ा है। दूसरा इसका एक सकारात्मक पहलू भी है यह लेखक को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाता है। उदाहरण के लिए गीतांजलि श्री की रचना 'रेत समाधि'। इस पर लेखिका को अंतरराष्ट्रीय बुकर पुरस्कार मिला है। इस प्रकार साहित्य को अंतरराष्ट्रीय मंच मिल गया है। बाजारवाद के कारण ही हमारी हिंदी भाषा को वैश्विक स्तर पर पहचान मिली है।

##### 4.2 डिजिटल क्रांति :-

आज इंटरनेट के कारण साहित्य को नई दिशा मिली है। इसके कारण साहित्य तक पाठकों की पहुंच बहुत सुलभ हो गई है। आजकल ब्लॉग्स, पॉडकास्ट और ई पुस्तकालयों (जैसे हिंदवी) के माध्यम से इसका स्तर वैश्विक हो गया है। आज का पाठक किताबों से नहीं बल्कि कंप्यूटर या लैपटॉप से पढ़ता है। अब लंबे-चौड़े साहित्य की बजाय पाठक संक्षेप में पढ़ना चाहता है। सोशल मीडिया ने हर एक व्यक्ति को अभिव्यक्ति के लिए मंच प्रदान किया है। इसके कारण जनसाधारण में अभिव्यक्ति को बढ़ावा मिला है। जहां इसके इतने फायदे हैं वही इसने बड़ी चुनौतियां भी उत्पन्न कर दी है। प्रसिद्धि की भूख ने साहित्य की गहराई तथा शुद्धता के लिए

नई चुनौती पैदा कर दी है।

#### 4.3 अस्मितामूलक विमर्श : स्त्री, दलित और आदिवासी चेतना :-

आज की प्रमुख समस्याओं में से एक 'पहचान' की समस्या है आजकल साहित्य में बहुत से मुद्दे समाहित हो गए हैं।

##### 4.3.1 स्त्री विमर्श :-

वर्तमान में लेखिकाएं (कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, मैत्रीय पुष्पा, अलका सरावगी, अनामिका) पुराने मूल्यों को तोड़कर नए दृष्टिकोण को बढ़ावा दे रही है। वह अपनी आवाज स्वयं रही है।

##### 4.3.2 दलित और आदिवासी चेतना :-

सोशल मीडिया के माध्यम से दलित तथा आदिवासी चेतना को बढ़ावा मिला है। वहीं 'मुसहर' जैसे सबसे पिछड़े और हाशिये समुदाय की हकीकत को साहित्य और दृश्य माध्यमों (डाक्यूमेंट्री) के जरिए सामने लाया गया है। इसमें कठोर यथार्थ को दिखाया गया है, जो दर्शकों को अंदर से झकझोर देता है। इससे पता चलता है कि अब दलित समाज अब लेखक की दया भावना का मोहताज नहीं बल्कि अनेक माध्यमों से वह अपने वास्तविक कष्ट को दिखा सकता है।

#### 5. आलोचनात्मक अध्ययन : संवेदना बनाम तकनीक :-

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान समाज और साहित्य अनेकानेक परिस्थितियों से जुड़ा हुआ है। जहां एक ओर सोशल मीडिया के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय पहचान मिल रही है, वहीं साहित्य की मौलिकता तथा गंभीरता खतरे में है। वर्तमान साहित्य के लिए हर एक सहजता अपने साथ एक नई चुनौती लेकर खड़ी है। आज के दौर में लाइक और शेयर की इस अंधी भूख ने कालजयी रचना की बजाय ट्रेडिंग विषयों पर अधिक ध्यान केंद्रित किया है। इसने साहित्य को तात्कालिक बना दिया है। वर्तमान तेजी के इस युग में गोदान जैसे बड़े महाकाव्यों या उपन्यास लिखने-पढ़ने का दौर खत्म हो रहा है। बाजारवाद ने हिंदी को वैश्विक स्तर पर पहचान तो दिलाई है। लेकिन संवेदनाओं को उपभोक्तावादी बना दिया है। सोशल मीडिया ने हर व्यक्ति को अभिव्यक्ति का मंच दिया है। बशर्ते वह इसका उपयोग अपनी पूरी ईमानदारी के साथ करे।

अतः वर्तमान परिस्थितियां मनुष्य के लिए वरदान और अभिशाप दोनों रूपों में सामने आई है। यह हम पर निर्भर है कि हम इसका उपयोग वरदान के रूप में करते हैं या अभिशाप के रूप में।

#### 6. निष्कर्ष :-

उपरोक्त आलोचनात्मक विश्लेषण से हम स्पष्टतः यह कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य की विकास यात्रा शून्य में न होकर बदलती हुई परिस्थितियों का परिणाम है। आदिकालीन तलवारों की गूंज, भक्तिकालीन भक्ति काव्य की गूंज, रीतिकालीन विलासिता तथा आधुनिक काल का राष्ट्रवादी आंदोलन इन सब ने साहित्य को विषय प्रदान किए।

आज का दौर उत्तर आधुनिकता का दौर है। यह अपनी सुविधाओं के साथ ही समस्याओं को लिए खड़ा है। जहां एक ओर यह हिंदी साहित्य को अंतर्राष्ट्रीय बुकर जैसे सम्मान के माध्यम से वैश्विक गौरव प्रदान करता है वहीं सोशल मीडिया के माध्यम से नग्नता को बढ़ावा देता है तथा नैतिक मूल्यों के ह्रास का कारण बनता है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि वर्तमान हिंदी साहित्य परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को चाहे कितना भी बदल ले लेकिन मानवीय मूल्यों से जुड़े रहने में ही इसकी सार्थकता है।

#### 7. संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चतुर्वेदी, रामस्वरूप (2004), हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन। (आमुख से)
2. प्रेमचंद, मुंशी (1967), साहित्य का उद्देश्य, लखनऊ, हंस प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 9
3. शुक्ल, रामचंद्र (2015), हिंदी साहित्य का इतिहास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन।
4. वहीं, भक्तिकाल प्रकरण 1 सामान्य परिचय विवेचन पृष्ठ संख्या 136-137



## वैश्वीकरण और हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श

देवेन्द्र कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर जूलॉजी,

एफ. जी. एम. राजकीय महाविद्यालय आदमपुर।

### सारांश :

वैश्वीकरण ने भारतीय समाज की संरचना को अत्यधिक गहराई से प्रभावित किया है, जिसके प्रभाव हिन्दी साहित्य में भी स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। विशेष रूप से दलित विमर्श को वैश्वीकरण के आधुनिक दौर में सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संदर्भ प्राप्त हुए हैं। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श का मूल उद्देश्य सामाजिक समानता, मानव गरिमा और न्याय की स्थापना को बनाए रखना है।

वैश्वीकरण के कारण संचार माध्यमों, शिक्षा और तकनीक का विस्तार हुआ, जिससे दलित लेखकों को अपनी अनुभूतियों और संघर्षों को व्यापक स्तर पर अभिव्यक्त एवम प्रस्तुत करने का अवसर मिला। दलित साहित्य ने जातिगत भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार और शोषण की संरचनाओं को उजागर करते हुए प्रतिरोध की चेतना को सशक्त किया रूप से प्रभावित किया है।

हालाँकि वैश्वीकरण ने अवसरों के नए द्वार खोले, लेकिन इसके साथ ही आर्थिक असमानता, श्रम शोषण और सांस्कृतिक वर्चस्व जैसी समस्याएँ भी उभरकर सामने आईं, जिनका प्रभाव दलित जीवन पर प्रतिकूल रूप से पड़ा। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श इन अंतर्विरोधों को रेखांकित करता है और समाज की आलोचनात्मक पुर्नव्याख्या प्रस्तुत करते हुए समाज को प्रगति के पथ पर अग्रसर करता है।

इस प्रकार वैश्वीकरण के संदर्भ में हिन्दी साहित्य का दलित विमर्श सामाजिक चेतना को जाग्रत करता है तथा एक समतामूलक और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की दिशा में अहम् भूमिका निभाता है।

### मुख्य शब्द :

वैश्वीकरण, हिन्दी साहित्य, दलित विमर्श, सामाजिक न्याय, अस्मिता, समानता।

### 1. भूमिका :

वैश्वीकरण ने बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और इक्कीसवीं शताब्दी के आरंभ में वैश्वीकरण ने विश्व-स्तर पर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संरचनाओं को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। भारत जैसे विकासशील देश में वैश्वीकरण ने जहाँ एक ओर आर्थिक उदारीकरण, तकनीकी विकास और सूचना क्रांति को गति दी, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानताओं, वर्गीय विभाजन और हाशिए पर खड़े समुदायों की समस्याओं को भी नए रूप में सामने रखा। हिन्दी साहित्य, जो समाज का दर्पण है, इन परिवर्तनों से अछूता नहीं रहा।

आज दलित विमर्श हिन्दी साहित्य की एक सशक्त वैचारिक धारा है, जो जाति-आधारित शोषण, सामाजिक अन्याय और मानवीय अपमान के विरुद्ध संघर्ष की चेतना को अभिव्यक्त करती है। वैश्वीकरण के दौर में दलित विमर्श को नए अवसर, नए माध्यम और नए संदर्भ प्राप्त हुए हैं, लेकिन साथ ही नई चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। इस शोध लेख का उद्देश्य वैश्वीकरण और हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श के अंतर्संबंधों को समग्र रूप से प्रस्तुत करना है।

## 2. वैश्वीकरण : अवधारणा और स्वरूप :-

वर्तमान में वैश्वीकरण का सामान्य अर्थ है, विश्व के विभिन्न देशों, समाजों और संस्कृतियों के बीच बढ़ता हुआ पारस्परिक संपर्क और निर्भरता। आर्थिक दृष्टि से यह मुक्त बाजार, निजीकरण और उदारीकरण की नीतियों से जुड़ा है, जबकि सांस्कृतिक दृष्टि से यह विचारों, मूल्यों और जीवन-शैलियों के वैश्विक प्रसार को इंगित करता करता हुआ नजर आता है। भारत में आर्थिक सुधार जुलाई 1991, में भारत के प्रधानमंत्री श्री पी वी नरसिम्हा सरकार द्वारा लागू किये गए, जिन्हें, (एल पी जी) उदारीकरण, निजीकरण वैश्वीकरण नीति कहा गया।

भारत में 1991 के बाद लागू आर्थिक सुधारों के परिणामस्वरूप लाइसेंसी राज को समाप्त किया, तीव्र आर्थिक वृद्धि, विदेशी निवेश में वृद्धि और प्रति व्यक्ति जीडीपी में सुधार हुआ इसके प्रभाव शिक्षा, श्रम, संस्कृति, मीडिया और साहित्य तक फैल गए। जहाँ एक ओर इसने अवसरों का विस्तार किया, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानताओं को भी और गहरा किया। दलित समाज, जो ऐतिहासिक रूप से वंचना और शोषण का शिकार रहा है, वैश्वीकरण के प्रभावों से विशेष रूप से प्रभावित हुआ।

## 3. दलित विमर्श : अर्थ और विकास :-

आधुनिक युग में दलित विमर्श का मूल आधार सामाजिक समानता, आत्मसम्मान और मानवाधिकारों की स्थापना है। दलित शब्द उन समुदायों का प्रतिनिधित्व करता है, जिन्हें पारंपरिक जाति-व्यवस्था में सदियों तक हाशिए पर रखा गया। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श का विकास मुख्यतः बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ, विशेषकर बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर की वैचारिक चेतना के प्रभाव ने इसके ऊपर गहरा प्रभाव डाला है।

वर्तमान युग में दलित साहित्य अनुभवजन्य साहित्य है, जिसमें आत्मकथा, कविता, कहानी और उपन्यास के माध्यम से दलित जीवन की यथार्थ परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। यह साहित्य न केवल पीड़ा का बयान करता है, बल्कि प्रतिरोध और परिवर्तन की चेतना का अग्रणी रूप से समाज के सामने रखता है।

## 4. वैश्वीकरण के संदर्भ में दलित विमर्श :

वैश्वीकरण ने दलित विमर्श को नए सामाजिक संदर्भ प्रदान किए हैं। शिक्षा, तकनीक और संचार माध्यमों के विस्तार से दलित लेखकों की आवाज अधिक व्यापक स्तर तक पहुँच सकी है। इंटरनेट, सोशल मीडिया और डिजिटल प्रकाशन ने दलित साहित्य को मुख्यधारा के विमर्श में स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

साथ ही वैश्वीकरण ने यह प्रश्न भी उठाया है कि क्या आर्थिक विकास वास्तव में सामाजिक समानता सुनिश्चित कर रहा है। दलित साहित्यकारों ने बाजारवाद, श्रम शोषण और नव-उपनिवेशवाद की प्रवृत्तियों की गहराई से आलोचना की है। इस प्रकार दलित विमर्श वैश्वीकरण की एकांगी विकास अवधारणा को चुनौती देता है।

## 5. हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श की अभिव्यक्ति :

आज हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श विभिन्न विधाओं में अभिव्यक्त हुआ है। इसका मुख्य कारण दलित

समाज में शिक्षा का बढ़ता हुआ स्तर है। दलित लेखकों ने आत्मकथाओं में व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यम से सामाजिक संरचना की आलोचना की गई है। कविताओं में आक्रोश, पीड़ा और आत्मसम्मान की भावना स्पष्ट दिखाई देती है। कहानियों और उपन्यासों में दलित जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और आकांक्षाओं का सजीव चित्रण मिलता है क्योंकि आज भी दलित समाज सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से इतना सशक्त नहीं हुआ है इसलिए विरोध के स्वर सुनाई पड़ते हैं।

वैश्वीकरण के दौर में यह साहित्य केवल गाँव या कस्बे तक सीमित नहीं रहा, बल्कि शहरी जीवन, औद्योगिक श्रम और प्रवासी अनुभवों को भी समेटने लगा है।

#### 6. बाजारवाद और दलित चेतना :

वर्तमान में वैश्वीकरण के साथ बाजारवाद का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा है। कुछ आलोचकों का मानना है कि बाजार ने साहित्य को उपभोग की वस्तु बना दिया है। दलित विमर्श इस प्रवृत्ति का प्रतिरोध करता है और साहित्य को सामाजिक परिवर्तन के माध्यम के रूप में प्रस्तुत करता है।

आज दलित साहित्यकारों ने यह प्रश्न उठाया है कि बाजार आधारित विकास मॉडल दलित समाज को वास्तविक लाभ पहुँचा पा रहा है या नहीं। इस संदर्भ में दलित विमर्श वैश्वीकरण की आलोचनात्मक समझ विकसित करता है।

#### 7. शिक्षा, मीडिया और तकनीक की भूमिका :

वैश्वीकरण के कारण शिक्षा और मीडिया के क्षेत्र में हुए परिवर्तनों ने दलित विमर्श को नई ऊर्जा दी है। उच्च शिक्षा में दलित वर्ग की बढ़ती भागीदारी और मीडिया में दलित मुद्दों की चर्चा ने साहित्य को भी प्रभावित किया है। डिजिटल मंचों ने दलित लेखकों को आत्मनिर्भर बनाया और प्रकाशन की पारंपरिक बाधाओं को कम किया। इस प्रकार तकनीक ने दलित विमर्श को लोकतांत्रिक विस्तार प्रदान किया है।

#### 8. चुनौतियाँ और अंतर्विरोध :

वर्तमान में यद्यपि वैश्वीकरण ने नये अवसर दिए हैं, परंतु दलित विमर्श के सामने कई चुनौतियाँ भी हैं। आर्थिक असमानता, सांस्कृतिक वर्चस्व और नव-ब्राह्मणवादी प्रवृत्तियाँ अभी भी मौजूद हैं। हम देखते हैं कि आज भी साहित्य में दलित विमर्श को मुख्यधारा द्वारा हाशिए पर रखा जाता है।

इन चुनौतियों के बावजूद दलित साहित्य अपनी वैचारिक दृढ़ता और सामाजिक प्रतिबद्धता के कारण निरंतर आगे बढ़ रहा है। इसका मुख्य रूप से प्रभाव बाबा साहेब डॉ भीमराव अंबेडकर द्वारा बताए गए शिक्षा के अहम योगदान के द्वारा सफल हो पाया है।

#### 9. निष्कर्ष :

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आधुनिक वैश्वीकरण और हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श का संबंध बहुआयामी है। वैश्वीकरण ने जहाँ दलित विमर्श को नए मंच और नए पाठक दिए हैं, वहीं उसने नई समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श इन दोनों पहलुओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है और सामाजिक न्याय, समानता तथा मानवीय गरिमा की स्थापना के लिए निरंतर संघर्षरत करता हुआ नजर आता है।

यह विमर्श न केवल साहित्यिक आंदोलन है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की चेतना को आगे बढ़ाता है, जो वैश्वीकरण के युग में भी अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है।

### संदर्भ सूची :

1. आंबेडकर, बी. आर. एनिहिलेशन ऑफ कास्ट (जाति का उच्छेद). वर्सो, 2014.
2. वाल्मीकि, ओमप्रकाश. जूठन. राधाकृष्ण प्रकाशन, 1997.
3. कुमार, राज. दलित लिटरेचर एंड क्रिटिसिज्म (दलित साहित्य और आलोचना). ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2010.
4. गुरु, गोपाल. द क्रैकड मिरर (चटका हुआ दर्पण). ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2011.
5. लिंबाले, शरणकुमार. टुवर्ड्स एन एस्थेटिक ऑफ दलित लिटरेचर (दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र). ओयूपी (OUP), 2004.
6. नायर, प्रमोद के. लिटरेरी थ्योरी टुडे (साहित्यिक सिद्धांत आज). एशिया बुक क्लब, 2017.

ईमेल devenderkumari14@gmail.com



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 18-24

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप

सुचित्रा

विद्यार्थी, राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

### भूमिका :

वैश्वीकरण आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसने संपूर्ण विश्व को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी स्तर पर एक-दूसरे के निकट ला दिया है। आज विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाएँ, समाज और संस्कृतियाँ परस्पर जुड़ चुकी हैं। इस प्रक्रिया का प्रभाव केवल व्यापार या अर्थव्यवस्था तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका व्यापक प्रभाव साहित्य, भाषा और संस्कृति पर भी पड़ा है। हिंदी साहित्य भी इससे अछूता नहीं रहा है। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप हिंदी साहित्य के विषय, भाषा, शैली और दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

### वैश्वीकरण का अर्थ :

वैश्वीकरण का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसके अंतर्गत दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाएँ, समाज और संस्कृतियाँ आपस में जुड़ती हैं। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विभिन्न देशों के बीच वस्तुओं, सूचनाओं, पूंजी, व्यापार, तकनीक और विचारों का अंतरराष्ट्रीय सीमाओं के पार मुक्त प्रवाह होता है। वैश्वीकरण ने देशों के बीच आपसी संबंधों को बदल दिया है और पूरी दुनिया को एक-दूसरे के अत्यंत निकट ला दिया है।

### हिंदी साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव :

वैश्वीकरण के प्रभाव से हिंदी साहित्य का स्वरूप भी बदला है। समकालीन हिंदी साहित्य अब केवल स्थानीय या राष्ट्रीय समस्याओं तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसमें वैश्विक विषयों का समावेश होने लगा है। प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक जड़ों को बनाए रखते हुए वैश्विक अनुभवों को अभिव्यक्त किया है।

प्रभा खेतान जैसी लेखिकाओं ने वैश्वीकरण के प्रभाव से उत्पन्न सामाजिक परिवर्तनों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया। उनकी कृतियों में शहरी एवं ग्रामीण जीवन के बदलते स्वरूप, स्त्री चेतना और आधुनिक जीवन की जटिलताओं का सजीव चित्रण मिलता है। प्रवासी साहित्य ने हिंदी साहित्य को एक व्यापक दृष्टि प्रदान की है और इसे अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहचान दिलाई है।

### वैश्वीकरण के सांस्कृतिक और तकनीकी पहलू :

#### सांस्कृतिक आदान-प्रदान :

वैश्वीकरण के कारण विभिन्न संस्कृतियों के बीच आदान-प्रदान संभव हुआ है। हिंदी साहित्य ने भारतीय

संस्कृति की मूल भावना, जैसे 'वसुधैव कुटुम्बकम्', को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

### **सांस्कृतिक वैश्वीकरण :**

इसके अंतर्गत विश्व की विभिन्न संस्कृतियों का आपसी आदान-प्रदान होता है। उदाहरणस्वरूप, हॉलीवुड फिल्मों, फैशन और जीवनशैली का प्रभाव भारतीय समाज पर पड़ा है, वहीं भारतीय साहित्य और संस्कृति ने भी विश्व स्तर पर अपनी पहचान बनाई है।

### **तकनीकी वैश्वीकरण :**

तकनीकी वैश्वीकरण के अंतर्गत इंटरनेट, सोशल मीडिया, स्मार्टफोन और विभिन्न डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे गूगल, यूट्यूब और इंस्टाग्राम शामिल हैं। इन माध्यमों ने लोगों को आपस में जोड़ने का कार्य किया है और सूचनाओं एवं विचारों के आदान-प्रदान को सरल बनाया है। इसके परिणामस्वरूप हिंदी साहित्य की पहुँच भी वैश्विक स्तर तक बढ़ी है।

### **बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ :**

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वे होती हैं जिनका मुख्यालय एक देश में होता है, जबकि उनका उत्पादन और व्यापार कई देशों में फैला होता है। माइक्रोसॉफ्ट और टाटा जैसी कंपनियाँ वैश्वीकरण का प्रमुख उदाहरण हैं।

### **वैश्वीकरण के सकारात्मक और नकारात्मक पहलू :**

#### **सकारात्मक पहलू :**

वैश्वीकरण ने लोगों को तीव्र गति से एक-दूसरे से जोड़ा है। इसके माध्यम से विभिन्न उत्पादों और संस्कृतियों की जानकारी प्राप्त होती है। इसके साथ-साथ रोजगार के नए अवसर भी उत्पन्न हुए हैं और सांस्कृतिक संवाद को बढ़ावा मिला है।

#### **नकारात्मक पहलू :**

वैश्वीकरण के कारण नौकरियों पर दबाव बढ़ा है और प्रतिस्पर्धा तीव्र हुई है। इसके अतिरिक्त, वस्तुओं के अंतरराष्ट्रीय आदान-प्रदान से बीमारियों के फैलने की संभावना भी बढ़ी है। आज अधिकांश कार्य ऑनलाइन होने लगे हैं, जिससे सामाजिक जीवन में भी बदलाव आया है।

### **वैश्वीकरण का उद्देश्य :**

वैश्वीकरण का प्रमुख उद्देश्य भौगोलिक सीमाओं, राजनीतिक बाधाओं और आर्थिक अवरोधों को दूर करना है, ताकि विश्व के देश आपस में सहयोग कर सकें और विकास की प्रक्रिया को गति दे सकें।

### **हिंदी साहित्य का स्वरूप :**

हिंदी साहित्य से तात्पर्य हिंदी भाषा में रचित उन सभी साहित्यिक रचनाओं से है, चाहे वे लिखित हों या मौखिक। इसमें कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि विधाएँ सम्मिलित हैं। हिंदी साहित्य में मानवीय विचारों, भावनाओं और अनुभवों की अभिव्यक्ति होती है, जो समाज को दिशा प्रदान करती है।

### **हिंदी साहित्य का ऐतिहासिक विकास :**

हिंदी साहित्य का विकास अपभ्रंश भाषा से हुआ है। इसके ऐतिहासिक विकास को विभिन्न कालों में विभाजित किया गया है।

## काल विभाजन (आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार) :

आदिकाल (1050—1375 संवत्) आदिकाल को अलग—अलग विद्वानों ने अलग—अलग नाम दिए हैं जैसे हजारी प्रसाद द्विवेदी आदिकाल कहते हैं इसी नाम को सर्वमान्य माना जाता है। रामचंद्र शुक्ल ने वीरगाथा काल कहा है क्योंकि इस समय की रचनाओं में जो प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं उसी के आधार पर इसका नाम रखा। इस समय अवधि में रासो काव्य की रचना की गई जिसमें युद्ध का सजीव वर्णन मिलता है प्रकृति वर्णन, कल्पना शक्ति का प्रयोग नख शिख का वर्णन इस समय की रचनाओं में किया गया है सिद्ध साहित्य की रचना भी इसी समय हुई।

इस काल में सिद्ध कवि हुए जिनकी संख्या 84 बताई जाती हैं सरहप्पा को पहला सिद्ध कवि माना और इन्हें सहजयान का प्रवर्तक कहा जाता है।

नाथ कवि का समय भी यही है इनकी संख्या 9 बताई जाती है इनका सिद्धांत था — 'जोई—जोई पिंडे सोई ब्रह्मांडे' अर्थात् जो शरीर में है, वही ब्रह्मांड में है। संध्या भाषा या उल्टाबाँसी कि शैली का प्रयोग भी इन्होंने भी किया है।

जैन कवि आचार्य हेमचंद्र जिनका समय बारवी शताब्दी माना जाता है। स्वयंभू आठवीं सती के कवि थे जिनकी रचना पउम चरिउ है। इनको ही जैन काव्य परंपरा में प्रमुख स्थान दिया गया है। जैन ने आत्मा अनुभूति पर बल दिया। बहिया आडंबरों का खंडन किया प्रेम के विविध रूपों का वर्णन किया विरह वर्णन में इन्होंने सफलता प्राप्त की थी।

विद्यापति अमीर खुसरो जैसे अन्य कवि भी इसी काल में हुए थे। विद्यापति ने मैथिली भाषा में पदावली की रचना की जिसे श्रीगारी काव्य भी कहा जाता है इसी के आधार पर इनको श्रृंगारी कवि भी कहा गया। अमीर खुसरो ने मुकरियां, पहेलियां, गीत लिखें।

**एक थाल मोती से भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।**

**चारों ओर वह थाल फिरे, मोती उससे एक न गिरे।**

## भक्तिकाल (निर्गुण एवं सगुण, 1375—1700 संवत्)

भक्ति के बारे में विद्वानों ने अलग—अलग परिभाषाएं दी हैं श्रीमद् भागवत गीता में स्वीकार किया गया है कि मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ धर्म भक्ति है। बिना किसी कारण के भगवान से प्रेम करना आत्म समर्पण करना ही भक्ति है। भारत में भक्ति आंदोलन अत्यधिक प्राचीन है और कहा जाता है कि —

**भक्ति द्रविड़ उपजि लाए रामानन्द,**

**प्रकट करि कबीर ने सात द्वीप नौ खण्ड।**

भक्ति काल में विभिन्न संप्रदाय हुए हैं। जैसे— श्री संप्रदाय इस संप्रदाय के आचार्य रामानुजाचार्य थे। ब्रह्म संप्रदाय इसके प्रवर्तक माध्वाचार्य थे। रुद्र संप्रदाय, सनकादि संप्रदाय। इसी काल में निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार के कवि हुए हैं। निर्गुण काव्य को ज्ञानश्रयी शाखा भी कहा जाता है। कबीर, रविदास, गुरु नानक दादू दयाल, रज्जब आदि कवि थे। कबीर की वाणी का संग्रह है शबीजकश् कहलाता है इसके तीन भाग हैं—रमैनी, शब्द और सखी। कबीर विशाल गतिशील बिंब प्रस्तुत करते हुए आकाश और धरती को चक्की के दो पाट बताते हैं।

**चलती चाकी देखकर, दिया कबीरा रोए।**

**दो पाटन के बीच में सबूत बचा न कोय।।**

कबीर कहते हैं कि सब जगह ब्रह्म की उपस्थिति है।

**लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल।**

**लाली देखन मैं गई मैं भी हो गई लाल।।**

इस प्रकार कबीर की भाषा भी ससाधुकड़ी या खिचड़ी भाषा भी कहते हैं। एक बार पढ़ने से उनकी भाषा आसानी से समझ आ जाती है और रविदास की भाषा भी कुछ इसी प्रकार है :-

**जाति ओछा पाति ओछा, ओछा जनमु हमारा।**

**राजा राम की सेवा न कीन्ही, कहि रविदास चमारा।।**

रैदास ने भी अपनी भाषा में उपमा अनुप्रास रूपक अलंकारों का खुलकर प्रयोग किया है। संत कवियों का साहित्य भाव और भाषा दोनों की दृष्टि से उच्च कोटि का है।

सगुण काव्य धारा में तुलसीदास, सूरदास, नाभादास जैसे कवि हुए हैं। सूरदास जैसे कई को जन्म से अंधा कहा जाता है कुछ विद्वान इसके पक्ष में हैं और कुछ विद्वान कहते हैं कि यह बाद में अंधे हुए हैं इन्होंने श्रीकृष्ण के बाल लीला का कितना मनोहर वर्णन किया है इनके रचना को पढ़कर कोई कह ही नहीं सकता कि ये जन्म से अंधे थे।

**रीतिकाल (1700-1900 संवत्) :**

रीति शब्द का अर्थ है- मार्ग। हिंदी साहित्य के इतिहास में रीति शब्द का प्रयोग रस, अलंकार, छंद, ध्वनि, शब्द आदि काव्यंग्यों के लिए किया गया है। काव्यशास्त्र के आचार्य वामन ने रीति को काव्य की आत्मा भी कहा है। इस समय जो रचना की जाती थी वह ब्रज भाषा में की जाती थी इस समय के कवियों को दरबारी कवि कहा जाता था क्योंकि यह राजाओं के आश्रय में रहकर श्रृंगारी काव्य की रचना करते थे अपने आश्रय दाताओं का वर्णन करते थे इस कारण इसे श्रृंगार काल भी कहा जाता है।

रीतिकाल को तीन धाराओं में बांटा गया है- रीतिबद्ध धारा-रीतिबद्ध कवि वे कवि थे जिन्होंने लक्षण ग्रंथों को आधार बनाकर रचनाएं की प्रमुख कवि आचार्य केशवदास जिनकी रचना कवि प्रिया, रसिकप्रिया, विज्ञानगीता है। चिंतामणि को रीतिकाल का प्रवर्तक माना जाता है उनकी रचना कवि कुलकल्पतरु, श्रृंगार मंजरी आदि है। मातीराम की रचना ललित ललाम है, भूषण इस समय के दरबारी कवि हुए हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं में ऐतिहासिकता का समावेश किया है इन्होंने युद्ध का सजीव वर्णन किया है। शिवराज भूषण, शिवा बावनी इनकी रचनाएं हैं। शिवराज भूषण में इन्होंने शिवाजी के चरित्र का उल्लेख किया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में राजा का बड़ा चढ़कर वर्णन किया है ताकि राजा इसे प्रश्न हो और धन संपदा दें क्योंकि इस समय के कवियों का निर्वाह राजाओं के ऊपर निर्भर करता था जब राजा उनकी रचनाओं से प्रसन्न हो जाते थे तो इनको इनाम देते थे और यही उनकी आजीविका का साधन था।

**रीतिसिद्ध धारा** - बिहार रीति सिद्ध काव्य धारा के प्रमुख कवि माने जाते हैं बिहारी सतसई उनकी रचना है इन्होंने अपनी रचना में वियोग श्रृंगार, संयोग श्रृंगार, प्रकृति वर्णन किया है।

**रीतिमुक्त धारा** - रीतिमुक्त काव्य धारा में वे कभी आते हैं जिन्होंने रीतिबद्ध से हटकर लक्षण x की जो परिपाटी चल रही थी उनसे अलग स्वतंत्र रचनाओं की इन्होंने अपनी रचनाओं में अपना निजी जीवन का वर्णन

भी किया प्रकृति का खुलकर वर्णन किया प्रेमी से बिछड़ने पर जो विराह होता है और संयोग के पलो का खुलकर वर्णन किया है। इन्होंने स्वतंत्र होकर रचनाएं की है उनकी रचनाओं में गृहस्थ जीवन का सुंदर वर्णन मिलता है गांव के रीति-रिवाज का त्योहारों का होली, दिवाली, दशहरा आदि। परिवार और वैवाहिक परंपराओं का शगुन-अपशगुन, व्रत, त्यौहार जनजीवन का सचिव वर्णन मिलता है। इसलिए इन्हें रीतिमुक्त काव्यधारा के कवि कहा गया जैसे कि हम घनानंद की रचनाओं में देख सकते हैं। इन्होंने अपनी प्रेमिका सुजान का वर्णन अपनी रचना में किया। विराग होने पर वे वृंदावन चले गए और मरते समय अपने खून से एक कविता भी लिखा जो की सृजन के लिए था जो किस प्रकार है :-

इन्होंने अपने रक्त से यह कवित्त लिखा-

बहुत दिनान की अवधि आस पास परे,  
खरे अरबरनि परे हैं उठ जान को।  
कहि-कहि आवन छबीले मनभावन को,  
गहि गहि राखत ही दै दै सनमान को॥  
झूठि बतियानि की पत्यानि तें उदास हवै कै,  
अब ना घिरत घन आनंद निदान को।  
अधर लगे हैं आनि करि कै पयान प्रान,  
चाहत चलन ये संदेसो लै सुजान को।

- सुजान सागर, सुजान संबोधन, विरह लीला, कोकसार घनानंद की रचनाएं हैं।
- बोधा, आलम, ठाकुर रीतिमुक्त काव्य धारा के कवि हुए हैं।
- आधुनिक काल (1900 ई. से वर्तमान तक), जिसे भारतेंदु युग के नाम से भी जाना जाता है।

#### भाषा का विकास :

लौकिक संस्कृत, वैदिक संस्कृत, पाली, प्राकृत और अपभ्रंश से हिंदी भाषा का विकास हुआ। इसके पश्चात खड़ी बोली, ब्रजभाषा आदि में साहित्य रचना की गई। समय के साथ भाषाओं का स्वरूप बदलता गया और आधुनिक काल में खड़ी बोली का प्रचलन बढ़ा। भारतेंदु हरिश्चंद्र को आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक माना जाता है।

#### आधुनिक काल की प्रवृत्तियाँ :

आधुनिक काल की प्रमुख प्रवृत्तियों में राष्ट्रीयता, सामाजिक सुधार, देशभक्ति और नवजागरण शामिल हैं। रीतिकाल की श्रृंगारिक परंपरा से हटकर गद्य शैली को अपनाया गया और विषय-वस्तु में भी व्यापक परिवर्तन आए।

#### हिंदी साहित्य का बदलता स्वरूप :

- हिंदी साहित्य का स्वरूप आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक निरंतर बदलता रहा है।
- भाषा के स्तर पर ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली का प्रयोग बढ़ा।
- विषय-वस्तु में धार्मिकता और सामाजिकता से आगे बढ़कर दलित विमर्श और यथार्थ बोध को स्थान मिला।
- काव्य की अपेक्षा गद्य विधाओं का महत्व बढ़ा।

#### आधुनिक युग के विभिन्न चरण :

## भारतेंदु युग :

इसे हिंदी पत्रकारिता का विकास काल माना जाता है। इस युग में कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन और हिंदी प्रदीप जैसी पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। राष्ट्रीय चेतना भारतेंदु की रचनाओं में देखी जा सकती है—

**“अंग्रेज राज सुख साज सबे सब भारी।**

**पै, धन विदेश चली जात इहै अति ख्वारी।।**

यह पंक्ति भारतेंदु के नाटक भारत दुर्दशा से ली गई है और इसमें हम साफ स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि किस तरह भारतेंदु जनता के अंदर राष्ट्रीय चेतना जागना चाहते हैं।

## द्विवेदी युग :

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती पत्रिका के माध्यम से खड़ी बोली हिंदी को परिष्कृत किया और नई साहित्यिक चेतना विकसित की।

इस समय के कवियों में अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, श्रीधर पाठक, मैथिली शरणगुप्त, राम नरेश त्रिपाठी आदि को देख सकते हैं हिंदी खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य अयोध्या सिंह उपाध्याय का प्रिय प्रवास माना जाता है जिनकी कुछ पंक्तियां—

**दिवस का अवसान समीप था। गगन था कुछ लोहित हो चला।।**

**तरुशिखा पर थी अब राजती। कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा।।**

इस समय की साहित्यिक विशेषताओं में सामाजिक जागरण इतिवृत्तमकता जिसका अर्थ है किसी चीज को बढ़ा चढ़ा कर बताना प्रकृति का वर्णन हास्य और व्यंग्य का प्रयोग भाषा के संदर्भ में गद्य और पद्य दोनों में खड़ी बोली का प्रयोग होने लगा था।

मैथिली शरण ने तत्काल में भारतीय नारी की दुर्दशा का भी यथार्थ वर्णन किया है वे नारी को उचित स्थान दिलवाना चाहते थे यशोधरा में कवि ने नारी के हृदय की पीड़ा को व्यक्त किया है इन्हें राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक काव्यधारा के प्रमुख कवि भी है।

जैसे कि हम देखते हैं एक जगह भी कहते हैं—

**सखि वे मुझ से कह कर जाते, कह, तो क्या मुझको वे अपनी पथ-बाधा ही पाते?**

**मुझको बहुत उन्होंने माना, फिर भी क्या पूरा पहचाना?**

सुभद्रा कुमारी चौहान जिन्होंने ‘झांसी की रानी’ जैसी प्रसिद्ध कविता लिखकर लोकप्रियता हासिल की झांसी की रानी ओजस्वी भाषा का एक उदाहरण जैसे :-

**बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी।**

**गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी।**

दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी। चमक उठी सन् सत्तावन की वह तलवार पुरानी थी। बुन्देले हरबोलो के मुँह हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

ऐसी कविताओं को पढ़कर व्यक्ति के मन में एक जोश आ जाता है खून खौल उठता है देश के प्रति प्रेम की भावना जाग उठती है।

रामधारी सिंह दिनकर जी ने पद्म भूषण की उपाधि भी दी गई और उर्वशी रचना के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार भी मिला एक महान साहित्यकार थे जिनकी रचना रेणुका, हुंकार, कुरुक्षेत्र, उर्वशी आदि है। माखनलाल चतुर्वेदी भी इस समय के एक साहित्यकार थे जिन्हें एक भारतीय आत्मा के नाम से भी जाना जाता है।

### **छायावादी युग :**

इसे आधुनिक हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा इसके चार प्रमुख स्तंभ हैं। महादेवी वर्मा ने अपनी रचनाओं में प्रेमा अनुभूति वेदना का वर्णन, रहस्य अनुभूति स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। महावीर प्रसाद के नाटकों में हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि किस प्रकार देश के प्रति प्रेम भावना को उन्होंने अनेक रूपों में व्यक्त किया है उनका नाटक चंद्रगुप्त जिसमें एक गीत है जो की प्रसाद जी ने करने लिया के द्वारा गवाया है जब वह भारत आती है और उसे भारत देश से लगाव हो जाता है जो किस प्रकार है—

**अरुण यह मधुमय देश हमारा,  
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।  
सरस तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरु शिखा मनोहर,  
छिटका जीवन हरियाली पर मंगल कुमकुम सारा।।**

प्रसाद जी ने अपनी रचनाओं में नारी को अबला नहीं माना है उन्होंने उसे एक सशक्त नारी के रूप में दिखाया है जो कि हम ध्रुवस्वामिनी जैसे नाटक में देख सकते हैं। उन्होंने उसमें ध्रुवस्वामिनी का चरित्र अत्यंत उच्च कोटि का दिखाया है। जो कि अपने स्वाभिमान को ठेस पहुंचाने से पहले खुद मरना पसंद करती है लेकिन किसी के आगे झुकना नहीं।

### **प्रगतिवादी, प्रयोगवादी एवं नई कविता :**

इन युगों में वर्ग चेतना, क्रांति, नए प्रयोग और आधुनिक जीवन की जटिलताओं को साहित्य में स्थान मिला। अज्ञेय को प्रयोगवाद का प्रवर्तक माना जाता है।

### **समकालीन हिंदी साहित्य :**

समकालीन हिंदी साहित्य में राजनीति, नारी विमर्श, दलित विमर्श, व्यक्ति स्वतंत्रता, यथार्थ बोध, स्त्री-पुरुष संबंध, अवसाद, अलगाव और कुंठा जैसे विषय प्रमुखता से उभरे हैं। साहित्य का उद्देश्य दबे हुए मुद्दों को सामने लाना और समाज में चेतना जागृत करना रहा है।

### **निष्कर्ष :**

इस प्रकार स्पष्ट है कि वैश्वीकरण के प्रभाव से हिंदी साहित्य का स्वरूप निरंतर बदल रहा है। विषय-वस्तु, भाषा और शैली में नए प्रयोग हो रहे हैं। साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि मनुष्य का निर्माण करना, उसे बेहतर बनाना, चेतना जगाना और यथार्थ से साक्षात्कार कराना है।

### **संदर्भ ग्रंथ सूची :**

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 45
2. डॉ. नागेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 120
3. विश्वनाथ त्रिपाठी-हिंदी साहित्य का सरल इतिहास, पृष्ठ संख्या 65 और 66।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 25-29

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# बदलते भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श का उत्कर्ष संवेदना से विमर्श तक

पुष्पा

शोधार्थी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

## सारांश :

बदलते भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श का उभार भूमंडलीकरण, नगरीकरण, औद्योगीकरण और एकल परिवार व्यवस्था के विस्तार के साथ सामाजिक-सांस्कृतिक यथार्थ की अनिवार्य अभिव्यक्ति बनकर सामने आया है। यह विमर्श साहित्यिक संवेदना तक सीमित न रहकर समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास और संस्कृति जैसे अंतःविषयक क्षेत्रों से जुड़ते हुए एक सशक्त वैचारिक विमर्श के रूप में विकसित हुआ है। जनसांख्यिकीय बदलावों के कारण वृद्धों की उपेक्षा, एकाकीपन, असुरक्षा और पीढ़ीगत अंतराल जैसे प्रश्न साहित्य के केंद्र में आए हैं, जिससे 'संवेदना से विमर्श' की यात्रा स्पष्ट होती है। पाश्चात्य समाज में वृद्धों की स्थिति और 'एजिज्म की अवधारणा' ने इस विमर्श को सैद्धांतिक आधार दिया, जिसे सिमोन द बोउवार, मार्गरेट गुलेट आदि ने और विस्तार दिया। हिंदी साहित्य में वृद्धावस्था को वैदिक-भक्तिकालीन आध्यात्मिक दृष्टि से हटकर आधुनिक यथार्थवादी चेतना में प्रस्तुत किया गया। भारतेंदु युग और विशेषतः प्रेमचंद की शबूढी काकीश से वृद्ध जीवन की उपेक्षा और करुणा साहित्यिक संवेदना का हिस्सा बनी।

आधुनिक एवं समकालीन हिंदी साहित्य में निर्मल वर्मा, हृदयेश, मृणाल पांडे, भीष्म साहनी, सूर्यबाला, ममता कालिया और काशीनाथ सिंह जैसे रचनाकारों ने वृद्ध जीवन की त्रासदी, संबंधों की स्वार्थपरकता, प्रवास, संपत्ति-विभाजन, पितृसत्तात्मक दबाव और भावनात्मक उपेक्षा को मार्मिक ढंग से उजागर किया है। यहां वृद्ध पिता-माता 'अनुपयोगी वस्तु' की तरह देखे जाते हैं, जिससे शकिंग लियर सिंड्रोम की स्थिति उभरती है।

समकालीन दौर में दलित विमर्श और प्रवासी साहित्य के साथ वृद्ध विमर्श का संयोग वृद्धावस्था की दोहरी पीड़ा-आयुजनित और सामाजिक जातिगत को सामने लाता है। कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा और प्रभा खेतान की रचनाएँ वृद्धावस्था को आत्मसंवाद, आत्म पहचान और संभावित समाधान के नए आयाम देती हैं। इस प्रकार वृद्ध विमर्श हिंदी साहित्य को अधिक मानवीय, संवेदनशील और यथार्थपरक बनाते हुए उपेक्षित वृद्ध अनुभव को मुख्यधारा में प्रतिष्ठित करता है।

## बीज शब्द :

वृद्ध विमर्श, एजिज्म, भूमंडलीकरण, नगरीकरण, एकल परिवार, पीढ़ीगत अंतराल, एकाकीपन, उपेक्षा, किंग

लियर सिंड्रोम, समकालीन हिंदी साहित्य।

### **बदलते भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श का उत्कर्ष : संवेदना से विमर्श तक :**

बदलते साहित्यिक परिप्रेक्ष्य एवं भूमंडलीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में कई विमर्शों ने जन्म लिया जिनमें पर्यावरण विमर्श, वृद्ध विमर्श, थर्ड जेंडर आदि ने भी अपनी आवाज सशक्त रूप में हाशिये से हटकर मुख पृष्ठ पर दर्ज करवाई है व साहित्यिक धरातल का विस्तार किया है। हिंदी साहित्य में बाल विमर्श की तरह ही वृद्ध विमर्श विस्तृत साहित्यिक फलक को निरूपित कर साहित्यिक संवेदना को साहित्य से इतर मनोविज्ञान, समाजशास्त्र व सांस्कृतिक, ऐतिहासिक अंतःविषयक संदर्भों को भी साथ समेट लेता है।

जनसांख्यिकीय बदलाव, बढ़ते नगरीकरण व एकल परिवार के विकास के साथ ही भारतीय समाज में वृद्धों संबंधी मुद्दों का भी उत्थान हुआ व साहित्य में भी इससे जुड़े परिदृश्य में तेजी से परिवर्तन हुआ तथा यह संवेदना से विमर्श तक विस्तारित होकर संपूर्णता से सामाजिक, सांस्कृतिक विकृतियों का पर्दाफाश करते हुए 'किंगलीयर सिंड्रोम' की स्पष्टता से अभिव्यक्ति करने में समर्थ हुआ व पाठकों में भी नई संवेदना को विकसित करने में मदद की।

क्योंकि नगरीकरण, औद्योगिकीकरण के दुष्प्रभाव सर्वप्रथम ब्रिटेन व पाश्चात्य जगत में देखने को मिले व वहां वृद्धों को 'घर में अकेला व बेकार' का बोध देखने को मिला अतः वृद्ध विमर्श के आरंभिक बीज भी हम उसी परिवेश में पाते हैं। हालांकि इसकी सैद्धांतिकी व 'एजिज्म' की अवधारणा 1969 में रॉबर्ट बटलर द्वारा प्रस्तुत की गई जो बढ़ते आयु के लोगों के मानसिक तनाव व उनकी उपेक्षा का वर्णन करता है। बाद में मार्गरेट गुलेट, सिमोन द बोउवार आदि लेखकों ने भी वृद्धावस्था विमर्श के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण किया। वृद्धावस्था की तय आयु में विद्वानों में एकमत नहीं है। जहां 60 वर्ष की आयु को विश्व स्वास्थ्य संगठन – अपनी सीमा मानता है वहीं इसके परिवेशगत पहलू भी प्रभाव डालते हैं – जैसे ग्रामीण-शहरी अंतर व लैंगिक अंतर। 'द कमिंग ऑफ ऐज' पुस्तक में सिमोन द बोउवार लिखती है- 'स्त्री के लिए वृद्धावस्था अधिक क्रूर होती है क्योंकि उसका मूल्य उसकी देह सुंदरता से जुड़ा होता है।' वहीं परिवेशगत अंतर में वृद्धों की स्थिति को ग्रामीण व नगरीय परिवेश के रूप में देखते हैं व 3 श्रेणी में विभाजित करते हैं।

- 1) युवा-वृद्ध : 60-74 वर्ष
- 2) मध्य वृद्ध : 75-84 वर्ष
- 3) अति-वृद्ध : 85 वर्ष से अधिक

जहां हिंदी साहित्य में युवा वृद्ध के तनाव, कुंठा व पीढ़ीगत अंतराल को ही अधिक स्थान मिला है क्योंकि यह स्वयं को सबसे अधिक असंगत पाता है।

हिंदी साहित्य में विभिन्न कहानी, निबंधों, उपन्यासों व नाटकों में जरावस्था की विदीर्णता, मृत्युबोध व एकाकीपन की संवेदनाओं का मार्मिकता से वर्णन मिलता है।

हिंदी साहित्य के इतर वृद्ध विमर्श सर्वप्रथम समाजशास्त्र का विषय बना जो इसे सामाजिक तथ्य व समस्या व उनके निदान के रूप में इस विषय का गहनता से अध्ययन करता है। एम.एन. श्रीनिवास, ए.एम. शाह, इरावती कर्वे आदि ने इस पीढ़ीगत अंतराल के चरणों और तनाव को सूक्ष्मता से वर्णन कर वृद्ध व युव पीढ़ी के बीच द्वंद्व व संवादहीनता का बहुआयामी वर्णन किया है। जहां तक हिंदी साहित्य का का प्रश्न है वहां भी 1960

के दशक के बाद की रचनाओं में वृद्ध जीवन की त्रासदी और विसंगति के कटु अनुभवों व अनुभूतियों को गांव-शहर के द्वंद्व व लोकजीवन के ताने बाने में गूँथकर पेश किया गया है।

बीज रूप से वृद्धावस्था वैदिक काल से चार आश्रमों में से अंतिम दो वानप्रस्थ व संन्यास को जीवन मुक्ति के निवारण की उपक्रम अवस्था के रूप में देखा जाता था। भक्तिकाल में इसी तरह कबीर, तुलसी आदि भी इसे भक्तिभाव की आयु के रूप में प्रस्तुत करते हैं किंतु रीतिकाल की चकाचौंध भरी साहित्यिक समझ ने अधिकांशतः राग-रंग भरे यौवन को ही साहित्य में स्थान दिया। भारतेंदु युग से पूर्व रीतिकालीन परिपाटी के चलते विमर्शों व विधाओं का उत्थान नहीं हुआ था। भारतेंदु युग व आधुनिक काल के आते-आते हिंदी साहित्य में संवेदना का विस्तार हुआ व इसने यथार्थ की कठोर भूमि को अपना रचना स्थल बनाया। प्रेमचंद की कहानी 'बूढ़ी काकी' हिंदी साहित्य में नई संवेदना व उपेक्षित वृद्ध के भावों को लेकर पाठक को भीतर तक झकझोरने में समर्थ रही।

'अंतिम अरण्य' उपन्यास में निर्मल वर्मा 'गोदान' के होरी के अंतिम क्षणों के फ्लैशबैक का और अधिक करुण विस्तार करते हैं व अतीत के हर टुकड़े को जोड़कर पीछे जाने के चाह रखने वाले वृद्ध मन को गहराई से टटोलते हैं। इसमें मेहरा साहब के बेटी के संवेदनहीन मन व उपेक्षित भाव के साथ ही अनजाने 'कोई' की संवेदना मेहरा साहब के साथ जुड़ती है और वह 'दीवा' की पूर्ति करता है तो यही भाव आता है – 'कोई आखिर तक साथ नहीं जाता, लेकिन कुछ दूर तक तो साथ जा सकता है'। बढ़ती भूमंडलीकरण की चाह व गलाकाट प्रतिस्पर्धा के दौर में संबंध भी स्वार्थ के आधार पर बनने बिखरने की प्रक्रिया में वृद्ध पिता कैसे अनुपयोगी वस्तु बन जाता है, इसी की संवेदना 'चार दरवेश' उपन्यास में हृदयेश व्यक्त करते हैं, जहाँ चार अर्धेड़ चिंताहरण, रामप्रसाद, शिवशंकर व दिलीपचन्द सूखती मानसिकता की नदी के बीच खुद को तैरने की जद्दोजहद करते हुए पाते हैं व पत्थर से भी सख्त हृदय के आगे वे टूट कर छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। ऐसा ही मृणाल पांडे 'चिमगादड़े' कहानी में उपेक्षित बोध व मानसिक तनाव को झेल रही मां की खीझ प्रकट कर लिखती है –

'तुम दोनों के लिए बस मैं एक जिन्दा लाश-भर हूँ। तुम्हारा बस चले तो बस एक कुत्ते की तरह सूखी रोटी डाल दो। ठीक कहते थे डॉ. डेनियल अगाथा कि आदमी का अपना खून सबसे ज्यादा दगा देता है। क्या मालूम था मुझे. बुढ़ापे के आते-आते अपने होने का अनुभव खुद होने लगता है कि वे सब उनके दुश्मन हैं जो उन्हें टोकते हैं।'<sup>1</sup>

आगे वह 'दोपहर की मौत' कहानी में इस विसंगति की तहों को और उभारती है व लिखती है –

'वैसे तो रघु ने इस बारे में लिखा था कि अबकी बार हमें भी कुछ दिन को साथ ही ले जाएगा यहाँ, पर उसकी बात उसी के साथ गई अब क्या.. एक साथ शांत शिथिलता से मोटे बेदौल हाथ छूटने पर टिक गये.. जब अपना ही लड़का नहीं रहा तो अंग्रेजों के मुल्क में बेगानों की तरह क्या जाना।'<sup>2</sup>

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' में भी आयातित मूल्यों की कृत्रिमता व उपेक्षित वृद्ध को त्रासदी को दर्शाया है जहाँ मिस्टर शामनाथ अपने बॉस को मां से अधिक तरजीह देकर मां को कूड़ा-कर्कट की तरह देखते हैं।

'इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो... रात भर बेशक वहीं रहें। कल आ आयें।'<sup>3</sup> .....पर फिर भी बेटे की तरक्की के लिए अपनी ढल चुकी आंखों से भी वह ममता की मूर्ति फुलकारी बनाने को राजी हो जाती है।

वहीं यह संकट पितृसत्तात्मक समाज में और अधिक गहराता है क्योंकि खुद को पूर्ण पुरुष व अधिकार

युक्त सम्मान छीन जाना वह सहजता से स्वीकार नहीं कर पाता व कई बार संपत्ति विभाजन के बाद व्यक्ति की अहमियत वस्तु मात्र रह जाती है। सूर्यबाला की ३ सौगात३ कहानी में भी ऐसी ही उपेक्षा बेटों से मिलती है जब वे कहते हैं –

‘यही सोचना था जरा कुछ दिन और... कुछ दिन और क्यों...? अब तो आपरेशन हो गया अस्पताल से छुट्टी ... जहाँ तक नास्ते, खाने का सवाल है तो आपको टाइम से पहुँच ही जाता है... अब आप बूढ़े हो गए हैं, भजन-पूजा में ध्यान लगाइए।’<sup>4</sup>

आगे उनकी कहानी ‘निर्वासित’ में यह कटाव और अधिक होता है जब बेटे तलखी भरे लहजे में पिता को उसकी सीमाएं समझाते हुए खुद की सुविधा में पिता से अड़चन पाते हैं –

‘बाबूजी शाम को मेरे दोस्त बगैरह आते हैं न. तो प्लीज आप अंदर मत जाया करो असल में उन्हें ड्रिंक्स वगैरह चाहिए होती है, स्मोक भी करना चाहते आप बुजुर्ग ठहरे, आपके सामने झिझकते हैं।’<sup>5</sup>

ममता कालिया के दौड़ उपन्यास में प्रवास को बेताब लोगों के न केवल स्थान अपितु संस्कार व संवेदना के भी पीछे छूटने की पीड़ा यहां-तहां बराबर दिखाई। रेखा व राकेश के बेटे सघन और पवन पैसे के घर को मनुष्य के घर से अधिक अहमियत दे बैठते हैं व जब पिता की मृत्यु हो जाती है तब भी उन्हें सुध लेने व अंतिम संस्कार का भी वक्त नहीं मिल पाने की बेबसी कृत्रिम बेबसी दिखाते हैं और न्यूयार्क से आ पाने में हिचकिचाहट महसूस करते हैं –

‘आप ऐसा कीजिए इस काम के लिए किसी ना किसी को बेटा बनाकर दाह संस्कार करवाइए। मेरे लिए 13 दिन रुकना मुश्किल होगा आप सब काम पूरी करवा लीजिए।’<sup>6</sup>

संवेदना, सामूहिकता की दुनिया के इस निर्मम ध्वंस व बढ़ते पीढ़ीगत फांक पर स्वयं ममता कालिया लिखती है –

‘यह सब कामयाब संतानों के मां-बाप थे। हर एक के चेहरे पर भय और आशंका के साए थे। बच्चों की सफलता इनके जीवन में सन्नाटा बुन रही थी।’<sup>7</sup>

इसी तरह के भाव काशीनाथ सिंह के ‘रेहन पर रघू’ में है जहां बदलते परिवेश व संबंधों में पिता स्वयं को उलझन में पाता है और मानवीय मूल्यों की सच्चाई की परते भी उधेड़ता है। रघू के बेटों धनजय व संजय को पिता अब समाज से अलग कोई विशिष्ट अपना नहीं लगता वहीं बेटी सरला की भी मनपसंद शादी वह अपने परंपरागत मन के बोझ के चलते नहीं स्वीकार पाते और पूरा परिवेश त्रासद हो जाता है जब वे खुद को गुंडो से किडनेप करवा लेते हैं :

‘मुझे ले चलो! अगवा करो मुझे और फिरौती माँगो दो लाख!’

‘कौन देगा तुम्हारे जैसे सड़े गले बुझे को दो लाख?’

‘सिर्फ दो लाख इसलिए कि रकम नहीं अखरेगी देने में। मिल भी जाएगी और हत्या से भी बच जाओगे।’

‘अरे देगा कौन इस सड़े गले का?’

‘सड़ा गला तुम्हारे लिए हूँ, बेटों के लिए तो नहीं, बेटी के लिए तो नहीं?’

‘मान लो इनमें से कोई फिरौती देने ना आए तो?’

‘यही तो देखना है कि कोई आता भी है या नहीं?’

‘हम भी यही कह रहे हैं कि कोई न आए तब?’ रघुनाथ ने क्षण नर सोचा— ‘तो भी चिंता नहीं। तुम्हारी श्पकड़श इतनी गई गुजरी नहीं। इतना है मेरे पास कि खुद को छुड़ा लूँ!’<sup>8</sup>

अतः सभी संबंधों की सच्चाई व स्वार्थपरकता की अभिव्यक्ति वृद्ध विमर्श पर रचनाकार बेबाकी से करते हैं। ऐसे ही भाव समकालीन अन्य लेखकों की विभिन्न रचनाओं में मिलते हैं। सामूहिक परिवार से एकल परिवेश और उसमें भी जीवन का आखिरी पड़ाव मनुष्य को भीतर से तोड़ देता है व अपने सबसे आखिरी व जरूरतमंद पलों में अकेलापन व अवहेलना खुद को खुद पर बोझलगता है व रिश्तों व संबंधों को ही नहीं पूरी मानवता के भीतरी खोखलेपन की भी अभिव्यक्ति कर पाठकों में भी तनावबोध जागृत कर मार्मिक दंश दे जाता है।

समकालीन हिंदी साहित्य में वृद्ध विमर्श ने और भी जोर पकड़ा है। कृष्णा सोबती के उपन्यास ‘समय सरगम’ की शम्भो भी स्वयं को अकेला होने पर नए रूप में स्वयं से संवाद, आत्म पहचान की संस्कृति की शुरुआत को तरजीह देकर वृद्ध विमर्श में नया आयाम व समाधान प्रस्तुत करने वाली पात्र बनकर उभरी है।

मैत्रेयी पुष्पा की ‘चाक’ व ‘झूला नट’ तथा प्रभा खेतान की आत्मकथा ‘अन्या से अनन्या’ में भी ढलती उम्र की चिंता व संवेदना को मुखर किया है।

दलित नए विमर्शों के आगमन के पश्चात बहुत से विमर्शों का मेल रचना को कई आयामों से संपृक्त करता है। जैसे वृद्ध विमर्श के उपन्यासों में वृद्धावस्था की दोहरी पीड़ा के साथ जातिगत अपमान का दंश भी साथ-साथ दिखाई पड़ता है। वही प्रवासी साहित्य में यह संवेदना घर से दूर अकेले जीने पर और अधिक गहरा जाती है। संजीव उषा राजे सक्सेना, अभिमन्यु अनंत, सुषम बेदी, अचला शर्मा, हरिशंकर आदेश की रचनाओं में सांस्कृतिक पहचान के संघर्ष, जीवन शैली के द्वंद्व व मूल्यों के टूटन का दर्द व भावनात्मक व पीढीगत अंतराल की चुनौतियाँ और अधिक विकराल रूप में मिलती हैं।

अतः वृद्ध विमर्श के विस्तार ने साहित्य की समझ व संवेदना और अधिक गहरी की है व मानवीय अनुभव के सबसे वयस्क व अक्सर उपेक्षित भाग को मुख्यधारा में स्थान देकर पाठकों में भी नई दृष्टि के विकास का आग्रह कर संवेदनशीलता का रस और घोल दिया है। यह रस मार्मिक भी है और यथार्थवादी भी जो संस्कृति व संस्कार को साथ लिए चलता है। इस प्रकार वृद्ध विमर्श साहित्य में तेजी से उभरने वाला बहुआयामी यथार्थपरकता को समेटे हुए साहित्य की समृद्धि में नए-नए फलक जोड़ रहा है व सामानिक नजरिए को और भी अधिक मानवीय बनाने में अपना अभूतपूर्व योगदान दे रहा है।

**संदर्भ :-**

1. मृणाल पांडे, यानी कि एक बात थी, राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष 1990, पृ० 17
2. वही, पृ. 246
3. भीष्म साहनी, प्रतिनिधि कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, पृ. सं. 15
4. सूर्यबाला, पृ. सं. 77, प्रतिनिधि कहानियाँ, प्रभात पेपर बैक्स।
5. वही, पृ. सं. 107
6. ममता कालिया, दौड, वाणी प्रकाशन, पृ. सं. 35
7. वही, पृ. सं. 69
8. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, पृ. सं. 163



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 30-33

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## हिंदी साहित्य और बाल मनोविज्ञान

रमेश कुमार

गुरु गोरक्षनाथ जी गवर्मेन्ट कॉलेज, हिसार।

### भूमिका :

बाल-मनोविज्ञान एक ऐसी शैली या धारा है जिसमें बच्चों के विकास में सहायता या हम समस्याओं को जल्दी पहचान कर उनका समाधान कर सकते हैं बच्चों के स्वस्थ विकास में मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है बालक मानव समाज के आधारशीला है किसी भी समाज का भविष्य बच्चों की मानसिक, नैतिक और भावनात्मक रचना पर निर्भर करता है। बाल-मनोविज्ञान के जनक जीन पियाजे है जिन्होंने बच्चों के विकास को विभिन्न चरणों में विभाजित किया है।

### हिंदी साहित्य और बाल - मनोविज्ञान :

हिंदी साहित्य में अनेक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने अपने साहित्य में बाल मन को चित्रण किया है जिनमें प्रेमचंद, अज्ञेय, भीष्म साहनी, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा इत्यादि। लेकिन इन सब कथाकारों में प्रेमचंद को बाल मन का सर्वश्रेष्ठ कथाकार माना जा सकता है। प्रेमचंद ने अपने साहित्य में अनेक विधाएं लिखीं जिनमें उपन्यास, नाटक, कहानी इत्यादि है उनकी लगभग 300 से अधिक कहानी है जिनमें ईदगाह बाल मन से संबंधित बहुत चर्चित कहानी है इस कहानी में प्रेमचंद ने हामिद को केंद्र में रखकर बच्चों पर पड़ने वाले सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव को उजागर किया है। सकारात्मक पक्ष में हमीद को दर्शाया गया है जब वह मेले में अनुपयोगी चीजों को ना खरीद कर अपनी दादी के लिए चिमटा खरीदता है। हामिद के मन में एक और खिलौने लेने की स्वाभाविक इच्छा भी है और दूसरी और दादी के प्रति उसका कर्तव्य बोध भी है।

**बौद्धिकता के रूप में हामिद का बाल मन का चित्रण** - जब मेले में मोहसिन कहता है कि पूरे मेले में तुम्हें यही चिमटा मिला तब हामिद बात का जवाब देते हुए कहता है कि जरा अपना भिश्ती जमीन पर गिरा तो यह चकनाचूर हो जाएगा लेकिन मेरा बहादुर शेर डटकर किसी भी समस्या से नहीं घबराएगा। जब महमुद कहता है कि यह मेरे सिपाही की तरह मुकाबला नहीं कर सकेगा तब वह तर्कसंगत उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहता है कि अगर कंधे पर रखो तो बंदूक बन जाए और हाथ में रखो तो फकीरों का चिमटा। इस प्रकार प्रेमचंद जी ने मात्र चार-पांच वर्ष के बच्चे की बौद्धिकता को उजागर किया है।

हिंदी साहित्य में बाल मन की यह द्वंदात्मक स्थिति अत्यंत प्रभावशाली रूप में अभिव्यक्त हुई है। जैनंद्र जी की पाजेब कहानी बाल मनोविज्ञान से संबंधित है जो यह दर्शाती है कि किसी बच्चे पर चोरी के शक से घर में तनाव का माहौल बन जाता है।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी में भी बाल मनोविज्ञान का चित्रण हुआ है।

जब लहना सिंह केवल 12 वर्ष का होता है तब वह अमृतसर में होरो नामक एक लड़की को इक्के वाली गाड़ी के नीचे आने से बचाता है। वह फिर प्रेम भाव से उसे लड़की से पूछता है तेरी कुड़माई हो गई तब होरो आंखें चढ़ा कर धत्त कहकर दौड़ जाती है। लेखक ने उसके प्रेम भाव के मनोभाव को चित्रण किया है वह घर जाते समय लड़के को मोरी में धकेल देता है। एक छाबडी वाले की पूरे दिन की कमाई खो देता है एक कुत्ते को पत्थर मारता है। एक गोभी वाले के ठेले में दूध उड़ेल देता है। इस प्रकार कहानी में कहानीकार ने लहना सिंह के द्वारा बच्चों में प्रेम मनोभाव का चित्रण भी किया है।

### **भीष्म साहनी और उनके साहित्य में बाल-मन :**

भीष्म साहनी का यथार्थबोध यद्यपि समाज को कई बार बहुत वेधक दृष्टि से देखता है लेकिन करुणा से परहेज करते हुए वे कहीं भी दिखाई नहीं देते। भीष्म साहनी जी की पाली कहानी एक भावपूर्ण और संवेदनशील रचना है जो एक छोटे बच्चों की कहानी के माध्यम से धार्मिक संकीर्णता और सामाजिक दबाव को दर्शाती है। यह कहानी एक बच्चे के मानसिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव को गहराई से उजागर करती है एक छोटा सा बच्चा पाकिस्तान से भारत आते समय अपने माता-पिता से बिछड़ कर वहीं रह गया और एक मुस्लिम मां-बाप का लाडला हो गया। 5-6 साल बाद उसे वापस अपने माता-पिता के पास भारत लाया गया हिंदू-मुस्लिम आदि पहचानों के खोखलेपन को उजागर करती यह कहानी पाठक वर्ग को अश्रुविगलित कर देता है।

### **बाल - मनोविज्ञान की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि :**

बाल-मनोविज्ञान बच्चों के विकास और उसकी मानसिक परिस्थितियों को भी उजागर करता है जिन पिपाजे ने बालक के संज्ञानात्मक विकास को विभिन्न चरणों में विभाजित करते हैं जिससे स्पष्ट होता है कि बालक के प्रत्येक चरण में अलग-अलग व्यवहार देखने को मिलता है। जब सामाजिक यथार्थ बालक की मानसिक क्षमता से अधिक जटिल होता है तब बालक भ्रम, भय और तनाव की स्थिति में आ जाता है। यह परिपेक्ष हिंदी साहित्य में बाल मन के मानसिक संघर्ष द्वंदात्मक स्थिति के रूप में प्रकट होता है।

### **फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियों में बाल- मन :**

फणीश्वर नाथ रेणु ने अपने साहित्य में मुख्य रूप से कहानियों में ही बाल-मन को केंद्र में रखा है जिनमें उनकी रसप्रिया, ठेस तथा लाल पान की बेगम इत्यादि कहानियां हैं। रसप्रिया 1955 रेणु की पहली कहानी है जिसने रेणु को श्रेष्ठ कहानी कारों की पंक्ति में ला दिया। यह कहानी मोहना के माध्यम से ग्रामीण जीवन की समस्याओं और बाल मनोविज्ञान को उजागर करती है।

वहीं दूसरी ओर ठेस कहानी में सिरचन एक कारीगर की कथा है जो अपने स्वाभिमान और सामाजिक दबाव के बीच संघर्ष करता है इस प्रकार यह कहानी सामाजिक यथार्थ के साथ-साथ बाल मनोविज्ञान विकास को भी दर्शाती है।

लाल पान की बेगम कहानी में बिरजू और चंपिया के द्वारा कहानी में बाल-मन को उजागर किया गया है। जब बिरजू के बप्पा मेले में जाने के लिए बैलगाड़ी मांगने जाते हैं तो बिरजू अपने मन में अनेक आशाएं रखता है वह कहता है कि अगर उसके बप्पा गाड़ी ले आएंगे तो वह झमली पर रहने वाले जिन बाबा को अपने द्वारा लगाए पौधे का पहला बैंगन कबूल करेगा।

रेणु जी ने बिरजू के चंचल स्वभाव को भी उजागर किया है। जब वह कहता है देख दिदिया देख यह मिलिट्री टोपी इस पर दस लाठी करने से भी कुछ नहीं होता।

### **जयशंकर प्रसाद और मन्नू भंडारी के साहित्य का बाल- मन :**

हिंदी साहित्य में जैसे तो प्रसाद जी नाटक विधा में महत्वपूर्ण कथाकार है लेकिन वह अपने साहित्य में बाल मन से भी अछूते नहीं रहे। उनकी ग्राम कहानी में लेखक ने बचपन की स्मृतियां और गांव के वातावरण के प्रति बच्चों के गहरे लगाव को व्यक्त किया है। प्रसाद जी के साहित्य में बाल-मन अधिक भावुक और कोमल रूप में सामने आता है बच्चों की मासूमियत उसकी जिज्ञासा और उसके मानसिक विकास को कहानी में दिखाया गया है।

कहानी में बालक का मन प्रकृति, लोगों और छोटे-छोटे अनुभवों से गहराई से जुड़ा हुआ दिखता है। बालसुलभ कल्पना, भावुकता और सरलता के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि बचपन के अनुभव व्यक्ति के व्यक्तित्व को जीवनभर प्रभावित करते हैं। प्रसाद जी ने स्मृति और अनुभूति के सहारे बाल मन की कोमलता को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।

मन्नू भंडारी ने भी अपने प्रसिद्ध उपन्यास आपका बंटी में बंटी को केंद्र में रखा वह विचार नादान, नासमझ अपनी पारिवारिक परिस्थितियों के द्वंद में फंसा हुआ है। इस पूरी स्थिति की सबसे बड़ी विडंबना ही यह है कि इन संबंधों के लिए सबसे कम जिम्मेदार और सब और से बेगुनाह बंटी ही इस ट्रेजेडी के त्रास को भोक्ता है। उपन्यास में दिखाया गया है कि किस प्रकार बच्चों में अनुकरण की प्रवृत्ति ज्यादा सक्रिय होती है जब बंटी के अपने चाचा से सुनता है कि एक जब एक बार धूरी गड़बड़ा जाती तो जिंदगी लड़खड़ा जाती है फिर कुछ भी नहीं बचता कुछ भी नहीं।

वह इन शब्दों को अपने मन में किस प्रकार ऐठ लेता है और पूरे पूरे दिन तक द्वंदों में फंसा रहता है।

उपन्यास में लेखिका ने बंटी के तार्किक संवाद को भी दर्शाया है जब वह अपने दोस्त टिटू से कहता है खाली देखने से काम नहीं चलेगा समझना पड़ता है यह कोई आठ आने वाला तमाचा नहीं जो हर कोई चला ले।

### **समकालीन साहित्य और बाल-मन :**

कहानी में कथावाचक के अनुसार मां कहानी सुनाती है और बच्चे कहानी सुनने के इतने उत्सुक है कि वह चार-पांच बच्चे अपनी मुट्टियों में फूल दबाए कहानी समाप्त होने पर गौरों पर फूल चढ़ाने के लिए उत्सुक से बैठ जाते हैं। आटे की चाक पर मिट्टी की छह गोरे रखी जाती है। ऊपर वाली गौर में सिंदूर और बिंदिया लगती है बाकी पांच नीचे दबी पूजा ग्रहण करती रहती।

कमलेश्वर की कहानी 'राजा निरबंसिया' में बाल-मनोविज्ञान का चित्रण अत्यंत मार्मिक, यथार्थपरक और प्रभावशाली रूप में किया गया है। यह कहानी एक बच्चे के मन में पल रहे डर, कल्पना, असुरक्षा और आंतरिक संघर्ष को बहुत सूक्ष्म ढंग से सामने लाती है।

कोशी का घटवार कहानी में भी शेखर जोशी ने बाल मन का चित्रण किया है। कहानी में जब लछमा पिशान के लिए जाती है तब उसका बच्चा उसके पीछे-पीछे चला जाता है जब उसका बच्चा गुसाई के घर पहुंच जाता है तब लछमा कहती है। इस छोकरा को घड़ी भर के लिए चैन नहीं मिलता जाने कैसे पूछता-खोचता

मेरी जान खाने को यहां भी पहुंच गया। तब लछमा अपने बच्चों को कहती है कि चुप रह अभी लौट कर जाएंगे घर इतनी देर में क्यों मरा जा रहा है। तब गुसाई कहता है कुछ साग सब्जी होती तो बेचारा एक आधी रोटी और खा लेता। ऐसी ही खाने पीने वाले की तकदीर लेकर पैदा हुआ होता तो मेरे भाग्य क्यों पड़ता।

इस कहानी में शेखर जोशी ने बच्चों द्वारा कहानी में घर की विपन्नता का स्वरूप प्रकट किया है कि किस प्रकार बच्चों की मौन प्रवृत्ति सब कुछ बयां कर देती है।

बालक अपनी आशाओं के प्रति अधिक सजक होते हैं उनकी छोटी-छोटी जरूरतें कभी-कभी राही का पहाड़ बन जाती है। वह छोटी-छोटी जरूरत के लिए जिद्दीपन भी दिखाता है। आज के समकालीन साहित्य में बाल मन नए प्रकार के द्वंद्वों से जूझता है शिक्षा का दबाव, प्रतिस्पर्धा तकनीक का प्रभाव और पारिवारिक विघटन।

### **अन्य गद्यकर और बाल-मन :**

अन्य लेखकों में अज्ञेय, सुदर्शन, कमलेश्वर, शेखर जोशी, राजेंद्र यादव इत्यादि हैं।

अज्ञेय ने अपने उपन्यास शेखर एक जीवनी (1941) में शेखर के बचपन से प्रौढ अवस्था को दिखाया है वह बचपन में सोचता है कि वह भी अपनी पुस्तक लिखेगा उसने फूलों से संबंधित पुस्तक लिखने की सोची जिसके लिए उसने अपने पिता की अलमारी से पुस्तक के कवर को अपनी पुस्तक पर चढ़ा लिया था। इस बात पर उसके पिताजी ने ज्यादा आक्रोश ना किया और कहा कि कुछ परवाह नहीं बेटा अगली बार और अच्छी लिख लेना लेकिन मेरी पुस्तक खराब मत करना।

शेखर के बचपन में उसकी मां की मृत्यु हो जाती है जिससे उसके मन में एक गहरा आघात होता है यह घटना उसके मनोविज्ञान विकास को प्रभावित करती है।

बालक शेखर अपने पिता के साथ अपने संबंधों में संघर्ष करते हैं जो उसके मनोविज्ञान विकास को भी प्रभावित करता है।

शेखर एक जीवनी उपन्यास में बाल मनोविज्ञान का चित्रण एक महत्वपूर्ण पहलू है जो पाठकों को बाल मन की गहराई और संवेदनशीलता को समझने में मदद करता है।

### **संदर्भ सूची :**

1. भीष्म साहनी – प्रतिनिधि कहानियां, पाली कहानी संग्रह, पृष्ठ संख्या 2–15, वाणी प्रकाशन।
2. रेणु जी – ठुमरी कहानी संग्रह, लाल पान की बेगम, पृष्ठ संख्या 110–127, राजकमल प्रकाशन।
3. मन्नू भंडारी – मन्नू भंडारी का व्यक्तव, पृष्ठ संख्या 7।
4. कहानी, नई कहानी, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 22
5. प्रेमचंद – मानसरोवर, भाग 1, पृष्ठ संख्या 62–73, राजकमल प्रकाशन।



# शिक्षा की वर्तमान स्थिति और आगे की राह : स्त्री आत्मकथा के संदर्भ में

पूनम

शोधार्थी, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक।

## सारांश :

स्त्री आत्मकथाओं में हम साफ तौर पर यह तथ्य देख पाते हैं कि किस प्रकार स्त्रियों को मानव को मिलने वाले मूलभूत अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है क्योंकि जिस पितृसत्तात्मक समाज से वह जूझ रही है। वह न केवल उनसे स्वतंत्र आसमान आसमान को छीन रहा है बल्कि वह उनके पैरों से जमीन भी हथिया रहा है। ऐसे में उन्हें अपने वजूद को कायम करने के लिए निरंतर मशक्कत करनी पड़ती है। चाहे वह अपने शिक्षा के अधिकार को लेकर हो या व्यवसाय चयन की स्वतंत्रता को लेकर लड़ी जाने वाली लड़ाई हो अथवा अपने आर्थिक सामाजिक सशक्तिकरण को मजबूत करने की पहल ही क्यों ना हो। एक और जहां सरकार शिक्षा का अधिकार और सब पढ़े सब बढ़े जैसे कम पहलों के माध्यम से एक समानता और बौद्धिकता से युक्त समाज की ओर हमें अग्रसर करने की चेष्टा करती है, वहीं दूसरी ओर तमाम तरह की रूढ़ियां, परंपराएं और जड़ मान्यताओं के आगे यह सारी कोशिश बहुत छोटी नजर नजर आती है।

हम इस शोध पत्र के जरिए यह पड़ताल करेंगे किस प्रकार एक साधारण स्त्री के तो शिक्षा को लेकर अपने संघर्ष है ही वहीं जातीय स्थिति और शारीरिक विकलांगता की स्थिति इस संघर्ष को और अधिक पैना और जटिल बना देती है। फिर भी एक उम्मीद की रोशनी है जो अंधेरे को चीर देने का साहस रखती है वह न केवल अपने हकों के लिए लड़ती है। बचपन में शिक्षा की दहलीज तक पहुंचने के लिए वह किन-किन दीवारों को लांघकर आती है। ज्ञान के प्रांगण में पहुंचने के बाद किन किन गहन अंधकार से उसे जूझना पड़ता है और उसके पश्चात व्यवसाय चयन और आर्थिक आजादी को किस प्रकार बचा कर रखती है। ऐसे तमाम पहलुओं पर इस शोध पत्र में चर्चा की जाएगी। आज भी पूरे देश के विभिन्न राज्यों की महिलाएं जब आत्मकथा लिखती हैं तो वह शिक्षा के लिए इस तरह की बेड़ियों से अपने आप को घिरा पाती हैं। यह इस शोध पत्र के जरिए हम जानेंगे कि किस प्रकार हम एक मानवीय और सच्चे अर्थ में लोकतांत्रिक समाज की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं इसके समाधान का जरिया भी हमें स्त्री आत्मकथाएं अपने उदाहरण के माध्यम से देती हैं।

## शोध पत्र :

बाबा साहेब अम्बेडकर का दृढ़ विश्वास था कि शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का साधन नहीं है बल्कि

मुक्ति और सशक्तिकरण का मार्ग भी है। आज जब हम स्त्री पुरुष शिक्षा अनुपात पर नजर डालते हैं तो एक मानवीय चिंता का प्रश्न हमसे बार बार टकराता है कि क्या हमने लगभग आधी आबादी की मानवीय संवेदनाओं को ही नहीं कुचल दिया और उन्हें उनके सम्मानपूर्वक जीवन जीने के हक से ही वंचित कर दिया। स्त्री जीवन के जीने की दशा और दिशा दोनों को अपने पितृसत्तात्मक सांकलो से बाँध उनके जीवन को नियति की डोर से झूलता ही छोड़ दिया। 21वीं सदी की आधुनिकता के दौर में हम भले ही मनुष्य को स्वतंत्रता, समानता व शिक्षा के सभी हकों को व्यावहारिक धरातल पर उतारने की पैरवी करते हो पर तथाकथित रुढ़ियों को मजबूती देती परंपरागत मानसिकता हमारे मानवीय विकास के हर वायदे हर प्रयासों को ताश के ढेर की तरह बिखेर देती है लेकिन एक गूँज अभी भी यदा कदा उठ जाती है जो अपने सभी हकों को लेने के लिए आवाज उठाने का माद्दा रखती है वह कभी सावित्री बाई फुले की प्रतिबद्धता के रूप में अपना खम ठोकते हुए कहती है कि "मैंने लड़की बनकर किताब उठाई, तो धर्म कांप गया, परंपरा चिल्लाई।

मैं चुप नहीं रही, मैंने कहा—तुम्हारा डर मेरी ताकत बनेगा!" कहीं वैश्विक परिदृश्य के रूप में मलाला युसुफजई के साहस की मशाल के रूप में उजियाला करती है जो हमें सजग मनुष्य बनने की प्रेरणा भी देती है कि "हमें सब कुछ सीखना चाहिये और फिर चुनाव करना चाहिये कि हमें कौन से मार्ग पर चलना है, शिक्षा न तो पूरब की है और न पश्चिम की, यह मानवीय है।"<sup>1</sup>

भारतीय समाज में लैंगिक उत्पीड़न जितना सतह के ऊपर है उससे भी कहीं अधिक तल में है। अपने पारिवारिक ढाँचे में संघर्ष करती स्त्री का भी स्वप्न होता है कि वह भी अपने जीवन में आर्थिक फ़ैसले लेते हुए इच्छानुसार जीवन जी सके। इसके लिए वह जड़ हो चुके ढाँचे के साथ आजीवन संघर्ष करती है। निर्मला जैन अपने शुरुआती जीवन के बारे में लिखती हैं, "मेरी दिनचर्या सुबह—सवेरे उठते ही पत्थर के कोयले की अंगीठी सुलगाने से शुरु होती तो दिन—भर पकाने—खिलाने, मेहमानों की खातिरदारी करने की कठिन डगर से गुजरती हुई साँझ ढले ही खत्म होती... आए दिन आँगन के बीचोंबीच मेरा धोबीघाट खुलता और लकड़ी की मोगरी से कूट—कूटकर सफ़ेद मक्खन जिन की पतलूनों और पॉपलीन की कमीजों की धुलाई होती।"

घरेलू परिवेश में ही संकीर्णताओं से दो—चार होते हुए वह अपने लिए एक मार्ग तलाशती है जो उसे अंधेरे के डरावने स्वप्न से दूर एक उजाले का संसार दिखा सके। क्योंकि परंपरागत नजरिए से बेटे और बेटा की परवरिश में दिन—रात का अंतर किया जाता है। बच्ची को बचपन से ही इस रूप में तैयार किया जाता है कि वह अपनी बाल सुलभ जरूरत और अपने इच्छित आसमान में उड़ने की बजाय पितृसत्तात्मक समाज की चारदिवारियों को ही चमकाती महकाती रहे। उसे घर, परिवार और समाज की इज्जत को बनाए रखने वाले यंत्र के रूप में ढाला जाता है और तमाम उम्र एक ध्वस्त हो चुकी परंपरा को ही ढोती रहती है।

कवयित्री अनामिका परिवार के ढाँचे के परिसर में कमाती हुई स्त्री के बारे में एक जरूरी बात का उल्लेख करती हैं, "क्योंकि वह माँ है, पिता तो है नहीं, कमाती भी है तो पिता से कम, और जो कमाती है—उसे खर्च का अधिकार तो पिता को ही है... पिता ही है सुप्रीमो..."<sup>2</sup>

स्त्री आत्मकथाओं में इस स्थिति को देखें तो स्त्री एक साथ ही लिंग भेद, जाति भेद, रंग भेद और धार्मिक सामाजिक रुढ़ियों के चक्रव्यूह में स्वयं को जकड़ा हुआ पाती है। वही जब इस सब जद्दोजहद से बाहर आकर अपना व्यक्तिगत पहचान कायम करने की कोशिश करती है तो अपने सामने अनेक चुनौतियों का को खड़े पाती

है। जैसे कि तस्लीमा नसरीन अपनी आत्मकथा में जिक्र करती है कि उनके पिता पढ़े-लिखे नामी डॉक्टर होने के बावजूद घर में उनकी परवरिश में इस बात का बराबर ध्यान रखा जाता था कि उन्हें इस रूप में बड़ा किया जाए कि वह दूसरे घर में जाकर पति की सेवा करने योग्य हो सके। शिक्षा में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने के बावजूद इस बात पर ही अधिक जोर दिया जाता था कि वह सिर पर पल्लू रखे और सामाजिक विकृत मानसिकताओं को अपने पर पाबंदी लगाकर संतुलित करने का प्रयास बराबर करती रहे। ठीक इसी प्रकार सुमित्रा महरौल अपनी आत्मकथा में जिक्र करती है कि वह विकलांग होकर भी उन्होंने अपने आपको अपनी शारीरिक कमजोरी और बाहरी सामाजिक चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बनाया पर घर परिवार में तो वह अपने आपको कमजोर ही पाती क्योंकि उन्हें घर में बार-बार इस बात की ओर ध्यान दिलवाया जाता है कि हम तुम्हें खूब पढ़ाएंगे विवाह के समय अगर कोई मानस का भूखा होगा तो इसे अपने आप ले जाएगा अर्थात् वे उसके पूरे जीवन उद्देश्य के रूप में विवाह को ही तरजीह देते। यह वाक्य अपने आप में बहुत कष्टदायक है जहां स्त्री की अपनी संवेदनाओं, इच्छाओं और महत्वाकांक्षाओं को किनारे कर उसे एक जड़ वस्तु के रूप में देखा जाने लगे।

जॉन डेवी का कहना है कि शिक्षा केवल जीवन जीने की तैयारी नहीं अपने आप में एक जीवन शैली है। जिससे हम समाज के विभिन्न आयामों को जानते हैं। अपने अधिकार अपनी जिम्मेवारियों को पहचान पाते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जीवन जीने का नजरिया पाते हैं और साथ ही एक संवेदनशील मनुष्य बन पाते हैं। परंतु स्त्री आत्मकथाओं को जब सूक्ष्मतापूर्वक देखा जाए तो वहां पर एक समस्या बार-बार सामने आती है जिसमें उन्हें शिक्षा के अधिकार से तो वंचित किया ही जाता है साथ ही अपने अस्तित्व और सामर्थ्य को भी बराबर सिद्ध करना होता है। यह अपने आप में ही एक विरोधाभासी स्थिति है जहां पहले से ही असमर्थ और कमजोर तबके को प्राप्त अवसर न देकर उन्हें कर्तव्य निर्वहन के आदेश दे दिए जाएं क्योंकि आज भी शिक्षण प्रणाली में अनेक प्रकार की असमानता की जड़े निहित हैं। जहां बाल पुस्तकों में घर के कामकाज के रूप में स्त्रियों को दिखाया जाता है कि मम्मी जी की रोटी गोल और पापा जी के पैसे गोल। यह ठीक बात है कि भोजन बनना किसी का व्यक्तिगत चुनाव हो सकता है पर वहीं जब उस काम के मौद्रिकरण की बात आती है तो स्त्रियों के साथ दोगले दर्जे का व्यवहार किया जाता है क्योंकि वहीं खाना पकाने का काम शेफ के रूप में वह अपनाना चाहे तो उसके सामने तमाम अड़चनें आती हैं। अपनी आय के साथ ही स्वावलंबन और आत्मसम्मान का भाव भी निहित होता है पर वह उन्हें सहज रूप में नहीं मिल पाता। इसके लिए उन्हें तमाम परंपरागत सलाहों से टकराना पड़ता है।

वहीं किसी शिक्षण संस्था या अन्य कोर्स में जब परिजन, गार्जियन और आय के विकल्प को भरते समय घर के मुख्य पुरुष की भूमिका को प्राथमिक माना जाता है। अनेक बार स्कूल और कॉलेज के चार दिवारी में भी जातिगत और लिंगगत भेदभाव की खबरें हम बराबर सुनते हैं। इस भेदभाव की कड़ी की शुरुआत घर से ही होती है। इसी असमानता का जिक्र कर कौशल पंवार बताती है कि जब वह पढ़ने लिखने और अपने सपनों को जीने की बात करती है तो उनके ताऊजी का यह मानना था कि लड़की को इतनी छूट देना ठीक नहीं है। इनको दाल रोटी पानी बनाना सिखाया जाए नहीं तो ससुराल में लोग जूते मारेंगे और हमारे घर परिवार को बदनाम किया जाएगा। एक और जहां परिजन ही शिक्षा की अहमियत नहीं समझ पाए वहीं दूसरी ओर शिक्षा के प्रांगण में ही उनसे अमानवीय बर्ताव किया जाता है। कौशल पंवार जिक्र करती है कि वह जब स्कूल जाती तो उनके साथी उन्हें इस प्रकार से महसूस करवाते कि उसके नीची जाति से होने के कारण वह स्कूल को गंदा कर देगी

और साथ ही स्कूल की सफाई करने का काम भी उसको सौंप दिया जाता। यहां तक गुरु जो अज्ञानता से प्रकाश की दहलीज पार करवाता है वही गुरु उन पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं कि चूहड़े की होकर भी किसी प्रकार उनके मटके से सीधा पानी पी सकती है। आज भी ऐसी घटनाएं सुनने में आती हैं कि जातिगत और लिंगगत भेदभाव के कारण अनेकों बच्चियों अपनी शिक्षा के मूलभूत अधिकार को भी पाने से वंचित रह जाती हैं। गरीबी और जातिवाद को शिक्षा व्यवस्था के रास्ते में आने वाले प्रमुख बाधाओं के रूप में देख सकते हैं। सिर्फ जाति के आधार पर उनसे उनकी बाल सुलभ इच्छाएं भी छीन ली जाती। चाहे वह डांस क्लास में भाग लेना हो, कविता के पाठ करने की छोटी सी इच्छा हो या फिर साथ में खेलने की मनोकामना ही क्यों ना हो।

सुशीला टाकभौरे बताती हैं कि उनके साथ की ऊंची जाति की लड़कियां कढ़ाई, बुनाई, सिलाई, नाच गाने का काम और अनेकों मनोरंजन करती तो उसे स्वयं पर ही आत्मग्लानि होने लगती कि मैंने निम्न जाति में जन्म क्यों ले लिया। वह बताती हैं कि जहां बाबा साहेब अंबेडकर ने कड़े प्रयासों के बाद दलित समाज के लिए सामानता के द्वार खोले और उन्हें मंदिर, शिक्षा के प्रांगण और सार्वजनिक जगह पर एक इंसान की रूप में अहमियत प्रदान करवाई। वहीं इसी शैक्षणिक प्रांगण में सुशीला टाकभौरे के साथ बार-बार अन्याय होता रहा।

वे इस पीड़ा और अपमान को शब्द देते हुए अपनी आत्मकथा में लिखती हैं कि "अपने घर के लोगों के सामने सवर्ण लड़कियाँ मुझसे दूर रहकर बातें करतीं। तेज गरमी में यदि बहुत प्यास लग जाये, तो सहेली दूर से मेरी हथेलियों पर पानी डाल देती। हथेलियों के ओक से पानी पीकर मैं उस सहेली का आभार मान लेती थी। भारतीय हिन्दू समाज परम्परा का यह कडवा सत्य था। यह जातिभेद का सत्य कथा। तब मेरे लिए यह सहज बात थी मगर अब लगता है यह मेरे लिए अपमान की बात थी। मेरे लिए भी मेरी जाति के लिए भी और सम्पूर्ण समाज व्यवस्था के लिए भी शर्म की बात थी।"<sup>3</sup>

असल में स्त्री की आर्थिक आजादी, विवेक से फैसले लेने का साहस का रास्ता और अपने जीवन संसार को चुनने का रास्ता सभी शिक्षा से जुड़ता है। शिक्षा, जिसके तमाम माध्यमों और संसाधनों पर अधिकतर पुरुष का ही कब्जा हुआ करता है। एक तरफ मैत्रेयी पुष्पा लिखती हैं कि, "... पढ़ने जाना लोगों की आँखों में कैसा खटकता था।"<sup>4</sup> तो वहीं दूसरी ओर इस अस्वस्थ मानसिकता के प्रतिकार के रूप में शिक्षा के महत्व को स्वीकार करती हुई निर्मला जैन अपनी आत्मकथा में दर्ज करती हैं, "मुक्ति का सबसे व्यावहारिक और सम्मानजनक रास्ता शिक्षा की दुनिया में से ही होकर निकलता दिखाई पड़ रहा था।"<sup>5</sup>

विवाह जिसे एक दूसरे जीवन के पर्याय के रूप में देखा जाता है जहां वातावरण और रिश्ते, भूमिकाएं सभी एकदम पिछले घर से एकदम अलग होते हैं यह एक स्त्री को सुरक्षा देता है तो दूसरी तरफ सुरक्षा के नाम पर उसकी आजादी का अपहरण कर लेता है। एक उम्र बीत जाने के बाद एक स्त्री को यह पता चलता है कि अपनी सुरक्षा के नाम पर कैसी-कैसी आजादियाँ उनसे छिन ली गई हैं।

...परिवार और समाज की पुरानी मानसिकताओं के कारण आधुनिक पढ़ी लिखी स्त्रियों को घर से बाहर काम करने में दिक्कतें आती हैं। लेकिन उसका वर्तमान परिदृश्य यह कहता है कि उसे घर से बाहर काम करने की और सभी व्यवसायगत भूमिकाओं अपनी भागीदारी दर्ज करवाने की जरूरत है। इस वजह से शिक्षित स्त्रियां पुरानी मान्यताओं को स्वीकार नहीं करती हैं। महादेवी वर्मा एक स्त्री की दृष्टि से इसका विश्लेषण करती हैं। आधुनिक शिक्षा प्राप्त स्त्रियां अच्छी गृहिणियां नहीं बन सकतीं, यह प्रचलित धारणा पुरुष के दृष्टि बिंदु से देखकर

ही बनाई गई है, स्त्री की कठिनाई को ध्यान में रखकर नहीं।”<sup>6</sup>

आधुनिकता और परंपरा के बीच द्वंद्व के समाधान की तलाश करती हुई महादेवी वर्मा स्त्री-पुरुष के बीच विकासशील मनुष्य बनने की बात करती है। पुरुष अब तक जिस पितृसत्तात्मक माहौल में परवरिश लेता है वह स्त्री को दो ही रूपों में बढ़ने दे सकता है, मां और पत्नी। स्त्री जब घर से बाहर भी अपना कार्य का दायरा रखेगी तो उसे सभी प्रकार की स्वतंत्रता और सहूलियत मिलनी चाहिए। नहीं तो समय अपनी परिवर्तनशील गति में पुरुष के देवत्व और स्त्री के दासत्व को बहा ही ले गया है। अब या तो दोनों को विकासशील मनुष्य बनना होगा या केवल यंत्र।”

परंपरा और आधुनिक के मध्य द्वंद्व का आधार ही हमेशा से समाज व परिवार का संस्कार है। इसी संस्कार के कारण से भारतीय स्त्रियां न तो पूरी तरह से परंपरा से कट ही पाई है और न ही पूरी तरह से आधुनिकता हो आत्मसात कर पाई।

किसी भी समाज की स्त्रियों की स्थिति का संकट और चुनौतियां उस समाज व राष्ट्र का संकट होना चाहिए। जब तक यह भावना और विचार नहीं पनपते तब तक समाज विकास की दिशा में पर्याप्त रूप से आगे नहीं बढ़ सकता। स्त्री आत्मकथाओं में स्त्री जीवन के जिस खुरदरे यथार्थ और उससे उत्पन्न द्वंद्व को दिखाया गया है वह वस्तुतः एक द्वंद्व ही नहीं समाज के लिए भी हानिदायक है। पंडित रमाबाई के शब्दों में यह संकट राष्ट्र का संकट है। राष्ट्रीय संकट है। वह समाज में स्त्रियों की दशा की रूपरेखा व कारक को उजागर करती हुई समाज में स्त्री जीवन के संकट को राष्ट्रीय संकट के रूप में रेखांकित करती हैं।

कहा जा सकता है कि किसी भी समाज के विकास में वहां की पारंपरिक मूल्य, संस्कार, और रीति रिवाज जो इतिहासबोध से संचालित होता है उसकी भूमिका को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता है लेकिन परंपरा के नाम पर सामाजिक-सांस्कृतिक जडता, रूढ़िवादिता, कर्मकांड आदि का पालन करना और गैर वैज्ञानिक रवैया समाज को विकास की राह से पीछे ले जाता है। वहीं आधुनिकता जो कि एक वैज्ञानिक एवं तर्कशील वैचारिक मूल्य और सहज जीवन प्रक्रिया है वह किसी भी समाज के उत्थान व विकास के लिए अनिवार्य पहलू है। भारतीय समाज में परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व इस कदर गढ़-मढ़ है कि वह समाज के विकास में सहायक नहीं होता है। द्वंद्व की स्थिति स्त्रियों के लिए, स्त्री मुक्ति के लिए बहुत सहज नहीं है। परंपरा की नकारात्मक चीजें और आधुनिकता की फूहड़ चीजें दोनों ही किसी भी समाज के विकास में बाधक होती हैं। स्त्रियों की दृष्टि से इसे सकारात्मक नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि जिस समाज में स्त्री शिक्षा की समुन्नत स्थिति नहीं है, उस समाज में परंपरा और आधुनिकता की नकारात्मक तथ्यों की पहचान बहुत आसान नहीं। ऐसी स्थिति में वह स्त्री मुक्ति आंदोलन के लिए घातक है ही, साथ में समाज और राष्ट्र के लिए उचित नहीं कहा जा सकता है। राष्ट्र व समाज के विकास के लिए परंपरा और आधुनिकता की वैचारिकी का समन्वय के साथ समावेशन जरूरी है। साथ ही उसमें स्त्री पक्षों को ध्यान में रखना भी अति आवश्यक है, तभी अच्छे अर्थ में मानवीय और लोकतांत्रिक समाज का स्वस्थ विकास संभव है।

#### संदर्भ ग्रन्थ :

1. निर्मला जैन, जमाने में हम, राजकमल प्रकाशन, (2015), पृष्ठ 76
2. अनामिका, स्त्री विमर्श का लोकपक्ष, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, (2012), पृष्ठ 106

3. शिकंजे का दर्द, सुशीला टाकभौरे प्रलेक प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2023 पृष्ठ 47।
4. मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुंडल बसै, राजकमल प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण 2021), पृष्ठ 43
5. निर्मला जैन, जमाने में हम, राजकमल प्रकाशन, 2015, पृष्ठ 87
6. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियां, पृष्ठ 43

ई मेल – khicherbishnoiiji@gmail.com



## वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप

डॉ. रामकुमार

हिंदी-विभाग, राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

### मथितार्थ :-

वैश्वीकरण के इस दौर में हिंदी भाषा भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य, धर्म, दर्शन व कला की संवाहिका बनकर अपनी अभिव्यक्ति प्रदान कर रही है। अब इसका दायरा सीमित न रहकर विश्व-व्यापी होता जा रहा है जो हमारी संस्कृति का ध्येय वाक्य वसुधैव कुटुंबकम् के मूल भाव को चरितार्थ कर रही है। हिंदी साहित्य की समृद्ध परंपरा जो आदिकाल से चली आ रही है वह इस आधुनिक विज्ञान और तकनीक के दौर में वैश्विक स्वरूप को धारण कर रही है। हिंदी साहित्य का सृजन विदेश में भी हो रहा है। हिंदी साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं का अनुवाद अनेकों विदेशी भाषाओं में हुआ है, जो हिंदी के बढ़ते हुए स्वरूप को उजागर करता है। वर्तमान प्रौद्योगिकी के दौर में हिंदी साहित्य तकनीक व प्रौद्योगिकी के उपयोग में भी अछूता नहीं रहा है।

आज ऑनलाइन प्लेटफॉर्म व जनसंचार के माध्यमों के द्वारा हिंदी साहित्य का विपुल भंडार मौजूद है। यू-ट्यूब, ब्लॉग, ट्विटर व अध्ययन-अध्यापन के अनेक माध्यमों के द्वारा हिंदी साहित्य वैश्वीकरण के दौर में दूसरी भाषाओं के साहित्य के साथ कदम-ताल कर रहा है। यदि पुराने दौर में देखें तो हिंदी केवल भारत तक सीमित थी। परंतु 19वीं सदी के बाद इसका दायरा विश्वव्यापी होता जा रहा है। यह भारत के पड़ोसी देशों से लेकर खाड़ी देशों व अन्य महाद्वीपों के सुदूर क्षेत्रों में भी अपनी पहचान बना रही है। प्रवासी भारतीय रचनाकारों व कवियों ने भी इसके साहित्य को समृद्ध करने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा के प्रचलन व विविध भाषाओं के शब्दों का समावेशीकरण हिंदी भाषा और उसके साहित्य की ऊर्जा को द्विगुणित कर रहा है। वर्तमान दौर में इंटरनेट व ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से जुड़कर हिंदी साहित्य एक नए अंदाज में अपनी अभिव्यक्ति प्रदान कर रहा है।

### शब्द संकेत :

प्रौद्योगिकी, ब्लॉग, ट्विटर, वैश्वीकरण, साहित्य, डिजिटल, जनसंचार, प्रशिक्षण, संवाहिका, ऑनलाइन, कला, दर्शन।

### भूमिका :-

यह सर्व विदित है कि एक सशक्त भाषा संपूर्ण विश्व को एक सूत्र में पिरोने की ताकत रखती है। भाषा किसी भी राष्ट्र की संस्कृति व सभ्यता की संवाहिका होती है। हिंदी भाषा भारत की पहचान है, भारतवर्ष एक ऐसी खूबसूरत बगिया है जिसमें जाति, धर्म, भाषा और संप्रदाय रूपी विविधता से परिपूर्ण फूलों का समावेश है।

इस विविधता से युक्त बगिया की आत्मा उसकी हिंदी भाषा है, जो सबके साथ सामंजस्य बिठाकर उन्हें एकता के सूत्र में पिरोने का काम करती है। हिंदी भाषा की सात्मीकरण की प्रवृत्ति हर परिवर्तन और बदलाव को बड़ी उदारता के साथ स्वीकार करती है। हिंदी में विविध भाषाओं के शब्दों का समावेशीकरण उसकी ऊर्जा को द्विगुणित कर देता है। हिंदी साहित्य की समृद्ध परंपरा जहां इसकी पहचान है वही उसके स्वरूप को विश्व-व्यापी बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। हिंदी के उत्कृष्ट कवि, रचनाकारों व अन्य विशिष्ट व्यक्तियों ने अपनी लेखनी व भावाभिव्यक्ति के माध्यम से अपनी साहित्य व हिंदी भाषा को एक नई पहचान प्रदान की है। कबीर, रहीम, तुलसी, जायसी, रसखान, रामचंद्र शुक्ल, विवेकानंद, रविंद्र नाथ टैगोर, दयानंद सरस्वती, महात्मा गांधी जैसे लोगों ने विश्व को भारतीय संस्कृति कला, दर्शन, धर्म आदि के द्वारा भारतीयता के दर्शन हिंदी भाषा के माध्यम से ही करवाए। भारतीयता के दर्शन कराने में हिंदी में कभी एकांगी यात्रा नहीं की है। क्षेत्रीय नाटकों, उपन्यासों व काव्य का हिंदी अनुवाद उसे पूरे विश्व का साहित्य बना देता है, हिंदी भाषा का दायरा यदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह भारत तक सीमित ने रहकर विश्व-पटल पर छाने लगा है। हिंदी के प्रसिद्ध कथाकार हिमांशु जोशी का कथन अवलोकनीय है।<sup>1</sup>

“विश्व में ज्यों-ज्यों हिंदी का विस्तार हो रहा है, त्यों-त्यों उसके साहित्य का वैश्विक स्वरूप उभरता चला जा रहा है, आज हिंदी भारत तक ही सीमित नहीं, भारत की सीमाओं से बाहर-दूर-दूर के देशों में भी उसकी अलग पहचान बन रही है।”<sup>2</sup>

हिंदी भाषा इस वैश्वीकरण के दौर में विभिन्न माध्यमों से अपने नवीन स्वरूप को गढ़ रही है। चाहे साहित्य के क्षेत्र से लेकर अनुवाद, प्रिंट मीडिया, इंटरनेट, पत्रकारिता, बाजारीकरण व खेलों की दुनिया के माध्यम से अपनी महत्ता को प्रतिपादित कर रही है। हिंदी के स्वरूप को विश्व पटल पर देखे तो यह भारत के पड़ोसी देशों से लेकर खाड़ी देशों व अन्य महाद्वीपों में भी उसको देखा जा सकता है।

‘सन् 1997 में सेंसस ऑफ इंडिया के केंद्रीय हिंदी संस्थान के तत्कालीन निदेशक प्रोफेसर महावीर सरन जैन द्वारा भेजी गई रिपोर्ट द्वारा यह आज निर्विवादित सत्य है की मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से चीनी के बाद हिंदी का दूसरा स्थान है, लेकिन बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से हिंदी भाषियों की संख्या चीनी संख्या से अधिक है। भाषा के व्यवहार और प्रयोग की दृष्टि से हिंदी का स्थान अंग्रेजी के बाद दूसरे स्थान पर है।’<sup>3</sup>

हिंदी भाषा विश्व पटल पर भावाभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम बन गई है। इसकी अभिव्यक्ति जीवन के विविध क्षेत्रों में व्यावहारिक दृष्टि से या फिर शिक्षक व शिक्षण के माध्यम से अबाध गति से हो रही है। भारतीय मूल के अप्रवासी नागरिक जो विभिन्न देशों में जाकर अपनी भाषा व संस्कृति का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं, भारत के पड़ोसी देश हो चाहे सुदूर स्थित देशों में वे अपनी मातृभाषा हिंदी की अलख को लाए हुए हैं। हिंदी के स्वरूप को वैश्वीकरण में जिन व्यक्तियों का योगदान सबसे अधिक है उनको तीन वर्गों में बांटा जा सकता है, प्रथम वर्ग में वे लोग आते हैं जो 19वीं शताब्दी में मॉरीशस, फिजी, सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद जाकर रच-बस गए। उन्होंने वहां रहकर हिंदी भाषा के विकास में अपना योगदान दिया। वहां रहकर उन्होंने प्रवासी हिंदी साहित्य का सृजन किया। अभिमन्यु अनत (मॉरिशस) जिन्हें ‘मॉरिशस का उपन्यास सम्राट’ कहा जाता है और उनकी रचना ‘लाल पसीना’ कालजयी महाकाव्यात्मक उपन्यास है। इनके अतिरिक्त गुलशन गंगाधर सिंह, सुखलाल इत्यादि ने मॉरीशस से हिंदी साहित्य का सृजन किया। वहीं फिजी से ‘आलोक शर्मा’ जैनन प्रसाद, त्रिनिदाद से ‘आशा मोर’

प्रमुख रहे।

दूसरे वर्ग के अंतर्गत भारत के पड़ोसी देशों यथा नेपाल, बांग्लादेश, पाकिस्तान, भूटान, श्रीलंका, म्यांमार में रहने वाले भारतवंशियों ने साहित्य सृजन किया।

तीसरे वर्ग में अन्य महाद्वीपों के देश है, जहां हिंदी भाषा का अध्ययन व अध्यापन के साथ साहित्य सृजन किया जा रहा है। जिसमें मुख्य रूप से अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको, ब्रिटेन, जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया, जापान, रूस, दक्षिण अफ्रीका, बेल्जियम, आस्ट्रिया, उज्बेकिस्तान आदि प्रमुख है। विश्व के लगभग 100 से भी अधिक देशों में हिंदी भाषा का अध्ययन – अध्यापन व साहित्य सृजन हो रहा है। तेजेंदर शर्मा (ब्रिटेन), अचला शर्मा (अमेरिका) उषा प्रियवंदा, सुषम बेदी, अंजना सधीर, अखिलेश सिन्हा, प्रभा कुमार इत्यादि साहित्यकारों के नाम गिनवाए जा सकते हैं, जिन्होंने विदेशों में भी हिंदी साहित्य सृजन का कार्य जारी रखा है।

जून 2003 ईसवी में सूरीनाम में हुए सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन में कमल किशोर गोयनका ने 'विश्व हिंदी रचना' नामक पुस्तिका का प्रकाशन कर प्रथम बार प्रवासी साहित्य का संकलन प्रस्तुत किया। गोयनका ने विदेश में हो रहे हिंदी साहित्य सृजन के बारे में अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए कहा कि – 'प्रवासी हिंदी साहित्य वास्तव में एक साहित्यिक सेतु है जो अपनी मातृ-भूमि से तथा भारतीयों के प्रवास में गए अपने भाई – बहनों से जोड़ता है।'

यदि हिंदी भाषा के शिक्षण के संदर्भ में वैश्वीकरण की चर्चा करें तो 100 से भी अधिक देशों के विश्वविद्यालय व विद्यालयों में पठन-पाठन का कार्य किया जा रहा है। अमेरिका में हिंदी भाषा की शिक्षण सामग्री वार्तालाप, शब्दकोश, हिंदी व्याकरण तथा हिंदी भाषा के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के संबंध में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। 1945 ईस्वी में अमेरिकन काउंसिल ऑफ लेनेरडो सोसाइटी वाशिंगटन ने हैनिंग्स वाल्ड कृत 'स्पोकन हिंदुस्तानी' को दो खण्डों में प्रकाशित करवाया। इसी प्रकार सन् 1966 में कार्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस न्यूयॉर्क द्वारा फेरअबैंकज तथा डॉ. मिश्रा के संयुक्त लेखन के तौर पर 'स्पोकन एंड रिटिन हिंदी' को प्रकाशित करवाया गया। ब्रिटेन में हिंदी प्रशिक्षण के लिए मैक ग्रेगर के संपादन में हिंदी भाषा को सीखने के लिए सन् 1970 में 'एक्सरसाइजेज इन स्पोकन हिंदी' नामक शीर्षक से एक पाठ्यक्रम तैयार किया गया। विदेशी तथा हिंदी भाषी असंख्य विद्वान व रचनाकार विदेशों में हिंदी के स्वरूप को वैश्विक दृष्टिकोण से युक्त बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

हिंदी साहित्य को विश्व मंच पर प्रतिष्ठित करने के कार्य में अनुवाद का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिंदी भाषा के साहित्य का अनेक विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी किया गया है। जो हिंदी साहित्य के विश्व व्यापी स्वरूप की अभिव्यक्ति प्रदान करता है। मुंशी प्रेमचंद की रचना 'गोदान' व जैनेंद्र कुमार की 'निर्मला' रचना का बल्गेरियन भाषा में अनुवाद हो चुका है, इस प्रकार रोमेनियन भाषा में 'गोदान' और 'मैला आंचल' का भी अनुवाद हो चुके हैं।

'रामचरितमानस', 'सूरसागर', 'पद्मावत', 'ढोला मारू रा दूहा— का अनुवाद फ्रेंच भाषा में किया गया है, ऐसे ही अनेक हिंदी के रचनाकारों की रचनाओं का विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। यह हिंदी के स्वरूप को विश्व-पटल पर स्वीकृत के ही प्रमाण है।

## डिजिटल साहित्य :

हिंदी साहित्य के वैश्वीकरण में आधुनिक तकनीक व जनसंचार के माध्यमों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, ऑनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से हिंदी का साहित्य प्रचुर मात्रा में लिखा जा रहा है। यू-ट्यूब, फेसबुक, ब्लॉगर इत्यादि माध्यमों से हिंदी के वैश्वीकरण में उल्लेखनीय योगदान रहा है।

डिजिटल युग में हिंदी साहित्य विभिन्न माध्यमों के जरिए अपने पाठकों तक पहुंच बना रहा है, नव लेखकों के लिए डिजिटल प्लेटफार्म पर 'प्रतिलिपि', 'कथा-कहो' जैसे मंच उपलब्ध है। व्यक्तिगत साहित्यिक अभिव्यक्ति के लिए 'ब्लॉगर' व 'वर्डप्रेस' कारगर साबित हो रहे हैं। वहीं त्वरित अभिव्यक्ति और संवाद के लिए 'सोशल मीडिया' प्लेटफॉर्म जैसे 'फेसबुक', 'इंस्टाग्राम' भी साहित्य के नए स्वरूप को अभिव्यक्त कर रहा है। वैश्विक पहुंच के लिए ई-पुस्तकें जैसे किंडल, गूगल पुस्तकें आदि ने भी हिंदी के स्वरूप को वैश्वीकरण करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। सहज उपयोग के लिए मोबाइल ऐप भी साहित्य के विस्तार में अग्रणी साबित हो रहा है।

इसके अतिरिक्त हिंदी साहित्य से संबंधित बहुत सी वेब-पत्रिकाएं भी साइबर संसार में उपलब्ध हैं। 22 सितंबर, 1999 को जन-जन के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के घोष के साथ विश्व के पहले हिंदी 'वेब पोर्टल' के रूप में 'वेब दुनिया' की शुरुआत हुई। आज भी इस पोर्टल पर 35 से अधिक चैनल उपलब्ध है। जिसके माध्यम से असंख्य हिंदी पाठक जुड़े हुए हैं जो हिंदी साहित्य के लिए नई उपलब्धि है।

हिंदी साहित्य से संबंधित मौजूद ऑनलाइन प्लेटफार्म पर उपलब्ध पत्रिकाओं का ब्यौरा इस प्रकार है –

1. [www.webdunia.com](http://www.webdunia.com)
2. [www.rachnakar.com](http://www.rachnakar.com)
3. [www.Hindi.samay.com](http://www.Hindi.samay.com)
4. [www.Laghu.Katha.com](http://www.Laghu.Katha.com)
5. [www.Hindi.pratilipi.com](http://www.Hindi.pratilipi.com)
6. [www.Hindi.nest.com](http://www.Hindi.nest.com)
7. [www.shabdankan.com](http://www.shabdankan.com)
8. [www.hastakshar.com](http://www.hastakshar.com)
9. [www.Hindi.kunj.com](http://www.Hindi.kunj.com)
10. [www.poorvabhas.in](http://www.poorvabhas.in)
11. [www.anurodh.net](http://www.anurodh.net)
12. [www.abhivyakti.hindi.org](http://www.abhivyakti.hindi.org)
13. [www.anubhuti.hindi.org](http://www.anubhuti.hindi.org)
14. [www.sahitya.kunj.net](http://www.sahitya.kunj.net)

जैसी पत्रिकाएं हिंदी साहित्य की दुनिया में ऑनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से देश दुनिया के हिंदी भाषी पाठकों को अपने से जोड़े हुए हैं। तथा नवागंतुक रचनाकारों को अपनी भावाभिव्यक्ति का मंच भी प्रदान कर रही है। हिंदी साहित्य के लिए सूचना प्रौद्योगिकी एक क्रांतिकारी बदलाव लेकर आई। पहले जहां हिंदी के पाठक

मुद्रण माध्यमों से धीरे-धीरे ज्ञान पिपासा को शांत कर रहे थे। वही उन्होंने अपनी तकनीक माध्यमों के द्वारा आधुनिक दौर के सुलभ माध्यमों के जरिए हिंदी साहित्य के संसार से अवगत हो रहे हैं। हिंदी साहित्य की पहुंच को सीमित दायरे से निकालकर विश्वव्यापी बनाया। अब पाठक दुनिया के किसी भी कोने में बैठकर हिंदी साहित्य का आनंद ले सकते हैं।

### निष्कर्ष :-

वैश्वीकरण ने हिंदी साहित्य के स्वरूप को गहराई से प्रभावित किया है और उसे एक व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ प्रदान किया है। समकालीन हिंदी साहित्य में अब केवल स्थानीय जीवनानुभवों का चित्रण नहीं मिलता, बल्कि बाजारवाद, उपभोक्तावाद, तकनीकी विकास, श्रम प्रवासन, सांस्कृतिक विस्थापन और पहचान-संकट जैसे वैश्विक मुद्दे भी प्रमुखता से उभरकर सामने आए हैं। इन विषयों ने साहित्य को नए यथार्थ से जोड़ा है, किंतु साथ ही मानवीय संवेदना और नैतिक मूल्यों के क्षरण का प्रश्न भी उपस्थित किया है।

भाषा और शिल्प के स्तर पर वैश्वीकरण ने हिंदी साहित्य को अधिक संप्रेषणीय और बहुआयामी बनाया है। नए शब्दों, मिश्रित भाषिक प्रयोगों और नवीन अभिव्यक्ति-शैलियों के माध्यम से साहित्य ने समकालीन जीवन की जटिलताओं को पकड़ने का प्रयास किया है। इसके साथ ही यह चिंता भी बनी हुई है कि कहीं भाषा की मौलिकता और सांस्कृतिक पहचान कमजोर न पड़ जाए।

रचनाकार की चेतना में भी परिवर्तन दिखाई देता है। हिंदी लेखक अब केवल स्थानीय यथार्थ तक सीमित न रहकर वैश्विक अनुभवों से संवाद करता है और उन्हें अपनी रचना में समाहित करता है। इस प्रकार हिंदी साहित्य वैश्वीकरण का न तो अंधानुकरण करता है और न ही पूर्ण विरोध, बल्कि आलोचनात्मक दृष्टि के साथ उसे आत्मसात करते हुए अपनी मानवीय और सांस्कृतिक संवेदनाओं को सुरक्षित रखने का प्रयास करता है।

### संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विश्व पटल पर उभरता हिंदी साहित्य—हिमांशु जोशी (लेख), चेतना का आत्म संघर्ष व हिंदी की 21वीं सदी—संपादक कन्हैया लाल नंदन, पृष्ठ 59
2. जगदीश नारायण राय, 2004, अगस्त-सितंबर, दिल्ली, पृष्ठ 56
3. कमल किशोर गोयनका संपादक 2003, विश्व हिंदी रचना, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, इंद्रप्रस्थ स्टेट, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण पृष्ठ XIV।



## हिंदी भाषा का वैश्विक प्रभाव

श्रीमती सुनील कुमारी

सहायक प्राध्यापिका हिंदी, राजकीय महाविद्यालय आदमपुर।

### प्रस्तावना -

हिंदी शब्द की उत्पत्ति फारसी भाषा के सिंधु शब्द से मानी जाती है। ईरान से आने वाले विदेशी हमारे देश को सिंधु नदी का देश कहते थे और यहां के रहने वालों को सिंधु देश का निवासी। ईरानी सिंधु शब्द को हिंदू बोलते थे। हिंदू से हिंद बना और फिर हिंद में ई प्रत्यय लगने से हिंदी शब्द बना। हिंदी भाषा को संपूर्ण भारत में बोली जाने वाली भाषा तो नहीं कहेंगे परंतु भारत के अधिकांश क्षेत्र के लोग इस भाषा को बोल या समझ सकते हैं। हिंदी भाषा किसी एक क्षेत्र की बोली या भाषा नहीं है बल्कि यह पांच उपभाषाओं और अठारह बोलियों का समूह है जो विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाती है। संविधान के द्वारा हिंदी भाषा को हमारे देश की राजभाषा घोषित किया गया है। राजभाषा के साथ-साथ यह हमारे देश की राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा, संचार व माध्यम भाषा के रूप में भी कार्य कर रही है। आज हिंदी भाषा विश्व के लगभग 180 देशों में बोली व समझी जा रही है। भारतीय प्रवासन के कारण, अमेरिका, कनाडा, यूके, जर्मनी, न्यूजीलैंड जैसे देशों में हिंदी बोलने वाले समुदायों की संख्या बहुत बढ़ चुकी है। भारत के अलावा फिजी की आधिकारिक भाषाओं में 'फिजियन हिंदी' शामिल है। दुनिया भर के 200 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा पढ़ाई जाती है। दुनिया भर में लगभग 80 करोड़ से अधिक लोग हिंदी बोलते, लिखते और समझते हैं। हमारे देश के उत्तरी भाग की यह भाषा आज अपनी वैश्विक पहचान बना चुकी है। हिंदी भाषा की वैश्विक पहचान की कहानी बहुत लंबी है। संविधान के अनुच्छेद 351 में भी हिंदी के प्रसार के लिए कहा गया है कि वह भारत की सामाजिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बने। इसके लिए उसके सरल और सुबोध प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। भारत सरकार और भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह राजभाषा हिंदी के ऐसे स्वरूप का विकास करें जो सम्पूर्ण देश में प्रयुक्त हो सके और भारत की मिली जुली संस्कृति की अभिव्यक्ति की वाहिका बन सके।

**कुंजी-शब्द** - हिंदी भाषा, वैश्विक प्रसार, माध्यम भाषा, भाषा समूह, संविधान, राजभाषा, संस्थाएं, सम्मेलन, अहिंदीभाषी, संस्कृति, अभिव्यक्ति।

### हिंदी भाषा की पृष्ठभूमि व विशाल क्षेत्र -

हिंदी भाषा विश्व के लगभग 180 देशों में बोली और समझी जाती है, जिसमें से लगभग 25 से अधिक देशों में हिंदी भाषियों की महत्वपूर्ण संख्या मौजूद है। हिंदी विश्व में तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। हिंदी भाषा भारत के साथ-साथ बांग्लादेश, नेपाल, फिजी, मॉरीशस, गयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाद व टोबैगो,

दक्षिण अफ्रीका, सिंगापुर, अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में काफी विस्तृत है। वर्तमान में भारत सरकार द्वारा समय-समय पर अलग-अलग जगह हिंदी विश्व दिवस जैसे अनेकों कार्यक्रम करवा कर हिंदी भाषा को विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाने का काम किया जा रहा है।

हिंदी भाषा के इतिहास के बारे में विद्वानों का मत है कि हिंदी शब्द की सर्जना भारतीय न होकर विदेशी है। इसके पीछे कारण यह है कि ईरान से आने वाले विदेशी भारत को सिंधु नदी का देश कहते थे और भारत के निवासियों को सिंधु देश का निवासी। ईरानी लोग सिंधु शब्द को हिंदू बोलते थे और भारत को हिंद देश यानि सिंधु का देश। इसी प्रकार उन्होंने हिंद देश की भाषा को हिंद शब्द में 'ई' प्रत्यय लगाकर हिंदी कहा। आगे चलकर यही हिंदी शब्द 'हिंद की भाषा' के लिए प्रयोग होने लगा। इस क्रमिक विकास को हम इस प्रकार समझ सकते हैं—

क. क्रमशः विकास— सिंधु— हिंदू— हिंदई— हिंदी

ख. हिंदी शब्द मूलतः हिंदी भाषा का न होकर, फारसी का है।

ग. हिंदी शब्द के दो अर्थ हैं— हिंद देश का निवासी और हिंद की भाषा।

परंतु अब सिर्फ हम हिंदी भाषा को संपूर्ण भारत की भाषा नहीं कह सकते हैं क्योंकि हिंदी भाषा के साथ-साथ पंजाबी, मराठी, बंगाली, तमिल, तेलुगू, मलयालम, मणिपुरी आदि अनेक भाषाएं वर्तमान में भारत में अलग-अलग क्षेत्र में बोली जाती हैं। और भारत के निवासियों को भी अब कोई हिंदी कहकर नहीं पुकारता है बल्कि यहां के निवासियों को भारतवासी, हिंदुस्तानी आदि कहा जाता है। भारत में अनेक भाषाओं का प्रचलन होते हुए भी हिंदी का अपना एक विशाल क्षेत्र है हिंदी भारत के अधिकांश क्षेत्र में बोली या समझी जाती है।

हिंदी भाषा भी अपने आप में कोई एक क्षेत्रीय भाषा नहीं है बल्कि हिंदी भाषा एक भाषासमूह का नाम है। इसकी अपनी पांच उपभाषाएं हैं और इन पांच उपभाषाओं में 18 बोलियां शामिल हैं, जिनकी सूची इस प्रकार है :—

	उपभाषा	बोली
1.	पश्चिमी हिंदी	1. खड़ी बोली 2. ब्रजभाषा 3. बुंदेली 4. हरियाणवी 5. कन्नौजी
2.	पूर्वी हिंदी	1. अवधी 2. बघेली 3. छत्तीसगढ़ी
3.	राजस्थानी	1. मारवाड़ी 2. जयपुरी 3. मेवाती 4. मालवी

- |    |        |                         |
|----|--------|-------------------------|
| 4. | पहाड़ी | 1. गढ़वाली              |
|    |        | 2. कुमायूनी             |
|    |        | 3. मंडियाली             |
| 5. | बिहारी | 1. मैथिली               |
|    |        | 2. मगही                 |
|    |        | 3. भोजपुरी <sup>1</sup> |

हिंदी की 18 बोलियां भारत के विभिन्न क्षेत्रों के साथ-साथ विश्व के भी अनेक क्षेत्रों में बोली व समझी जाती है। हिंदी की इन 18 बोलियों में से अवधी, ब्रज भाषा और खड़ी बोली को तो हिंदी साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हिंदी की खड़ी बोली ही आज मानक भाषा हिंदी के रूप में प्रसिद्ध है। यही खड़ी बोली भारत की राजभाषा के रूप में काम कर रही है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 में कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।

#### **भारतीय संविधान में हिंदी भाषा की स्थिति :-**

डॉ० डी०डी० बसु ने अपनी पुस्तक 'भारत का संविधान एक परिचय' में भारतीय संविधान में हिंदी भाषा की स्थिति के बारे में लिखा है कि 'संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी (अनुच्छेद 343)'।<sup>2</sup>

हिंदी भाषा के संवर्धन के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में स्पष्ट लिखा गया है कि 'हिंदी का इस प्रकार विकास किया जाए कि वह भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसके सरल और सुबोध प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।'<sup>3</sup>

संविधान में हिंदीतर भाषी लोगों में हिंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए विशेष कर अपने कर्मचारियों को हिंदी भाषा के प्रयोग को प्रोत्साहित करने के लिए भी स्पष्ट निर्देश दिए गए हैं। भारतीय संविधान में हिंदी राजभाषा के बारे में जो कुछ भी लिखा गया है या निर्देश दिए गए हैं, वह हिंदी भाषा के संवर्धन के लिए हैं। इन निर्देशों में से एक यह भी है कि हिंदी भाषा की मूल प्रवृत्ति से छेड़छाड़ किए बिना हिंदुस्तानी के और भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में जो भी अन्य भाषाएं हैं उनके रूप, शैली और पदों का प्रयोग करते हुए तथापि संस्कृत भाषा को सर्वाधिक महत्व देते हुए हिंदी भाषा को समृद्ध किया जाए। ताकि हिंदी भाषा को भारतीय संस्कृति का एक सशक्त माध्यम बनाया जा सके। इस प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में हिंदी भाषा के विकसित और सभी भारतीय भाषाओं के मिश्रित रूप की परिकल्पना की गई है।

#### **हिंदी भाषा के प्रसार के लिए प्रयास :-**

हिंदी भाषा को संयुक्त राष्ट्र (UN) की भाषाओं में स्थान तो मिला है, परन्तु UNO आधिकारिक भाषा (अरबी, चीनी, अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, स्पेनिश) के रूप में नहीं, बल्कि गैर-आधिकारिक भाषाओं में शामिल किया गया है, UN के कार्यों के संचार में हिंदी भाषा का प्रयोग बढ़ रहा है। UN महासभा ने जो प्रस्ताव पारित किया है उसमें हिंदी भाषा के साथ-साथ कई अन्य भाषाओं में UNO के महत्वपूर्ण संचार और संदेशों के प्रसार को प्रोत्साहित किया गया है, और भारत सरकार के प्रयासों से 'हिंदी/UN' परियोजना के तहत हिंदी में UN के संदेशों को उपलब्ध कराया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्तावों में हिंदी भाषा के प्रयोग को बढ़ावा दिया गया है। UN के सोशल मीडिया मंच पर हिंदी भाषा में पोस्ट होते हैं और हिंदी भाषा में एक समाचार वेबसाइट

भी बनी हुई है। UNO के मंच पर श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 1977 में पहली बार हिंदी भाषा में अपना भाषण दिया और 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस भी मनाया जाता है।

हिंदी भाषा को UN की भाषाओं में शामिल करने के कारण इसका महत्व बढ़ रहा है, लेकिन इसको अभी तक UN की छह आधिकारिक भाषाओं में शामिल नहीं किया गया है। हिंदी भाषा को वैश्विक मंच तक पहुंचाने के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों महत्वपूर्ण प्रयास किए गए हैं जो इस प्रकार हैं :-

**1. देश-विदेश में हिंदी व नागरी से संबंधित कार्यरत संस्थाएं :-**

- 1.1 नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1893 ई०
- 1.2 हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1910 ई०
- 1.3 दक्षिणी- भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास, 1918 ई०
- 1.4 राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, 1936ई०
- 1.5 केन्द्रीय हिंदी समिति, नई दिल्ली, 1967

**1.6 शिक्षा मंत्रालय के अधीन संस्थाएं :**

- 1.6.1. साहित्य अकादमी, 1954
- 1.6.2. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
- 1.6.3. महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
- 1.6.4. राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (अब केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय का हिस्सा)
- 1.6.5. श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ।
- 1.6.6. केन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान।
- 1.6.7. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद।
- 1.6.8. केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड।
- 1.6.9. उच्च शिक्षा विभाग।
- 1.6.10. नेशनल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली, 1957
- 1.6.11. केन्द्रीय हिंदी निदेशालय नई दिल्ली, 1960

**1.7. गृह मंत्रालय के अधीन संस्थाएं -**

- 1.7.1. राजभाषा विधायी 1965-75
- 1.7.2. केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, 1971
- 1.7.3. राजभाषा विभाग, 1975

**1.8. सूचना व प्रसारण मंत्रालय के अधीन :-**

- 1.8.1. प्रकाशन विभाग, 1944
- 1.8.2. फिल्म प्रभाग, 1948
- 1.8.3. पत्र सूचना कार्यालय, 1956
- 1.8.4. आकाशवाणी, 1957
- 1.8.5. दूरदर्शन, 1976

## 1.9. विदेशों में हिंदी भाषा को बढ़ावा देने वाली संस्थाएं :-

- 1.9.1. विदेश मंत्रालय
- 1.9.2. केंद्रीय हिंदी संस्थान
- 1.9.3. भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद
- 1.9.4. विश्व हिंदी सचिवालय
- 1.9.5. भारतीय दूतावास
- 1.9.6. वागीश अंतर्राष्ट्रीय संस्था (यू.ए.ई.)
- 1.9.7. हिंदी ओलंपियाड फाउंडेशन

इन संस्थाओं के अतिरिक्त देश-विदेश में अनेकों हिंदी समाचार-पत्र, पत्रिकाएं, कवि एवं लेखक हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए कार्यरत हैं। विदेश मंत्रालय तो हिंदी भाषा के संवर्धन के लिए विभिन्न देशों में विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन करवा रहा है। विश्व हिंदी सम्मेलन अब तक कुल 12 बार आयोजित किए जा चुके हैं, जिसकी शुरुआत 10 जनवरी 1975 को नागपुर, भारत से हुई थी। इन सम्मेलनों का मुख्य उद्देश्य हिंदी भाषा का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचार-प्रसार तकरना है। 12वां और सबसे हालिया सम्मेलन फरवरी 2023 में फिजी में आयोजित किया गया था।

### विश्व हिंदी सम्मेलन की सूची (1975-2023)

सम्मेलन	तिथि	स्थान/दिश
प्रथम	10-12 जनवरी, 1975	नागपुर, भारत
द्वितीय	28-30 अगस्त, 1976	पोर्ट लुई, मॉरीशस
तृतीय	28-30 अक्टूबर, 1983	नई दिल्ली, भारत
चतुर्थ	2-4 दिसंबर, 1993	पोर्ट लुई, मॉरीशस
पांचवां	4-8 अप्रैल, 1996	पोर्ट ऑफ स्पेन, ट्रिनिडाड और टोबैगो
छठा	14-18 सितंबर, 1999	लंदन, यू.के.
सातवां	5-9 जून, 2003	पारामारिबो, सूरीनाम
आठवां	13-15 जुलाई, 2007	न्यूयॉर्क, अमेरिका
नौवां	22-24 सितंबर, 2012	जोहान्सबर्ग, दक्षिण अफ्रीका
दसवां	10-12 सितंबर, 2015	भोपाल, भारत
ग्यारहवां	18-20 अगस्त, 2018	पोर्ट लुई, मॉरीशस
बारहवां	15-17 फरवरी, 2023	नाडी, फिजी

पहला विश्व हिंदी सम्मेलन 10 जनवरी 1975 को नागपुर में हुआ, इसलिए 10 जनवरी को हर साल 'विश्व हिंदी दिवस' के रूप में मनाया जाता है। पहले सम्मेलन का उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने किया था। सम्मेलनों का आयोजन विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अन्य देशों के सहयोग से किया जाता है।

## हिंदी भाषा का वैश्विक प्रभाव :-

आज के तकनीकी युग में यह संभव हो गया है कि दुनिया सिमट कर एक छोटा-सा गाँव बन गई है, तब भौगोलिक दूरियाँ और समयावधि के कोई मायने न रखते हुए हिंदी भाषा ने भी दुनिया पर अपनी छाप छोड़ी है। जनसंचार माध्यमों के इस युग में हिंदी भाषा ने अपने पंख फैला लिए हैं। "राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक जनसंचार सेवाओं से शुरू होकर ये माध्यम धीरे-धीरे वैश्विक स्तर पर फैलने लगे। संचार उपग्रहों के अवतरण के बाद विश्व सही माने में एक 'संवर्धित ग्राम' बन गया, जिसमें सूचना-संचार के अलावा राजनय, व्यापार, संस्कृति सभी वैश्विक धरातल पर आ गए हैं।"<sup>5</sup>

हिंदी के वैश्विक प्रभाव की बात करें तो हिंदी को वैश्विक स्तर पर काफी सफलता मिली है। भारत के अलावा नेपाल, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, यूके, पाकिस्तान, श्रीलंका, बर्मा, मारीशस, चीन, जापान, दक्षिणी अफ्रीका आदि अनेक देशों में हिंदी-हरियाणवी फिल्मों-गाने, हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ, हिंदी सोशलमीडिया जैसे यूट्यूब, इंस्टाग्राम, पॉडकास्ट आदि काफी लोकप्रिय हैं। यहाँ तक कि ताशकंद जैसे उज्बेक भाषी शहर में भी एक लंबे अर्से से हिंदी फिल्मी गाने काफी चाव के साथ सुने जाते हैं।

हिंदी भाषा विश्व की तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है, जो प्रचार-प्रसार, व्यवसाय, शैक्षिक और डिजिटल विश्व में अपनी पहचान बना रही है। यह भारत की बढ़ती वैश्विक क्षमता, भारतीय प्रवासियों और प्रौद्योगिकी क्षमता के कारण विश्व के 175 से अधिक देशों में अपनी पहचान बना रही है। 70 करोड़ से ज्यादा लोगों द्वारा समझी व बोली जाने वाली हिंदी भाषा में, मंदारिन और अंग्रेजी के बाद तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। यह विश्व के लगभग 180 देशों में भारतीय समुदायों व सोशल मीडिया के माध्यम से बोली व समझी जाती है। विश्व के 600 से अधिक विश्वविद्यालयों व विद्यालयों में हिंदी भाषा पढ़ाई जा रही है। क्योंकि इस भाषा में भारतीय सांस्कृतिक धरोहर, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और मानवीय मूल्यों का एक समृद्ध साहित्य है। सोशलमीडिया पर हिंदी सामग्री काफी तेजी अपना वर्चस्व बना रही है, इससे हिंदी को ऑनलाइन मंच व ई-कॉमर्स जैसा वर्चुअल संसार मिल रहा है।

इसमें नयी तकनीकों के प्रयोग के कारण भी हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य का दायरा बढ़ रहा है। भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था के कारण, वैश्विक व्यापार में हिंदी एक महत्वपूर्ण भाषा बन रही है। अन्य देशों की कंपनियाँ हिंदी विज्ञापनों माध्यम से भारतीय बाजार से जुड़ रही हैं।

भारत सरकार की विदेश नीति में हिंदी के उपयोग को बढ़ावा मिल रहा है, जिससे यह कूटनीति का भी एक माध्यम बन रही है।

## निष्कर्ष :

हिंदी भाषा अपने साहित्य, भारतीय राजनीति, हिंदी फिल्मों, हिंदी-हरियाणवी गानों, हिंदी यूट्यूब, इंस्टाग्राम, फेसबुक, पॉडकास्ट आदि मंचों के माध्यम से संपूर्ण दुनिया में धूम मचा रही है। हिंदी एक वैज्ञानिक भाषा होने के साथ-साथ सरल भाषा भी है जो भारत को विश्व से जोड़ रही है, और अपनी क्षमताओं के कारण भविष्य में एक प्रमुख भाषा बनने की ताकत रखती है। हिंदी भाषा आज के वैश्विक परिदृश्य में अपनी सरलता,

वैज्ञानिकता, व्यापकता, साहित्यिक धरोहर तथा डिजिटल तकनीकी के कारण पूरी दुनिया को ही एक साथ जोड़ने का काम कर रही है।

**संदर्भ-सूची :**

1. शोध दिशा, श्रीमती सुनील कुमारी, पृ० सं० 111-112, 2016
2. भारत का संविधान –एक परिचय, आचार्य डा. दुर्गा दास बसु, पृ० सं० 407, 2009
3. वही, पृ० सं० 409, 2009
4. भारत में जनसंचार और प्रसारण मीडिया, मधुकर लेले, पृ० सं० 159, 2024
5. इंटरनेट से संग्रहित जानकारी।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 52-55

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य में नारी विमर्श

अक्षय कुमार, पीएच0 डी0 शोधार्थी

डॉ. सुनीता सिंह, शोध निर्देशिका

हिंदी विभाग, ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार।

### सारांश -

वैश्वीकरण का अर्थ है विश्व का एकीकरण। विश्व भर की संस्कृतियां आपस में आदान-प्रदान से घुलती-मिलती हैं। हिंदी साहित्य विश्व में अहम भूमिका निभा रहा है। भारत देश में ऐसे नायाब हीरे, हिंदी साहित्य के शिरोमणि थे, जिन्होंने हिंदी साहित्य को बुलंद किया। हिंदी साहित्य को समृद्ध बनाकर नई पहचान दी। वैश्वीकरण का साहित्य आज उदारीकरण की कोख से जन्म ले रहा है। आज रंगीन दुनिया में सभ्यता के मुखौटे के बीच संस्कृति का अभाव खटक रहा है। नाते रिश्ते में बदलाव का स्वरूप दिख रहा है। वैश्वीकरण ने आर्थिक जगत को प्रभावित करने के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक जगत में अद्भुत बदलाव लाया है।

हिंदी साहित्य में नारी विमर्श जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखने को मिलती हैं। नारी मुक्ति से जुड़े अनेक प्रश्न, उन प्रश्नों से जुड़ी सामाजिक, पारिवारिक एवं आर्थिक बेबसी और उससे उत्पन्न स्त्री की मनः स्थिति का चित्रण अनेक स्तरों पर हुआ है। नारी-विमर्श एक ऐसा विमर्श है जो समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक संरचना को पूर्णतया समाप्त करने की बात करते हुए नारी-पुरुष भेदभाव रहित सामाजिक संरचना की स्थापना करने हेतु अपनी आवाज बुलंद करती है। नारी विमर्श ने ही स्त्रियों के मन में अस्मिता का भाव जागृत किया है। भारतीय नारी विमर्श पुरुष सत्तात्मक समाज का विरोध करता है, न की पुरुषों का। यह विमर्श सामाजिक, आर्थिक शैक्षणिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक समानता आदि का पुरजोर समर्थन करता है।

**मुख्य शब्द :** वैश्वीकरण, नारी-विमर्श, हिंदी-साहित्य, अस्मिता।

वैश्वीकरण एक व्यापक अवधारणा है जो मूलतः आर्थिक एवं राजनीतिक पक्षों पर केंद्रित रहते हुए सामाजिक, प्रशासनिक, साहित्यिक पक्षों को भी प्रभावित करता है। आधुनिक विश्व के सभी समाज, साहित्य, लोक प्रशासन तथा उनकी अर्थव्यवस्था वैश्वीकरण के प्रभाव से अछूती नहीं हैं। वैश्वीकरण, प्राचीन समय से परिवर्तित रही प्रघटना है तथापि इसके प्रभाव आधुनिक युग में अधिक गहराई एवं व्यापकता के साथ सामने आए हैं। वैश्वीकरण का अर्थ है - विश्व का एकीकरण। विश्व भर की संस्कृतियां आपस में आदान-प्रदान से घुलती-मिलती हैं।

भारत में वैश्वीकरण की प्रक्रिया आदिकाल से ही विद्यमान रही है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" (संपूर्ण विश्व एक

परिवार है) जैसा वाक्य, भारतीय वैश्वीकरण को स्पष्ट करता है। भारतीय संस्कृति की विशिष्टता है सबको अपनी गोद में स्थान देना और पाश्चात्य संस्कृति भी इस स्नेह से वंचित नहीं रही है। हमारी संस्कृति है— हमारी धरती, उसे स्पर्श कर लहराते सागर, प्रवाहित नदियां, तरंगित झीलें, सरोवर, गगनचुंबी शैल श्रेणियां, सघन वन्यकुंज, खनिज संपदा और देश की भूमि पर बसने वाले शिल्पियों, कृषकों, उद्यमियों, विशेषज्ञ विद्वान।

वैश्वीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में नारी विमर्श जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखने को मिलती है। नारी मुक्ति से जुड़े अनेक प्रश्न, उन प्रश्नों से जुड़ी सामाजिक पारिवारिक एवं आर्थिक बेबसी और उससे उत्पन्न नारी की मनःस्थिति का चित्रण अनेक स्तरों पर हुआ है। नारी—विमर्श एक ऐसा विमर्श जो समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक संरचना को पूर्णतया समाप्त करने की बात करते हुए नारी—पुरुष भेदभाव रहित सामाजिक संरचना की स्थापना करने हेतु अपनी आवाज बुलंद करती है।<sup>1</sup> भारतीय नारी—विमर्श पुरुष सत्तात्मक समाज का विरोध करता है, न की पुरुषों का। नारी—विमर्श ने ही स्त्रियों के मन में अस्मिता का भाव जागृत किया है।

### हिंदी साहित्य में नारी-विमर्श :

हिंदी साहित्य में नारी—विमर्श की शुरुआत छायावाद काल से माना जाता है। प्रेमचंद से लेकर आज तक अनेक पुरुष लेखकों ने नारी समस्या को अपना विषय बनाया लेकिन उसे उस रूप में नहीं लिखा जिस रूप में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लिखा है। समाज के दो पहलू स्त्री—पुरुष एक—दूसरे के पूरक है। किसी एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व नहीं है। उसके बाद भी पुरुष समाज ने महिला समाज को अपने बराबर की सामानता से वंचित रखा। यही पक्षपात दृष्टि ने शिक्षित नारियों को आंदोलन करने को मजबूर किया जो आज ज्वलंत मुद्दा नारी—विमर्श के रूप में दृष्टिगोचर है।

आदिकाल से ही नारियों की दशा दयनीय एवं सोचनीय थी। स्त्रियों की दशा को देखकर विवेकानंद कहते थे — “स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई संभावना नहीं है।<sup>2</sup> विवेकानंद जी महिला समाज की वास्तविक दशा से चिंतित, देश एवं समाज की भलाई महिला समाज की तरक्की के बगैर असंभव बताया है।”

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी गद्यकर एवं रघुवीर सहाय जी ने नारी जीवन का वास्तविक चित्र खींचा है, उन्होंने अपने काव्य में स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। जिस भारत में स्त्री वैदिक काल में “यत्र नारयस्तु पूज्यंते तत्र रमंते देवता” कहा जाता था आज वहीं अनेक शोषण का शिकार हो रही है। वह कहते हैं :-

“नारी बेचारी है

पुरुष की मारी

तन से क्षुदित है

लपक कर झपक कर

अंत में चित है।<sup>3</sup>

प्रस्तुत पंक्ति में कविवर सहाय नारी को बेचारी कहकर उसकी दयनीय दशा का वर्णन किया है जो अपने अधिकारों के लिए लड़ नहीं पाती। लेकिन वर्तमान में यह स्थिति परिवर्तित नजर आती है। भारत सरकार ने सन् 2001 को महिलाओं के सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया। अब नारी अपने हर एक अधिकार को लेकर

रहेगी। यही लड़ाई स्त्री-विमर्श या नारी सशक्तिकरण के रूप में परिलक्षित होती है महादेवी वर्मा की 'श्रृंखला की कड़ियां' नारी सशक्तिकरण का सुंदर उदाहरण है।<sup>4</sup> यह रचना भारतीय नारी को मानसिक रूप से स्वतंत्र होने और रूढ़िधियों की कड़ियों को तोड़कर, अपने अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित करती है।

रामधारी सिंह दिनकर की कालजयी कृति 'उर्वशी' में भी कवि ने प्राचीन कथा स्रोतों के माध्यम से आधुनिक नारी की पीड़ा को उजागर किया है। महारानी औशिनरी को जब संदेश मिलता है कि – "पुरुवा उर्वशी गंधमादन पर्वत पर प्रेमलाप में निमग्न है" यह समाचार पाकर रानी दुःखी तो होती है परंतु यह सब सहन करने का निश्चय करती है।<sup>5</sup> पुरुष प्रधान समाज ने नारी समाज को हमेशा अंधकार में जीवन जीने को मजबूर किया है। लेकिन आज की नारी चेतनशील है जिसे अच्छे बुरे का ज्ञान है। नारी अस्तित्व को लेकर अपने-अपने समय पर कई विद्वानों ने चिंता व्यक्त की है, तुलसीदास जी ने "ढोल, गवार, शूद्र, पशु, नारी-सकल ताड़ना के अधिकारी" कहकर नारी को प्रताड़ना के पात्र समझा है तो मैथिली शरण गुप्त जी ने "अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आंचल में है दूध और आंखों में पानी" कहकर नारी की स्थिति पर चिंता व्यक्त की है। प्रसाद ने "नारी तुम केवल श्रद्धा हो" कहा है तो शेक्सपियर ने "दुर्बलता तुम्हारा नाम ही नारी है" आदि कहकर नारी अस्तित्व को संकीर्ण बताया है।

प्राचीन ग्रंथों में भी नारी को नर्क का द्वार, लता के समान आदि से अपमानित किया गया है। नारियों का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है बचपन में पिता के अधीन, युवावस्था में पति के अधीन और वृद्धावस्था में पुत्र के अधीन रहने के अधिकारी है। उसके प्रति हिंसा बरती जाती है। उसे प्रताड़ित किया जाता है, जलाया जाता है, पिटा जाता है और उसकी हत्या कर दी जाती है।

**“कल ही बारात आई थी**

**दुल्हन मुस्कराई थी**

**पिया के मन भाई थी**

**सवरे अस्पताल में पाई थी**

**अधजली नजर आई थी**

**दुनिया से विदाई थी**

**लेकिन यह सच्चाई थी**

**वह दहेज नहीं लाई थी।”**

दहेज को लेकर नारी को जला देना या हत्या कर देना आज के युग की सबसे बड़ी त्रासदी है। नारी की दशाओं पर अनेक समाज सुधारकों ने चिंता व्यक्त की और यथासंभव दूर करने का प्रयास भी किया। जिससे नारी की स्थिति में परिवर्तन हुआ ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशन तथा अनेक सरकारी संगठनों ने नारी विमर्श पर जोर दिया, जिसका सकारात्मक परिणाम आया। नारी वस्तुतः स्वाधीनता के बाद की संकल्पना है। नारी के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ संघर्ष है। डॉक्टर संदीप रणभिरकर के शब्दों में – "नारी-विमर्श नारी के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है। सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति नारी चेतन ने ही नारी-विमर्श को जन्म दिया है।"<sup>6</sup>

## निष्कर्ष -

अतः कहा जा सकता है नारी आदिकाल से ही पीड़ित एवं शोषित रही है। पुरुष प्रधान समाज ने मान मर्यादा की आड़ में सदा उसे दबाकर रखना चाहा। कभी घर की इज्जत कहकर तो कभी देवी कहकर चार दीवारों के अंदर कैद रखा। इन्हीं परंपरागत पितृसत्तात्मक बेड़ियों को लांघने की लड़ाई है नारी-विमर्श। इसी विमर्श ने ही नारियों के मन में अस्मिता का भाव जागृत किया। भारतीय नारी-विमर्श पुरुष सत्तात्मक समाज का विरोध करता है, न की पुरुषों का। यह विमर्श सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक समानता आदि का पुरजोर समर्थन करता है।

## संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. भारतीय परिवेश में नारी विमर्श : डॉ० अरजण।
2. आजकल, मार्च 2013, पृष्ठ संख्या-20
3. पंचशील, शोध समीक्षा, पृष्ठ संख्या-82
4. महादेवी वर्मा - श्रृंखला की कड़ियां, लोक भारतीय प्रकाशन।
5. उर्वशी - रामधारी सिंह दिनकर।
6. पंचशील, शोध समीक्षा, पृष्ठ संख्या-87



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 56-60

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## हनुमानगढ़ जिले के भू आवरण के बदलते स्वरूप पर नगरीकरण का प्रभाव : एक भौगोलिक अध्ययन

भीमसेन मालिया, शोधार्थी,

डॉ. सचिन कुमार, शोध निर्देशक,

भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़।

### शोध आलेख सार -

भारतीय परिदृश्य में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नगरीयकरण की अवधारणा में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि दृष्टिगोचर होती है। नगरीयकरण सामाजिक-आर्थिक विकास की वृहद प्रक्रिया है जिससे औद्योगिक पटल में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं। स्वतंत्रता के पश्चात उद्योगों में निवेश के माध्यम से द्रुतगामी औद्योगिकीकरण ने देश की अर्थव्यवस्था को स्थायीकरण प्रदान किया। औद्योगिकीकरण आधुनिकीकरण का अंग है जो नगरीयकरण को बढ़ावा देता है। औद्योगिकीकरण व नगरीयकरण एक-दूसरे के पर्याय है औद्योगिकीकरण जहां नगरों के विकास में महत्वपूर्ण साधन है तो वहीं नगरों में औद्योगिकीकरण हेतु पर्याप्त सुविधाएं मौजूद होती है। औद्योगिकीकरण उद्योग+करण दो शब्दों के मेल से बना है जिसमें उद्योग से तात्पर्य कारखाने तथा करण से तात्पर्य स्थापित करना है। अतः औद्योगिकीकरण कारखाने स्थापित करने की प्रक्रिया है जिनमें मानव श्रम की अपेक्षा मशीनी श्रम को अधिक महत्व व स्थान प्रदान किया जाता है। औद्योगिकीकरण की इस प्रक्रिया में मशीनी कृत उद्योगों को बहुलता प्रदान की जाती है जिससे कम समय में अधिक उत्पादकता प्राप्त की जा सके।

**मूल शब्द** - भू आवरण, स्वरूप एवं नगरीकरण।

### भूमिका -

**नगरीकरण** : नगरीकरण पिछली सदी और वर्तमान काल की सर्वाधिक घटनाओं में से एक है जिसमें भूमि उपयोग में वैश्विक स्तर पर व्यापक परिवर्तन आये है। नगरीकरण एक सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी क्षेत्र की जनसंख्या का एक बड़ा भाग कस्बों और नगरों में संकेन्द्रित हो जाता है। भारत जैसे विकासशील देश में नगरीकरण वर्तमान शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण घटना है जिसने राष्ट्रीय जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित किया है। विश्व में चीन के बाद दूसरा बड़ा जनसंकुल क्षेत्र होने के नाते भारत के इस तेजी से बढ़ते नगरीकरण का क्षेत्रीय और विश्व व्यापी असर है। भारत की नगरीय जनसंख्या द्वारा विश्व के नगरीय जनसंख्या के एक बड़े भाग का निर्माण किया जाता है। इसका अंदाज इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि विश्व का हर बारहवाँ एवं विकासशील देशों का हर सातवाँ नगरीय क्षेत्रों में रहने वाला व्यक्ति भारतीय है। इसी प्रकार भारत

में उतने छोटे कस्बे (20000–49,999 आबादी के) है, जितने कि संयुक्त राज्य अमेरिका में, उतने मध्यम आकार (50000–99,999) के नगर है जितने कि पूर्व सोवियत संघ में और उतने महानगर (+500,000) है जितने कि आस्ट्रेलिया, फ्रांस एवं ब्राजील में मिलाकर पाये जाते हैं।

नगर के रूप में बस्ती की उत्पत्ति विश्व में सबसे पहले कब और कहाँ हुई? इसके विषय में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, किन्तु अनुमान लगाया जाता है कि नगरीय विशेषताओं वाली बस्ती का उदय आज से 5000 से 6000 वर्ष पूर्व हो गया था। प्राचीन काल में नगरीकरण की गति अत्यंत मंद थी। मानव इतिहास के आरंभिक काल में अर्थव्यवस्था कृषि, पशुपालन, आखेट आदि प्राथमिक क्रियाओं पर आधारित होती थी और कृषि उत्पादन अत्यंत सीमित होने से नगरवासियों के लिए अतिरिक्त उत्पादन बहुत कम होता था। अठारहवीं शताब्दी के औद्योगिक क्रांति के पूर्व तकनीकी पिछड़ेपन के कारण नगरीय विकास के लिए आवश्यक दशाओं—परिवहन के साधनों एवं संचार माध्यमों, औद्योगिक उपकरणों तथा मशीनों, कुशल श्रमिकों, पूँजी, कच्चे माल आदि का अभाव था। अतः उस समय तक औद्योगीकरण के अभाव में अन्य नगरीय क्रियाएं भी पिछड़ी हुई थी जिसके परिणामस्वरूप नगरों का विकास बहुत सीमित क्षेत्रों में और सीमित मात्रा में ही संभव हो सका था। सम्भवतः 3000 ईसा पूर्व तक दक्षिण-पश्चिम एशिया (मेसोपोटामिया) में वास्तविक नगरों का अभ्युदय हो चुका था। इसके पश्चात् प्राचीन मानव सभ्यता के अन्य क्षेत्रों—नील घाटी, सिन्धु घाटी, हवांग हो घाटी, मध्य अमेरिका, दक्षिणी यूरोप (यूनान, इटली आदि) में भी नगरीकरण का आरम्भ हुआ। ईसा पश्चात् प्रथम शताब्दी (100 ई.) तक आस्ट्रेलिया के अतिरिक्त अन्य आवासित महादीपों में नगरीय विकास का आरंभ हो चुका था।

नगरीय भूमि उपयोग में नगर की भूमि का कार्यों के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है। इसमें नगर की भूमि के लम्बवत विस्तार का अध्ययन किया जाता है तथा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि नगर की भूमि का कौन-सा और कितना भाग किस-किस प्रकार के कार्यों में उपयोग किया जाता है। व्यावहारिक तौर पर यह कार्यात्मक आकारिकी का समानार्थी है, जिसमें तीन प्रकार के अध्ययन पर बल दिया जाता है— (क) नगरीय भूमि का कितना भाग किन-किन कार्यों में उपयोग किया जाता है, (ख) उस पर स्थित इमारतें किन-किन कार्यों के उपयोग में लायी जाती हैं, तथा (ग) नगर के भीतर भिन्न-भिन्न कार्यों में कितने व्यक्ति लगे हैं अर्थात् नगर में रहने वाले लोगों की व्यावसायिक संरचना किस प्रकार की है। सामान्यतः नगर के केंद्र से बाहर की ओर सभी दिशाओं में नगरीय भूमि उपयोग में अंतर दिखाई देता है तथा नगरीय विशेषताओं में उत्तरोत्तर ह्रास का आभास मिलता है। इसके अंतर्गत नगर के केंद्र के अति व्यस्त व्यवसायिक भूमि उपयोग से आवासीय और नगर की बाह्य सीमा पर प्राथमिक किस्म के भूमि उपयोग का परिवर्ती प्रतिरूप दृष्टिगोचर होता है। नगर में भूमि का मूल्य भी भूमि उपयोग की तीव्रता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखता है। साधारणतया नगर के केंद्र में भूमि का मूल्य सर्वाधिक होता है तथा जैसे-जैसे हम केंद्र से बाहर की ओर बढ़ते जाते हैं, भूमि-मूल्य उत्तरोत्तर घटता जाता है। नगर में जनसंख्या एवं बस्तियों का घनत्व भी सामान्यतया इसी प्रवणता से प्रभावित होता है।

### जलवायु :

हनुमानगढ़ जिले में उष्ण कटिबंधीय मरुस्थलीय जलवायु दशाएं पायी जाती हैं। इस क्षेत्र में जलवायु की दृष्टि से अत्यधिक विषम भौगोलिक परिस्थितियां विद्यमान हैं। जून के महिने में यहाँ तापमान 40<sup>0</sup> से 50<sup>0</sup> सेल्सियस हो जाना सामान्य बात है। औसत रूप में अधिकतम तापमान 43<sup>0</sup> सेल्सियस होता है। जनवरी माह

में न्यूनतम तापमान 8<sup>0</sup> सेल्सियस तक पहुँच जाता है।

### **नगरीय भूमि उपयोग :**

भारत का भूमि उपयोग प्रतिरूप स्थलाकृति जलवायु मिट्टी, मानव क्रियाओं और प्रौद्योगिक आदानों ऐसे अनेक कारकों को प्रतिफल है। जहाँ अण्डमान एवं निकोबार द्वीपों, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश में अधिक वर्षा के कारण भूमि उपयोग में वनों की प्रधानता पाई जाती है, वहीं राजस्थान एवं गुजरात का एक बड़ा क्षेत्र वर्षा की कमी के कारण कृषि अयोग्य तथा बंजर के रूप में पाया जाता है। इसी प्रकार स्थलाकृति, उपजाऊ मिट्टी एवं जनसंख्या दबाव के कारण गंगा मैदान का अधिकांश भाग कृषि क्षेत्र में परिणित कर लिया गया है जबकि विषम धरातल और अनुपजाऊ मिट्टी के कारण नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में कृषि विकास बाधित होता रहा है।

जनसंख्या के बढ़ते दबाव एवं परिणामस्वरूप खाद्यान्नों की बढ़ती मांग, विकासात्मक गतिविधियों और प्रौद्योगिक उन्नति परिवर्तन देखा गया है। पिछले चार दशकों के दौरान शुद्ध बोये गये क्षेत्र वृद्धि और नब्बे के दशक में इसके सर्वोत्तम स्तर तक पहुँच जाने, बंजर और अकृषित, के क्षेत्र में घटाव, कृषयेत्तर उपयोग के क्षेत्र में वृद्धि, नगरीकरण और औद्योगीकरण के कारण भूमि उपयोग की बढ़ती जटिलता, बहुशस्यन, मिश्रित शस्यन, शस्य विविधता आदि के कारण ग्रामीण भूमि उपयोग का गहनीकरण और लाभोन्मुखी भूमि उपयोग पर जोर देने आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

भारत को 2024 तक पृथ्वी पर सबसे अधिक आबादी वाला देश होने का अनुमान है और 2050 तक अपने वर्तमान 440 मिलियन (संयुक्त राष्ट्र विश्व जनसंख्या संभावनाएं, 2017) में 375 मिलियन शहरी निवासियों को जोड़ने की उम्मीद है।

### **महत्व -**

मानव समुदाय के लिए भूमि एक मूलभूत संसाधन है, किसी क्षेत्र विशेष में भूमि के उपयोग से उस क्षेत्र की मौजूदा पारिस्थितिकी एवं मानव समुदाय के संबंध परिलक्षित होते हैं। वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या एवं औद्योगिकरण तथा बेहतर शिक्षा व रोजगार की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर मानवीय प्रवास के कारण भूमि उपयोग के प्रतिरूप में तीव्र गति से परिवर्तन हुआ है। भू-उपयोग परिवर्तन शहरी क्षेत्र में एक अपरिहार्य घटना बन गयी। भूमि उपयोग परिवर्तन आर्थिक विकास, शहरीकरण तथा सामाजिक बदलाव की ही प्रक्रिया हैं। यह सामाजिक और आर्थिक बदलाव भूमि उपयोग परिवर्तन व भू-रूपान्तरण की ओर ले जाते हैं। विश्व में भूमि भूमि उपयोग में आये बदलाव के लिए शहरीकरण ही विशेष रूप से उत्तरदायी है।

नगरीकरण स्थिर नहीं है, बल्कि गतिशील है। इसकी गति पर अर्थव्यवस्था का प्रभाव पड़ता है। यह अर्थव्यवस्था जितनी तीव्रगति से कृषि अर्थव्यवस्था से औद्योगिक अर्थव्यवस्था की ओर बढ़ती है, उतनी तेजी से नगरीकरण भी बढ़ता है। नगरों की जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ उनकी संख्या में निरंतर वृद्धि होती है। कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का अनुपात भी बढ़ता रहता है। इसलिए यह कहा जाता है कि नगरीकरण एक प्रक्रिया है।

### **उद्देश्य -**

1. हनुमानगढ़ जिले की बढ़ती जनसंख्या एवं नगरीकरण के सम्बन्धों की व्याख्या करना।

2. नगरीकरण एवं भूमि उपयोग में परिवर्तन के कारणों एवं इसके फलस्वरूप उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन करना।

### परिकल्पनाएँ -

1. हनुमानगढ़ जिले में बढ़ते प्रवास से जनसंख्या वृद्धि शहरीकरण प्रक्रम के मूल कारणों में से एक है।
2. भूमि उपयोग में परिवर्तन एवं नगरीकरण प्रक्रिया दोनों एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित है।

### शोध विधि :-

प्रस्तुत शोध में वर्णनात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबंधन अध्ययन के लिए स्रोत के रूप में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्रोत का प्रयोग किया गया है।

### सारांश -

भारत की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है जबकि नगरीय जनसंख्या में भारत के कुल जनसंख्या वृद्धि से भी अधिक गति से वृद्धि हो रही है वही ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्धि दर अपेक्षाकृत कम है। नगरीकरण वह चक्रीय प्रक्रिया है जिसमें कोई राष्ट्र कृषि-सामाजिक व्यवस्था से औद्योगिक-सामाजिक व्यवस्था की ओर बढ़ता है (जी. टी. ट्रिवार्था)। एक तरफ जहां नगरीकरण से देश की सामाजिक-आर्थिक प्रगति में वृद्धि होती है वहीं दूसरी तरफ तीव्र नगरीकरण से अनेक प्रकार की समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं। नगरीय अर्थव्यवस्था के गतिविधियों जैसे- विनिर्माण उद्योग, निर्माण कार्य, व्यापार तथा सेवा आदि गतिविधियों के लिए कम स्थान की आवश्यकता होती है इस कारण कम स्थानों में अधिक लोगों को रोजगार मिलता है और कम स्थान में निवास करने वाले लोगों की संख्या अधिक रहती है। यहां शिक्षा, रोजगार, व्यापार आदि गतिविधियों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा नगरों की ओर जनसंख्या का प्रवाह भी अधिक होता है जिस कारण नगरीय घनत्व अधिक हो जाता है। नगरीय विकास तथा अधिक जनसंख्या के कारण नगरों में अनेक प्रकार की समस्याएं भी उत्पन्न हो जाती है जिसका बहुआयामी प्रभाव लोगों के जीवन पर पड़ता है। जिस नगर का आकार जितना अधिक होता है वहां जल आपूर्ति, यातायात, नगर की सफाई, जैसी अनेक समस्याएं उतनी ही अधिक मात्रा में पायी जाती है। नगरीकरण के द्वारा लोगों के सामाजिक मूल्यों में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई देता है। ग्रामीण क्षेत्रों में जहां सामूहिकता की भावना पायी जाती है वहीं नगरीय क्षेत्र में व्यक्तिवादी भावना अधिक पायी जाती है। नगरीकरण से लोगों में शिक्षा का विस्तार तथा वैज्ञानिक एवं तर्क प्रधान सोच के विकास से अंधविश्वास आदि कम होने लगा है तथा महिलाओं की स्थिति नगरीय क्षेत्रों में अधिक शसक्त है जो आर्थिक रूप से अच्छी होने लगी है। नगरीय विस्तार से समाज के संयुक्त परिवार अब एकल परिवार में परिवर्तित होने लगे हैं। जिस कारण व्यक्तिवादी सोच को बढ़ावा मिल रहा है।

### संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. आर. सी. तिवारी, बी. एन. सिंह (2015) : "कृषि भूगोल" प्रवालिका पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) पेज सं. 75-78.
2. चौहान, टी. एस. (2018) : "राजस्थान का भूगोल", साइंटिफिक पब्लिशर्स (इण्डिया), बीकानेर (राज), पेज नं. 14-19 1.
3. बंसल, एस. सी. (2012) : "मानव भूगोल" मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ (उत्तर प्रदेश)।

4. बंसल सुरेश चन्द्र (2015-16) : "नगरीय भूगोल" मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ (उत्तरप्रदेश), पेज सं.-316-317.
5. तिवारी, आर. सी. (2014) : "अधिवास भूगोल" प्रवालिका पब्लिकेशन्स, 11/10, यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद (यू.पी.).
6. तिवारी, आर. सी. (2015) : "भारत का भूगोल" प्रवालिका पब्लिकेशन्स, 11/10 यूनिवर्सिटी रोड़, इलाहाबाद (यू.पी.)।
7. मौर्य, एस. डी. (2018) : "जनसंख्या भूगोल" शारदा पुस्तक भवन, पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)।
8. मौर्य, एस. डी. (2018) : मानव भूगोल, शारदा पुस्तक भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद (उत्तरप्रदेश).
9. शर्मा, एच. एस. और शर्मा एम. एल. (2019) : 'राजस्थान का भूगोल' पंचशील प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान), पेज संख्या-420-431.



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 61-68

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

---

# Role of Regional Rural Banks in Financial Inclusion : A Case on Uttar Bihar Gramin Bank

**Priti Kumari**

Research Scholar, Department of Commerce,  
B.R.Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur.

**Dr. Niraj Kumar Verma**

Assistant Professor, Department of Commerce,  
S.N.S. College, Muzaffarpur, B.R.Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur.

---

## Abstract :

Regional Rural Banks abbreviated as RRBs are one of the concrete steps taken by government of India in response to widespread poverty in the country. These are specialized institutions to ensure financial inclusion by making availability of financial resources in rural regions of the country. RRBs are in existence for more than four decades which calls for performance evaluation of these institutions. Committee on Deepening of Digital Payments under the chairmanship of Mr.Nandan Nilekani has suggested benchmarks for performance evaluation of Banks in rural and urban regions of the country. The present study is pivotal around performance of Uttar Bihar Gramin Bank abbreviated as UBGB. The Bank has its presence in 18 out of 38 districts of Bihar, headquartered at Muzaffarpur. The Cash in Cash out network along with branch density of the bank has been analysed in light of the suggestions of Committee on Deepening of Digital Payments. The conclusions and recommendations of the study will be helpful to policymakers for framing appropriate policies to overcome the obstacles of financial inclusion.

**Keywords :** Financial, Inclusion, Rural, Cash, Network, Gramin, Bank,

## Introduction :

Regional Rural Banks are one of the most ambitious initiatives by government of India to ensure financial inclusion of rural sectors of the economy. The objective of establishment of RRBs is to provide credit and other facilities especially to the small and marginal farmer, agriculture labours, artisans and entrepreneurs in rural areas. RRBs are authorised to perform all kinds of banking

operations as defined in Banking Regulation Act 1949. RRBs are listed under schedule II of Reserve Bank of India Act 1934 which makes them Indian scheduled commercial banks. Each rural bank is a unique form of cooperative structure since the authorised capital of each Gramin Bank is contributed jointly by Central Government, State Government and sponsoring commercial bank in the ratio of 50:15:35. The first RRB to actually come into existence was Prathama Bank which was established in Moradabad district of Uttar Pradesh in the year 1975.

The historical land of Bihar has two Regional Rural Banks to ensure balanced growth of entire state, Uttar Bihar Gramin Bank and Dakshin Bihar Gramin Bank. These banks are playing catalytic role in financial inclusion of rural masses by widening their cash in cash out network as proposed by the Committee on Deepening of Digital Payments chaired by Mr. Nandan Nilekani.

### **Objectives of Study :**

Regional Rural Banks are in existence for more than four decades. The initial objective of RRBs was to ensure availability of financial products in rural regions of the country i.e. financial inclusion of rural masses. With the emergence of digital era financial inclusion can only be achieved by embracing the rural people with digital mediums of transactions. Thus, the article throws light on the initiatives of RRBs in digitalisation of the rural economy with particular reference to Uttar Bihar Gramin Bank.

### **Hypothesis :**

- **H<sub>0</sub>** : Branch Density of UBGB is  $> 1$  per 5 KM
- **H<sub>1</sub>** : Branch Density of UBGB is  $< 1$  per 5 KM
- **H<sub>0</sub>** : CICO network of UBGB  $> 1$  per 3 KM
- **H<sub>1</sub>** : CICO network of UBGB  $< 1$  per 3 KM

### **Review of Literature :**

Rajak,S.K.(2021) conducted his study on CICO network of Jharkhand Rajya Gramin Bank. He concluded that existing cash in cash out network of JRGB is not sufficient to support financial inclusion of rural masses in Jharkhand. It is recommended to increase the number of bank correspondence in unbanked areas of the state. Mohan,A.R.(2010) conducted his research work in Srikakulum district of Andhra Pradesh. He found out that RRBs in this state are playing a vital role in rural development by providing credit. However, the recovery status of credits is very poor. About 91 percent of total branches of the RRBs are situated in rural areas which is sufficient to ensure balanced development of rural regions. The composition of loans and advances revealed that agricultural sector bagged a major share in total credit in initial years but, of late, non-agricultural sectors claimed the major portion of the total credit. Hafeez, A. (1997) conducted research to evaluate the performance of

RRBs in Agra region of Uttar Pradesh. The researcher found that RRBs in Agra region have served more the upper income group of the society instead of the weaker sections of the society. Prakash,A.(2016) focused around Haryana and revealed that there is lack of banking facilities in Haryana. Still there are many unbanked rural areas. Thus, it is suggested for the RRBs in Haryana to open new branches. Tuli,R.(2019) focused on assessing the awareness of BPL households in Haryana. Most of the respondents had sound knowledge of basic banking facilities. However, the knowledge of mobile banking, internet banking and other digital service was not satisfactory. It was suggested to conduct awareness programs to let BPL households know about the financial products.

### **Research Design :**

The study is based on primary data corresponding to POS terminals and number of Bank Correspondents collected by filing RTI. The secondary data regarding the branch density, ATMs and population have been collected by annual reports of the bank and official website of census of India. Final conclusions have been drawn by comparing the actual scattering of POS outlets, ATMs and branch with the benchmark figures using one sample t-test in SPSS.

### **Regional Rural Banks in Bihar :**

Bihar is state with dominance of rural sectors. More than 85 per cent of total population resides in rural regions of the state according to census 2001 and 2011. Government of India had established a large number of regional rural banks in the state to ensure balanced growth of all the regions. However, considering the recommendations of Vyas Committee (2000) RRBs in Bihar were merged in phased manner. Begusarai Kshetriya Gramin Bank, Bhagalpur-Banka Kshetriya Gramin Bank and Monghyr Kshetriya Gramin Bank were merged together to form Bihar Kshetriya Gramin Bank in the year 2005. Bhojpur-Rohtas Gramin Bank, Magadh Gramin Bank, Nalanda Gramin Bank and Patliputra Gramin Bank were merged to form Madhya Bihar Gramin Bank in the year 2006.

Mithila Kshetriya Gramin Bank, Madhubani Kshetriya Gramin Bank, Champaran Kshetriya Gramin Bank, Vaishali Kshetriya Gramin Bank, Saran Kshetriya Gramin Bank, Gopalganj Kshetriya Gramin Bank and Siwan Kshetriya Gramin Bank were merged to form Uttar Bihar Kshetriya Gramin Bank in the year 2006. Later, in the next phase of amalgamation, Kosi Kshetriya Gramin Bank and Uttar Bihar Kshetriya Gramin Bank were merged to form a single entity Uttar Bihar Gramin Bank in the year 2008. Bihar Kshetriya Gramin Bank and Samastipur Kshetriya Gramin Bank were merged to form Bihar Gramin Bank in the year 2012. Madhya Bihar Gramin Bank and Bihar Gramin Bank were merged to form a single entity Dakshin Bihar Gramin Bank in the year 2019. At present, two regional rural banks are in existence in Bihar, Uttar Bihar Gramin Bank sponsored by Central Bank of India and

Dakshin Bihar Gramin bank sponsored by Punjab National Bank.

### **Uttar Bihar Gramin Bank :**

Uttar Bihar Gramin Bank abbreviated as UBGB, has its presence in the state for more than one and half decades. This calls for review of performance of the bank in achieving its objectives of establishment and its changing role in the present scenario. UBGB has its footprints in 18 out of 38 districts in Bihar headquartered at Muzaffarpur. It has a network of 1031 branches under jurisdiction of 14 regional offices at Araria, Bettiah, Chapra, Darbhanga, Gopalganj, Hajipur, Jhanjharpur, Madhubani, Motihari, Muzaffarpur, Purnia, Saharsa, Sitamarhi and Siwan. Bank is also ensuring financial inclusion of rural masses through a network of 3340 Sunhara Sapna Kendras which are particularly Bank Correspondence who provide doorstep banking services in rural areas of the state. Bank has also established 18 Financial Literacy Centres known as FLCs at 18 districts of the state. In addition to physical expansion, bank has designed various deposit schemes in order to ensure maximum inclusion of rural masses into mainstream of formal banking such as Gramin Super Deposit Scheme, Gramin SWA Shakti flexi recurring deposit scheme, Gramin Lakhpati recurring deposit scheme etc.

### **Cash In Cash Out Network of UBGB :**

CICO network (Nilekani, 2019), which is abbreviated form of cash in cash out network refers to the bundle of services offered by a bank to ease the deposit and withdrawal process and provide basic facilities to its present and potential customers. This concept was popularized by Shri Nandan Nilekani, former chairman, UIDAI, in his report on Deepening of Digital Payments. CICO is primarily combination of three banking facilities, Bank Correspondents (BCs), ATMs, and POS outlets. Committee has recommended that all customers of banks must have access to a financial institution within a radius of 5 km and BCs, ATMs or POS outlets within 3 km radius (Kapur, Reddy, 2020). Bank Correspondents are playing significant role in ensuring financial inclusion of rural communities. The share of BCs in total banking outlets increased from 51 percent in the year 2010 to 91 percent in the year 2019 (Kapur, Reddy, 2020). This increase was due to the guidelines issued by RBI that 25 percent of new banking units must be opened in tier 5 and 6 cities (Gaur, 2020). Traditional Bricks and Mortar branches are not possible due to high cost of operations (Tuli, 2019). BCs are alternative to traditional banking design to ensure a wider coverage of unbanked regions (Bacharaju, 2015). In addition, ATMs and POS outlets can also play a vital role in embracing the rural communities to formal banking stream. The CICO network of Uttar Bihar Gramin Bank is composed of POS terminals and Bank Correspondents. There are 3340 POS terminals and BCs spread across 18 districts of the state as follows,

**Table 1.1 Scattering of Branches and CICO Network of UBGB**

SL	District	Area (KM <sup>2</sup> )	Branch	CICO Network (ATM+POS+BC)	Branch /5 KM	CICO Network/3 KM
1	Kishanganj	1884	23	90	0.06	0.14
2	Araria	2830	30	126	0.05	0.13
3	West Champaran	5228	74	287	0.07	0.16
4	Darbhanga	2279	89	347	0.20	0.46
5	Saran	2641	80	237	0.15	0.27
6	Gopalganj	2033	64	218	0.16	0.32
7	Vaishali	2036	67	183	0.16	0.27
8	Madhubani	3501	115	300	0.16	0.26
9	Madhepura	1787	34	81	0.10	0.14
10	East Champaran	3968	86	207	0.11	0.16
11	Muzaffarpur	3173	90	334	0.14	0.32
12	Purnia	3229	46	141	0.07	0.13
13	Katihar	3056	32	79	0.05	0.08
14	Supaul	2410	31	105	0.06	0.13
15	Saharsa	1702	25	99	0.07	0.17
16	Sheohar	443	15	40	0.17	0.27
17	Sitamarhi	2294	47	199	0.10	0.26
18	Siwan	2219	84	267	0.19	0.36

**Source :** Compiled from various sources.

## Hypothesis Testing and Interpretation :

One sample t-test has been applied on Branch per 5 KM column that produced following output,

Table1.2 One-Sample Test

	Test Value = 1					
	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
					Lower	Upper
Branch_Per_5_KM	-73.101	17	.000	-.88500	-.9105	-.8595

Here, the P value or Sig. value is less than the confidence level of 0.05 which indicates that there is sufficient evidence available to reject the null hypothesis. Negative t- value indicates that the mean of actual findings is less than the hypothesized mean of 1. Thus, the null hypothesis stands rejected and alternate hypothesis stands accepted.

One sample t-test applied on CICO network per 3 KM column produced following output,

Table 1.3 One-Sample Test

	Test Value = 1					
	t	df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
					Lower	Upper
CICO_Network_Per_3_KM	-32.544	17	.000	-.77611	-.8264	-.7258

Here, the P value or Sig. value is again less than the confidence level of 0.05, which state that sufficient evidence is available to reject the null hypothesis. The t value is negative which indicates that the actual mean is less than the hypothesized mean of 1. Thus, null hypothesis is rejected and alternate hypothesis is accepted.

## Findings :

Total geographical area of 18 districts of command area of UBGB is 46713 km<sup>2</sup>. Uttar Bihar Gramin Bank has 3340 POS Outlets & Bank Correspondents and 1032 branches spread across command area. UBGB has either one POS outlet or a Bank Correspondent in each 14 km(approx.) radius. This radius is more than recommended 3 km. The density of CICO network is 0.072 and Branch density of the bank is 0.22, which are unsatisfactory. However, RBI does not recommend establishment of large number of traditional bricks and mortar branches. Thus, branch density cannot be accepted as a measure of bank's performance.

## Conclusions and Recommendations :

Existing CICO network and branch density of Uttar Bihar Gramin Bank is not sufficient to support financial inclusion. However, progress of the bank in this regard is satisfactory. UBGB's initiative to appoint Bank Correspondents known as Sunhara Sapna Kendras is appreciable step toward financial inclusion. It is suggested to establish ATMs in different parts of the state since it is a major component of CICO network. The number of POS outlets in each branch of the bank is also not satisfactory. There is lack of bank correspondents in Katihar, Purnia and Araria districts. UBGB should authorize more BCs in these regions. In this manner, Bank can achieve the requirements of CICO network and ensure rapid financial inclusion of rural areas.

## Bibliography :

- Bacharaju,R.(2015).Effectiveness of financial inclusion through business correspondent model: A Study in Select Telangana Districts. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/313886>
- Gaur,P.(2020). A study of financial inclusion: extent & coverage with reference to Faridabad district. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/326438>
- Hafeez, A.(1997). An evaluation of the performance of regional rural banks in the rural development of Agra region. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/52890>
- Kumar,A.(2018). Performance of regional rural banks (rrbs) in bihar : an analytical study. International Journal of Emerging Technologies and Innovative Research 5(1).
- Kumar,A.(2019). Role of regional rural banks (rrbs) for upliftment in lower society in Muzaffarpur district of Bihar. International Journal of Creative Research Thoughts 7(1)
- Kumar,S.(2014). Role & performance of regional rural banks (RRBs) in Bihar. International journal of applied research 1(1).
- Maheshwari, N.(1993). Regional rural banks and rural development in Madhya Pradesh with particular reference to regional rural banks in Tawa command area. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/34482>
- Mohan, R.A.(2010). Role of regional rural banks in rural development (with reference to Andhra Pradesh grameena vikas bank of Srikakulam district of Andhra Pradesh). Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/8356>
- Prakash, A.(2016). Role of regional rural banks in rural development in Haryana. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/114764>
- Rafique,S.,Manwani,S.(2013). Role of Regional Rural Bank (RRBs) in the Economic

Development of India. International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies,1(7).

- Rajak,S.K.(2021). Role of Regional Rural Banks in Financial Inclusion: A Case Study of Cash In Cash Out Network of Jharkhand Rajya Gramin Bank. Futuristic Journal of Commerce & Management: A Journal of Vinoba Bhave University3 (1).
- Tuli, R.(2019). Opportunities, access and challenges of financial inclusion in India. Retrieved from <http://hdl.handle.net/10603/326487>

**Websites Visited :**

- <https://www.ubgb.in/>
- <https://censusindia.gov.in/>
- <https://www.rbi.org.in/>
- <https://www.thehindubusinessline.com/>
- <https://economictimes.indiatimes.com/>
- <https://financialservices.gov.in/>
- <https://iibf.org.in/>
- <https://rtionline.gov.in/>



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 69-76

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## हिंदी साहित्य में संस्कृति का वैश्विक प्रभाव

सुनीता देवी

सहायक प्राध्यापिका (हिंदी)

राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

### सारांश :

हिंदी साहित्य भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है और इसकी वैश्विक उपस्थिति ने साहित्यिक दृष्टिकोण, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण योगदान दिया है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। यह शोध हिंदी साहित्य में विभिन्न संस्कृतियों के प्रभाव और इसके वैश्विक प्रसार का विश्लेषण करता है। शोध का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि कैसे विदेशी विचार, परंपराएँ और भाषाई प्रवृत्तियाँ हिंदी साहित्य के विषय, शैली और अभिव्यक्ति में समाहित हुईं। अध्ययन में ऐतिहासिक, सामाजिक और साहित्यिक दृष्टिकोणों का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उपनिवेशी दौर, पश्चिमी शिक्षा, धर्म, यात्रा और वैश्विक मीडिया ने हिंदी साहित्य को नई दृष्टि और बहुआयामीता प्रदान की है (अज्ञेय, 1951, हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। विशेष रूप से, उपन्यास, कविता और नाटक में वैश्विक सांस्कृतिक प्रवृत्तियों के संकेत स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, भारतीय प्रवासी समुदायों और डिजिटल माध्यमों के माध्यम से हिंदी साहित्य का प्रसार विश्व स्तर पर हुआ है (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स), जिससे इसे अंतरसांस्कृतिक संवाद और वैश्विक पहचान मिली है।

अंततः यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि हिंदी साहित्य केवल राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह वैश्विक सांस्कृतिक आदान-प्रदान का सक्रिय माध्यम बन चुका है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। वैश्विक प्रभाव न केवल भाषा और शैली को प्रभावित करता है, बल्कि सामाजिक मूल्यों, नैतिक चिंतन और दृष्टिकोणों में भी समन्वय स्थापित करता है। यह अध्ययन हिंदी साहित्य की वैश्विक उपस्थिति और उसकी सांस्कृतिक प्रासंगिकता को समझने के लिए एक आधार प्रस्तुत करता है और भविष्य के शोध के लिए संभावनाओं का संकेत देता है।

**कुंजी शब्द :** हिंदी साहित्य, वैश्विक प्रभाव, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, अंतरसांस्कृतिक संवाद, साहित्यिक प्रवृत्तियाँ, उपनिवेशी प्रभाव, आधुनिक साहित्य।

### 1. प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति का एक प्रमुख रूप है। यह न केवल भाषा और शब्दों का

संग्रह है, बल्कि यह भारतीय समाज के इतिहास, दर्शन, व्यावहारिक जीवन, मानवीय भावनाएँ, सामाजिक चाल चलन और सांस्कृतिक परंपराओं का दर्पण भी है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक हिंदी साहित्य ने समाज के हर स्तर 'धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक' को समाहित किया है। हिंदी साहित्य को समझने का अर्थ है भारतीय इतिहास, संस्कृति और जीवन दृष्टि को समझना।

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में साहित्य का अर्थ केवल राष्ट्रीय संदर्भ तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह वैश्विक विचारों, सामाजिक परिवर्तनों और सांस्कृतिक आदान प्रदान का माध्यम बन गया है (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)। वैश्विक प्रभावों का समावेश न केवल भाषा और शैली पर हुआ है, बल्कि विषयवस्तु, सांस्कृतिक दृष्टिकोण, सामाजिक चेतना और मानवीय अनुभवों पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वैश्विक संदर्भों का हिंदी साहित्य में प्रवेश यह दर्शाता है कि साहित्य के माध्यम से सामाजिक और सांस्कृतिक आदान प्रदान सहजता से संभव है।

यह शोध पत्र इस बात का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है कि किस प्रकार उपनिवेशी काल, पश्चिमी शिक्षा, विदेशी साहित्यिक परंपराएँ, प्रवासी जीवन, वैश्वीकरण और तकनीकी डिजिटल माध्यमों ने हिंदी साहित्य को प्रभावित किया है (अज्ञेय, 1951)। यह विश्लेषण इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि यह स्पष्ट करे कि इन प्रभावों ने हिंदी साहित्य के मूल सांस्कृतिक आत्मा को किस प्रकार समृद्ध किया या परिवर्तित किया है।

शोध में यह भी कहा गया है कि हिंदी साहित्य ने विदेशी विचारों और संस्कृतियों को न केवल आत्मसात किया है, बल्कि उसे भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक अनुभवों में ढालकर एक नई बहुध्रुवीय दृष्टि प्रदान की है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। हिंदी साहित्य आज वैश्विक मंच पर साहित्यिक संवाद का एक सशक्त माध्यम बन चुका है।

## 2. हिंदी साहित्य और भारतीय संस्कृति का सम्बन्ध :

हिंदी साहित्य और भारतीय संस्कृति का संबंध इतिहास और काल के व्यापक प्रसंग में गहराई से जुड़ा हुआ है। भारतीय संस्कृति अपने आप में विविधता, सहिष्णुता, सामूहिकता और आध्यात्मिकता का संगम है। यह अनेक भाषाओं, परंपराओं, धर्मों और सामाजिक परिपाटियों का अनुभव प्रस्तुत करती है। हिंदी साहित्य इसी संस्कृति का दर्पण है और इसमें भारतीय अनुभव की समग्रता प्रतिबिंबित होती है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

### 2.1 प्राचीन काल और संस्कृति :

प्राचीन भारत की संस्कृति में जीवन दृष्टि, लक्ष्य, कर्म, धर्म, न्याय और मोक्ष जैसे दार्शनिक विचारों का प्रमुख स्थान रहा है। वैदिक, उपनिषदिक और पुराणिक ग्रंथों ने भारतीय समाज की धार्मिक और दार्शनिक नींव प्रदान की। "रामायण" और "महाभारत" जैसे महाकाव्य न केवल धार्मिक कथाएँ हैं, बल्कि जीवन के सामाजिक, नैतिक और दार्शनिक आयामों का विस्तृत विवेचन भी प्रस्तुत करते हैं (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। इन महाकाव्यों में वर्णित मानवीय गुण, कर्तव्यपरायणता, संघर्ष, संघर्ष के बाद विजय, जीवन के उद्देश्य और नैतिकता जैसे अनेक विषय हिंदी साहित्य की मूल संरचना में शामिल हैं।

हिंदी साहित्य की प्रारंभिक कविताओं और गाथाओं में भारतीय जीवन के सामाजिक, धार्मिक और

प्राकृतिक अनुभवों का समावेश स्पष्ट दिखाई देता है। यह वह आधार है जिस पर बाद में साहित्यिक विविधताएँ विकसित हुईं।

## 2.2 भक्ति आंदोलन और संस्कृति :

भक्ति आंदोलन (14वीं से 17वीं सदी) हिंदी साहित्य और भारतीय संस्कृति के सम्मिलन का एक प्रमुख चरण था। संतों कवियों जैसे कबीर, तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई आदि ने भक्ति को साधारण जीवन का अभिन्न अंग बनाया और सामाजिक समरसता, भक्ति भाव और मानवीय चेतना को अपने काव्य में स्थान दिया (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। इन संतों ने जाति धर्म की सीमाओं को तोड़ते हुए सामाजिक समानता और आध्यात्मिक अनुभव को हिंदी भाषा में प्रस्तुत किया।

भक्ति कवियों की भाषा सरल, सजीव और जनप्रिय थी, जिससे भारतीय संस्कृति के लोक अनुभव और जीवन के सरल मूल्य पाठकों और श्रोताओं के हृदय में उतर गए। भक्ति काल का साहित्य न केवल आध्यात्मिक जागृति का माध्यम बना, बल्कि यह सामाजिक बदलाव की दिशा में भी एक प्रेरक शक्ति रहा।

## 2.3 मध्यकाल और रीतिकाल :

मध्यकालीन काल में हिंदी साहित्य ने सामाजिक संरचना, राजकीय संस्कृति, वीरता भाव, प्रेम और लोक परंपराओं के बीच संतुलन बनाते हुए एक विस्तृत साहित्यिक परिदृश्य प्रस्तुत किया। रीतिकाल में काव्य का रूप, रस, अलंकार और भाषा की सौंदर्य प्रधानता अधिक स्पष्ट हुई। यह काल भारतीय साहित्य और संस्कृति की कलात्मक अनुभूतियों का समन्वय प्रस्तुत करता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

गीत, गजल, दोहा, चौपाई जैसे विविध रूपों ने संस्कृति और रचनात्मक संवेदना को समृद्ध किया। रीतिकालीन कवियों ने संप्रदायिक संघर्षों, सामाजिक नियमों और सांस्कृतिक नाटकों को अपनी काव्यशैली में प्रकट किया।

## 2.4 आधुनिकता और राष्ट्रीय चेतना :

19वीं सदी में भारत में पश्चिमी शिक्षा, सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय चेतना के कारण साहित्य में परिवर्तन आया। स्वतंत्रता संग्राम का प्रभाव हिंदी साहित्य पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, हरिवंश राय बच्चन जैसे लेखकों ने सामाजिक, राजनीतिक और मानवीय मूल्यों को साहित्य का मुख्य विषय बनाया (प्रेमचंद, 1936, वर्मा, 1939, प्रसाद, 1936)।

हिंदी साहित्य ने सामाजिक न्याय, समानता, स्त्री सशक्तिकरण, मानवाधिकार, राष्ट्रीयता और संस्कृति भावनाओं को प्रमुखता से उठाया। भारतीय संस्कृति की विविधता, लोकजीवन, रीति रिवाज और सामूहिक चेतना हिंदी साहित्य की विशिष्ट पहचान बने।

## 2.5 संस्कृति का समन्वय :

भारतीय संस्कृति का प्रभाव हिंदी साहित्य के हर स्तर पर दिखता है— भक्ति ग्रंथों से लेकर स्वतंत्रता कालीन उपन्यासों, लोकगीतों से लेकर आधुनिक कविता तक। यह संस्कृति केवल धार्मिक या आध्यात्मिक रूप से नहीं, बल्कि सामाजिक, नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से भी साहित्य में व्याप्त है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। संस्कृति और साहित्य का यह समन्वय हिंदी साहित्य को

एक व्यापक और समृद्ध पहचान प्रदान करता है।

### 3. वैश्विक प्रभावों के ऐतिहासिक कारण :

हिंदी साहित्य पर वैश्विक प्रभावों का इतिहास कई कारणों और चरणों में विभाजित किया जा सकता है। इन प्रभावों का आरंभ प्रायः उपनिवेशी काल से माना जाता है, लेकिन इसका विस्तार आधुनिकता, तकनीकी संचार, प्रवासी जीवन और वैश्वीकरण के माध्यम से अधिक व्यापक होता गया (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 3.1 उपनिवेशी काल और शिक्षा :

18वीं शताब्दी में अंग्रेजों के भारत आगमन के साथ ही देश में शिक्षा, प्रशासन और सामाजिक संरचना में परिवर्तन आया। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली ने भारतीय बुद्धिजीवियों को पश्चिमी दर्शन, समाजशास्त्र, यूरोपीय साहित्य और वैज्ञानिक चिंतन से परिचित कराया। विश्वविद्यालयों और विद्यालयों में पश्चिमी साहित्य को पढ़ाने का प्रचलन बढ़ा, जिससे भारतीय लेखकों और विद्वानों को अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण प्राप्त हुआ (अज्ञेय, 1951, हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

इस नए बदलाव का प्रभाव हिंदी साहित्य पर स्पष्ट रूप से देखा गया। यथार्थवाद, समाजवाद और व्यक्ति केंद्रित दृष्टिकोण हिंदी उपन्यासों में देखने को मिला। पुरानी कल्पना प्रधान कथाएँ धीरे-धीरे यथार्थवादी कथाओं में बदलने लगीं, जिससे सामाजिक प्रश्न, व्यक्ति का संघर्ष, वर्गीय विभेद और सांस्कृतिक टकराव जैसे विषय प्रमुखता से उभरे (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 3.2 पश्चिमी साहित्यिक विधाएँ :

अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी और जर्मन साहित्य की विधाएँ 'उपन्यास, नाटक, कविता और आलोचना' ने हिंदी साहित्य को नई दिशा दी। यूरोपीय साहित्य के विचारों से प्रेरित होकर हिंदी उपन्यासों में पात्रों के मनोवैज्ञानिक पक्ष, सामाजिक संघर्षों और मानवीय संवेदनाओं को अधिक गहराई से पेश किया जाने लगा (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

फ्रांसीसी रोमांटिक कविता, रूसी यथार्थवादी उपन्यास और अंग्रेजी नाटक की विधाएँ हिंदी लेखकों को नई शैली प्रदान करती थीं। साहित्यिक आंदोलनों जैसे प्रतीकवाद, अस्तित्ववाद, उत्तर आधुनिकवाद ने भी हिंदी कविता और उपन्यास में विशिष्ट प्रभाव डाला (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 3.3 यात्रा और सांस्कृतिक आदान-प्रदान :

भारतीय संवाददाता, विद्वान, लेखक और छात्र विदेश यात्रा के माध्यम से अन्य संस्कृति परंपराओं से प्रभावित हुए। यूरोप, अमेरिका और एशिया के संदर्भों का अनुभव हिंदी लेखकों को नई प्रेरणा, जीवन अनुभव और दृष्टिकोण प्रदान करता रहा (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

विदेशी यात्रा से लौटे साहित्यकारों की रचनाओं में मानव संबंध, नैतिक द्वंद्व, सामाजिक चेतना और अंतरराष्ट्रीय मुद्दों के प्रति समझ बढ़ी। यह यात्रा हिंदी साहित्य को राष्ट्रीय स्तर से बाहर निकालकर एक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 3.4 आधुनिक वैश्वीकरण और प्रवासी जीवन :

20वीं सदी के उत्तरार्ध से वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने समाज, अर्थव्यवस्था और संस्कृति को एक

अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क में बदल दिया। तकनीकी संचार, इंटरनेट और डिजिटल मीडिया ने हिंदी साहित्य को भारत से बाहर दूसरे देशों तक पहुँचा दिया (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

भारतीय प्रवासियों के अनुभव, संघर्ष, सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक मुद्दों ने हिंदी साहित्य को वैश्विक संदर्भ में और अधिक बहुआयामी बनाया। प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं में नई जीवन दृष्टियाँ और सांस्कृतिक टकराव के अनुभव प्रस्तुत किए (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 4. वैश्विक प्रभावों का साहित्यिक विश्लेषण :

वैश्विक प्रभावों को समझने के लिए हिंदी साहित्य की प्रमुख विधाओं 'उपन्यास, कविता और नाटक' का विश्लेषण करना आवश्यक है, क्योंकि इन विधाओं में वैश्विक संदर्भ स्पष्ट रूप से दिखाई देता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.1 उपन्यास में वैश्विक प्रभाव :

हिंदी उपन्यास की परंपरा में वैश्विक प्रभाव का स्पष्ट परिचय मिलता है। उपन्यास की तकनीकी संरचना, पात्रों की मानसिकता, सामाजिक संघर्ष, नैतिक द्वंद्व और व्यक्ति केंद्रित दृष्टिकोण वैश्विक साहित्यिक प्रवृत्तियों से प्रभावित रहे हैं (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.1.1 यथार्थवाद और व्यक्ति केंद्रित दृष्टिकोण :

प्रेमचंद को आधुनिक हिंदी उपन्यास का प्रमुख स्तंभ माना जाता है। उनकी रचनाएँ भारतीय सामाजिक जीवन, वर्गीय विभेद, गरीबी-अमीरी, जातिगत भेदभाव और नैतिक प्रश्नों को यथार्थवादी तरीके से सामने लाती हैं (प्रेमचंद, 1936)। प्रेमचंद की शैली में पश्चिमी यथार्थवादी दृष्टिकोणों की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है, जो रूसी उपन्यासकारों जैसे टॉलस्टॉय और गोर्की की रचनाओं से प्रेरित प्रतीत होती है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.1.2 अंतरराष्ट्रीय विषय और प्रवासी अनुभव :

आधुनिक हिंदी उपन्यासों में प्रवासी अनुभव, पहचान की समस्या, आर्थिक विभेद, सामाजिक संरचना और वैश्विक सामाजिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित होता है। इन रचनाओं में पात्रों के अनुभव राष्ट्रीय सीमाओं से परे जाकर वैश्विक मानव अनुभव को उजागर करते हैं (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.2 कविता में वैश्विक प्रभाव :

हिंदी कविता पर वैश्विक साहित्यिक प्रवृत्तियों का प्रभाव विशेष रूप से छायावाद, प्रतीकवाद, आधुनिक कविता और उत्तर-आधुनिक आंदोलन में देखा जा सकता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.2.1 छायावाद और वैश्विक प्रेरणा :

छायावाद (1918-1936) ने हिंदी कविता को भावप्रधान और आध्यात्मिक दृष्टि से समृद्ध किया। छायावादी कवियों जैसे जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत और सूरदास के आधुनिक अनुयायियों ने यूरोपीय प्रतीकवाद और रोमांटिक कविता से प्रेरणा ली (प्रसाद, 1936, हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। यूरोपीय कवियों की शैली, प्रकृति-मुखी भाव और व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति ने हिंदी कविता को नया आयाम दिया।

#### 4.2.2 आधुनिक कविता और अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्तियाँ :

आधुनिक हिंदी कविता में अस्तित्ववाद, समाजवाद और मानवतावाद के तत्व स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। कवियों जैसे अज्ञेय, गोपाल सिंह ने अंतरराष्ट्रीय कविता की सामाजिक चेतना और व्यक्तिगत संघर्षों को हिंदी में स्थान दिया (अज्ञेय, 1951)। इसके साथ ही, वैश्विक युद्ध, उपनिवेशवाद और आधुनिक जीवन की जटिलताओं ने हिंदी कविता को एक नई दिशा दी (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 4.2.3 उत्तर-आधुनिक और डिजिटल कविता :

उत्तर-आधुनिक कविता में वैश्विक डिजिटल संस्कृति, प्रवासी अनुभव और सामाजिक परिवर्तनों की झलक मिलती है। इंटरनेट और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर हिंदी कविताओं का प्रसार अंतरराष्ट्रीय पाठक समुदाय तक पहुँचा, जिससे वैश्विक संवाद की संभावनाएँ बढ़ीं (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

#### 4.3 नाटक और रंगमंच में वैश्विक प्रभाव :

हिंदी नाटक और रंगमंच में भी वैश्विक दृष्टिकोण स्पष्ट दिखाई देता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.3.1 सामाजिक नाटक और वैश्विक प्रेरणा :

भारतीय नाटककार जैसे मुक्तिबोध और मोहन राकेश ने समाज और व्यक्ति के संघर्ष को अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण में प्रस्तुत किया। पश्चिमी नाटकों जैसे शेक्सपियर, आयबसेन और चेखोव की शैली ने हिंदी नाटक को आधुनिक संरचना, संवाद की गहराई और सामाजिक द्वंद्व प्रदान किया (प्रसाद, 1929, हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 4.3.2 रंगमंच में अंतरराष्ट्रीय दृष्टि :

समकालीन रंगमंच में वैश्विक मुद्दों, प्रवासी जीवन, आर्थिक असमानता और मानव अधिकारों पर केंद्रित नाटकों ने हिंदी मंच को वैश्विक पहचान दिलाई। रंगमंच ने केवल दर्शकों को मनोरंजन नहीं दिया, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना को वैश्विक दृष्टिकोण से जोड़ने का कार्य किया (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

#### 5. प्रवासी और डिजिटल साहित्य का योगदान :

वैश्विक प्रभावों के आधुनिक स्रोतों में प्रवासी और डिजिटल साहित्य का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

##### 5.1 प्रवासी साहित्य :

भारतीय प्रवासी लेखक जैसे भास्कर घोष, किरण देशपांडे और अन्य ने विदेशों में जीवन के अनुभवों, सामाजिक संघर्षों और सांस्कृतिक टकराव को हिंदी में प्रस्तुत किया। प्रवासी लेखकों ने अपनी रचनाओं में भारतीय संस्कृति और वैश्विक अनुभवों का समन्वय किया, जिससे हिंदी साहित्य की वैश्विक पहचान और मजबूती मिली (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

प्रवासी साहित्य में पहचान की समस्या, सांस्कृतिक द्वंद्व, अकेलापन और नई सामाजिक परिस्थितियों के साथ सामंजस्य जैसे विषय प्रमुख रूप से उभरते हैं। यह साहित्य हिंदी को राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर ले जाकर

एक अंतरराष्ट्रीय संवाद का माध्यम बनाता है (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

## 5.2 डिजिटल साहित्य :

इंटरनेट, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म ने हिंदी साहित्य को अंतरराष्ट्रीय पाठक समुदाय तक पहुँचाया। ऑनलाइन ब्लॉग, ई-बुक्स, ऑडियो बुक्स और डिजिटल पत्रिकाओं ने हिंदी साहित्य को पारंपरिक सीमाओं से बाहर निकाल कर वैश्विक मंच पर प्रस्तुत किया (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

डिजिटल माध्यम ने न केवल लेखक और पाठक को जोड़ा, बल्कि वैश्विक संस्कृति और विचारों के आदान-प्रदान को भी सरल बनाया। इससे हिंदी साहित्य की पहुँच और प्रभाव दोनों में वृद्धि हुई (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

## 6. समकालीन हिंदी साहित्य और वैश्विक पहचान :

आधुनिक हिंदी साहित्य वैश्विक मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुका है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

### 6.1 अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार और साहित्यिक संवाद :

हिंदी साहित्य को अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार, सम्मेलन और साहित्यिक सम्मेलनों के माध्यम से वैश्विक मान्यता मिली है। यह साहित्यिक संवाद हिंदी साहित्य को अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक समुदाय में स्थापित करता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

विभिन्न देशों में आयोजित साहित्यिक कार्यक्रमों और अकादमिक चर्चाओं ने हिंदी लेखन को वैश्विक पाठक वर्ग तक पहुँचाया है, जिससे इसकी सांस्कृतिक और भाषाई पहचान और अधिक मजबूत हुई है (इंटरनेट स्रोतः राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

### 6.2 वैश्विक सामाजिक-सांस्कृतिक मुद्दे :

समकालीन हिंदी साहित्य में वैश्विक मुद्दे जैसे पर्यावरण, प्रवासन, महिला अधिकार, मानवाधिकार, सामाजिक समानता और तकनीकी परिवर्तन प्रमुख हैं (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

इन विषयों का समावेश हिंदी साहित्य को अंतरराष्ट्रीय विमर्श और वैश्विक पाठक समुदाय के साथ जोड़ता है। यह साहित्य केवल भारतीय अनुभव तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वैश्विक मानव अनुभव का प्रतिनिधित्व करने लगा है (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।

### 6.3 बहुसांस्कृतिक पहचान :

हिंदी साहित्य में भारतीय संस्कृति की आत्मा और वैश्विक दृष्टिकोण का समन्वय समकालीन लेखकों की रचनाओं में स्पष्ट है। यह साहित्य बहुसांस्कृतिक अनुभवों, प्रवासी जीवन और वैश्विक सामाजिक परिवर्तनों का प्रतिबिंब प्रस्तुत करता है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

समकालीन हिंदी साहित्य अब केवल एक भाषा या देश का प्रतिनिधि नहीं रहा, बल्कि यह विविध संस्कृतियों के संवाद का माध्यम बन चुका है।

## 7. निष्कर्ष :

इस शोध से स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य केवल राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह वैश्विक सांस्कृतिक आदान-प्रदान का सक्रिय माध्यम बन चुका है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)। वैश्विक प्रभावों ने न केवल भाषा और शैली को प्रभावित किया है, बल्कि सामाजिक मूल्यों, नैतिक चिंतन और दृष्टिकोणों में भी समन्वय स्थापित किया है।

## मुख्य निष्कर्ष :

1. उपनिवेशी काल, पश्चिमी शिक्षा और विदेशी साहित्य ने हिंदी साहित्य में नई दृष्टि और बहुआयामीता प्रदान की (अज्ञेय, 1951, हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।
2. प्रवासी और डिजिटल साहित्य ने हिंदी को अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाई (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)।
3. हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभावों का समावेश भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों के साथ संतुलित और समृद्ध है (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।
4. आधुनिक और समकालीन हिंदी साहित्य वैश्विक मुद्दों, बहुसांस्कृतिक अनुभव और सामाजिक चेतना के समन्वय का सशक्त माध्यम है (इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स)। भविष्य में हिंदी साहित्य पर और अधिक अध्ययन यह स्पष्ट करेगा कि कैसे वैश्विक संदर्भ, डिजिटल माध्यम और प्रवासी अनुभव हिंदी साहित्य की शैली, विषयवस्तु और वैश्विक प्रभाव को और अधिक मजबूत बना सकते हैं (हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ)।

## संदर्भ :

1. प्रेमचंद, गोदान, 1936
2. महादेवी वर्मा, यामा, 1939
3. जयशंकर प्रसाद, कामायनी, 1936
4. अज्ञेय, सृजन और आलोचना, 1951
5. जयशंकर प्रसाद, चंद्रगुप्त, 1929
6. मुंशी प्रेमचंद पर विभिन्न शोध पत्र और लेख।
7. हिंदी साहित्य में वैश्विक प्रभाव पर लेख, शोध पत्र और पत्रिकाएँ।
8. इंटरनेट स्रोत : राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय और साहित्यिक ब्लॉग्स।



## आत्मकथा 'जूठन' में यथार्थ जीवन

पुनीत भारती

आत्मकथा लिखना सचमुच बहुत साहस का काम है। आत्मकथा लिखने के लिए जिस प्रकार की तटस्थता, ईमानदारी, स्पष्टता, प्रमाणिकता, निर्ममता और बेबाकी की आवश्यकता होती है, हिंदी में हिन्दू संस्कारों के कारण इसका सदैव अभाव रहा है। दरअसल हिंदी-साहित्यकारों का चरित्र यँ ही दोहरा रहता है, इसलिए हिंदी में जितनी भी आत्मकथाएँ प्रकाशित हुई हैं, उसमें सत्य इतना है कि, जितना लेखक के व्यक्तित्व को उभारने में सहायक सिद्ध हुआ हो। आत्मकथा लेखन की उपर्युक्त सभी विशेषताएँ दलित साहित्यकारों में मिलती है। सर्वप्रथम दलित साहित्य में डॉ. भगवान दास की आत्मकथा "मैं भंगी हूँ" प्रकाशित हुई। उसके बाद मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा "अपने-अपने पिंजरे" 1995 आई। फिर ओमप्रकाश वाल्मीकि की "जूठन" 1997 अब कौशल्या बैसंत्री की "दोहरा अभिशाप" 1999, श्यौराज सिंह बेचौन की "चमारका" 1998, सूरजपाल चौहान की आत्मकथा "तिरस्कृत" डॉ. तुलसीराम की आत्मकथा "मुर्दहिया" है।<sup>1</sup>

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा "जूठन" ने दलित व गैर-दलित पाठकों को प्रभावित ही नहीं किया बल्कि चौंका भी दिया। पहली बार किसी ने आत्मकथा के सभी मानदण्डों को पूर्ण कर लोगों को प्रभावित किया। और यथार्थ जीवन गाथा लिख कर सबको चौंका दिया। जिस दलित ने अपनी जीवन गाथा में ब्राह्मणवाद को परिलक्षित किया उसे जीवन से हाथ धोना पड़ा। वाल्मीकि आत्मकथा "जूठन" की भूमिका में वे लिखते हैं कि— "कई मित्र हैरान थे, अभी से आत्मकथा लिख रहे हो। उपलब्धियों की तराजू पर अपनी इस व्यथा-कथा को लिखकर अपने अनुभवों का मूलधन खो रहे हो। कुछ का यह कहना था कि खुद को नंगा करके दलित समाज हीनता को सवर्ण समाज में बढ़ाएँगे।"<sup>2</sup>

जूठन की संरचना, और भाषा-शैली ने पाठकों, चिंतकों और शोधार्थियों को काफी प्रभावित किया। जिस तरह उन्होंने अपने व्यक्तित्व को उद्घाटित किया है उसी तरह वर्ण-व्यवस्था के कई रहस्यों पर से पर्दा उठाकर लोगों को चौंकाने का कार्य किया है। वाल्मीकि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर और भी प्रकाश डालने हेतु "आत्मकथा" के अलावा अन्य रचनाओं के विषय में संक्षेप में बात करना जरूरी है। "दलित साहित्य" लेखन में उनका हस्तक्षेप हुए अभी ज्यादा समय नहीं हुए हैं। उनकी उपलब्धियों के पीछे कई कारण रहे हैं जैसा कि वर्तमान में दलित साहित्य का बोलबाला होना, दूसरा दलित परिवार में जन्म लेना, शिक्षा से प्राप्त ज्ञान द्वारा चिन्तन मनन, भोग हुए यथार्थ और हिम्मत न हारकर न्याय-अधिकार के लिए संघर्ष करते रहना आदि है।

मेरी वार्ता ओमप्रकाश वाल्मीकि से जब हुई तब मैंने उनसे पूछा कि आपकी विचारधारा क्या है, इनकी प्रेरणा किससे मिली, इस संदर्भ में उन्होंने उत्तर दिया :-

“मैंने अपने लेखन की ऊर्जा डॉ. अंबेडकर से ग्रहण की है। बुद्ध और कार्ल-मार्क्स से मुझे जीवन दृष्टि मिली है। उनके साहित्य ने अच्छे-बुरे, सही-गलत का फर्क समझने की सोच दी है। मानवता के विकास और पहचान का बोध पैदा किया है। इसी दृष्टि से मैंने लेखन की दिशा तय की है।”<sup>3</sup>

वाल्मीकि ने बुद्ध और अंबेडकर से प्रभावित होने के कारण लेखन की अभिव्यक्ति का विषय “दलित विमर्श” को अपनाया और सार्थक सिद्ध हुए। उनकी रचनाएँ सवर्णों और दलितों दोनों को उनके अपने अतीत के बारे में सोचने पर मजबूर करती है। दलित साहित्य की आत्मकथाओं ने भारतीय साहित्य को नई दिशा दी है। हिंदी साहित्यकार दलित समुदाय को हमेशा से अनदेखी किया था जिसे वाल्मीकि ने अपनी आत्मकथा जूठन में उभारा है।

हिंदी साहित्यशास्त्री संस्कृत और पश्चिम की दृष्टि से साहित्य के अनेक सिद्धांत गढ़ते रहे कि—“साहित्य समाज का आईना होता है”<sup>4</sup> समाज की दुःख-पीड़ा को अभिव्यक्त करने का माध्यम प्रदान करता है। जिसमें प्रगतिशील और मानवतावादी का विशेष स्थान माना जाता है। लेकिन इन्होंने समाज के बहुसंख्यक आबादी “दलित समुदाय” को इस लायक नहीं समझा कि उसकी वास्तविकता को साहित्य में स्थान दिया जाए। दलितों के प्रति सवर्ण साहित्यकारों और इतिहासकारों में कुछ अपवाद स्वरूप लोगों ने करुणा तो दिखाई पर अधिक से अधिक लोगों ने अमानवीय व्यवस्था के जुल्म और शोषण के विरुद्ध किसी प्रकार की वाणी नहीं दी। दलित वर्ग का रोष, आक्रोश नजर नहीं आया। समय बदलता रहा, विकास की गति तेज हुई परन्तु दलितों के हालात और सवर्णों की मानसिकता में कोई परिवर्तन नहीं आया।

बीसवीं शताब्दी में स्वतंत्रता के बाद सभी वर्गों को समान अधिकार दिया गया। जबकि इक्कीसवीं सदी आ जाने के बाद भी दलितों को शिक्षा, साहित्य, कला और विज्ञान में कुछ अधिकार नहीं मिला। आज तक जो मिला उनके कर्मफल हैं। स्वतंत्रता के बाद हिंदी में ग्रामीण अंचल, भारत विभाजन, राजनीति, सामंतवाद और पूंजीवाद पर केंद्रित कई महत्वपूर्ण रचनाएं विशेषकर उपन्यास लिखे गए जो बहुत महत्वपूर्ण हैं। उन्हें ख्याति भी मिली, उनके साहित्य में गाँव का चौधरी, सेठ महाजन, साहूकार और छोटे मोटे नेता तक स्थान पाए। लेकिन इन्होंने दलितों का नाम मात्र भी जिक्र नहीं किया।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा “जूठन” ऐसा दस्तावेज है जो दलित-उत्पीड़न की प्रतिक्रियाओं को उद्घाटित करता है। समाज के उन रीति-रिवाजों, प्रथाओं और परम्पराओं को प्रकाशित करती है जिसमें छिपकर दलितों का उत्पीड़न करते हैं। जूठन, ब्राह्मणवादी मोर्चाबंदी से बचकर अपना रास्ता बनाना तथा इनके विरुद्ध संघर्ष करने का मुद्दा, जज्बा और संकल्प लेने की पृष्ठभूमि भी तैयार करती है। वाल्मीकि जाति को लेकर कोई हीनता का बोध नहीं करते हैं, कभी उन्हें यह अहसास नहीं हुआ कि कथित निम्न जाति में पैदा होने से उनकी मानवता, सम्मान व गरिमा में कोई कमी आ गई है। हाँ दुःख और यातना जरूर झेलनी पड़ी, फिर भी अपनी जाति और जातिगत विशेषता को खुलेआम बताने में कोई संकोच नहीं करते हैं।

उन्होंने सदियों से चली आ रही प्रथाओं को चुनौती दी। उनका आग्रह है कि उन्हें एक मानव के रूप में स्वीकार किया जाय न कि जाति की पहचान पर। इस मानवीय गरिमा व पहचान को पाने के लिए अपने स्वाभिमान के साथ कभी उन्होंने समझौता नहीं किया। इसके लिए कभी-कभी अपने दोस्तों, पत्नी और रिश्तेदारों से भी उपेक्षित होना पड़ा। कई ब्राह्मण मित्रों से जाति छिपाने के कारण दोस्ती टूट गई, वाल्मीकि ने जाति को

सब कुछ मानने वालों से हमेशा के लिए दोस्ती तोड़ दी है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की पत्नी चँदा भी "वाल्मीकि" के बजाय "खैरवाल" लिखना अधिक पसंद करती हैं और खुद भी नाटकों की पब्लिसिटी में वह अपना नाम चँदा खैरवाल ही प्रचारित करती थीं। अधिकांशतः चँदा ओमप्रकाश वाल्मीकि को वाल्मीकि के स्थान पर खैरवाल लगाने के लिए दबाव डालती हैं। लेकिन वाल्मीकि जी ने अपना सरनेम नहीं बदला, उनका मानना है कि ऐसा करने से व्यक्ति कुछ समय के लिए कथित सवर्णों से झूठी प्रतिष्ठा तो पा सकता है, लेकिन उसमें मानवीय गरिमा नहीं आती।

इस तरह की एक और घटना उनके साथ घटी कि— देहरादून में एक भोलाराम खरे रहते थे जो वाल्मीकि पर खरे सरनेम लगाते थे। उनकी बेटी मंजू की शादी विवाह का पूरा खर्च वाल्मीकि ने संभाल रखा था, लेकिन जिस दिन मंजू की शादी का कार्ड छपकर आया तो उससे वाल्मीकि का नाम गायब था, जाति भेद खुल जाने के डर से ऐसा किया गया था। इस घटना के अलावा संयोग से सरनेम को लेकर एक तीसरी घटना भी घटी जिसमें चँदा के भतीजी की शादी के कार्ड पर सभी के नाम थे, मगर ओमप्रकाश वाल्मीकि का नाम छोड़ दिया था। इस प्रकार के हीन भावना से छुटकारा पाये बिना कोई व्यक्ति दलित मुक्ति के संघर्ष में शामिल होने का साहस नहीं कर पाता। वे कहते हैं कि कुछ लोग जाति छिपाकर ब्राह्मणवादी खोल में अपने लिए एक सुरक्षित कोना ढूँढ़ लेते हैं और ब्राह्मणवादी व्यवस्था भी चलती ही नहीं बल्कि और अधिक पनपती और मजबूत भी होती है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि अपनी आत्मकथा "जूठन" में जाति छिपाने की समस्या के कारणों को तलाशते हुए गम्भीर चिंतन के बाद लिखते हैं कि— "दलितों में जो पढ़-लिख गए हैं, उनके लिए पहचान का भयंकर संकट खड़ा हो गया है, जिससे उबरने के लिए वे तात्कालिक और सरल रास्ता ढूँढ़ने लगे हैं। अपने वंश गोत्र को थोड़े ही संशोधन के साथ अपने नाम के साथ जोड़ लेते हैं। जैसे— चिनालिए से चंद्रिल या चंचल, और सौदे से सौदाई या सूद लिखने लगे हैं। मेरी माँ का वंशगोत्र केसले है जिसके कुछ लोग केसवाल की तरह लिखने लगे हैं। यह उन्हें आसान लगता है। जो जातिवाद की घोर अमानवीयता के प्रतिक्रिया स्वरूप उपजी है। दलित पढ़ लिखकर समाज की मुख्यधारा से जुड़ना चाहते हैं, लेकिन सवर्ण उन्हें इस धारा से रोकता है। उनसे भेदभाव करते और हीन मानता है।"<sup>5</sup>

दलितों के बुद्धिमत्ता, योग्यता, कार्यकुशलता पर संदेह व्यक्त किया जाता है। प्रताड़ित करने के तमाम हथकंडे अपनाए जाते हैं। इस पीड़ा को वही जानता है जिसने इस की विभीषिका के नशतर अपनी त्वचा पर सहे हैं। जिसने जिस्म को सिर्फ बाहर से ही घायल नहीं किया है अन्दर से भी छिन्न-भिन्न कर दिया है। अस्तित्व के इस संकटकाल में मुझ जैसा कोई जाति बोधक सरनेम के साथ आता है तो वे तमाम लोग चौकन्ने हो जाते हैं। उन्हें लगता है जैसे कोई उनका भेद खोल रहा है, क्योंकि समस्या से पलायन उन्हें सहज और सरल लगता है जबकि सच यह है कि बदलाव पलायन से नहीं, संघर्ष और संवाद से आएगा। मोहनदास नैमिशराय जैसे प्रसिद्ध दलित साहित्यकार भी जाति के डर से अपने सवर्ण सम्पादक मित्र से मिलवाते समय कहने लगते हैं कि— "आपका परिचय यदि सिर्फ "ओमप्रकाश" कहकर ही दिया जाएगा...। दलित आंदोलन से जुड़े रचनाकारों, बुद्धिजीवियों, कार्य-कर्ताओं को द्वंद्व से लगातार जूझना पड़ रहा है। कितना भय छिपा है मन के अँधेरे में, जो हमें सहज जीवन जीने नहीं देता।"<sup>6</sup>

वाल्मीकि ने दलित समाज में व्याप्त अंधविश्वास, अज्ञानता तथा भाग्यवाद पर प्रश्नचिह्न लगाया है। और उन्हें भी उजागर किया है जो दलित शिक्षा के बाद रोजगार पाकर अपने को सवर्ण बना लेते हैं। जिसे मैं सवर्ण दलित मानता हूँ। भाग्यवाद और अंधविश्वास ने इस तरह गुलाम बनाया है कि दलितों में वैज्ञानिक सोच व चिंतन, जीवन भर पनपने नहीं देता है। अंधविश्वास धार्मिक अनुष्ठानों के साथ मिलकर एक ऐसी शक्ति बन जाता है, जो जीवन को नियंत्रित करता है। इस प्रकार के दुष्क्र और गुलामी को तोड़े बिना दलितों में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। इसलिए आज ब्राह्मणवाद और अंधविश्वास के चंगुल से मुक्ति पाना निहायत जरूरी है। वाल्मीकि जी, दलितों में व्याप्त अंधविश्वासों का वर्णन करते हुए गहरी चिंता और चेतना जगायी है।

इस प्रकार वाल्मीकि जी बचपन से लेकर स्कूली जीवन तक छुआछूत के अमानवीय, घृणा को झेलते रहते और बात-बात पर उनका मजाक उड़ाया जाता था, पढ़ने के लिए झाड़ू लगवाया जाता और अछूत होने के कारण सबसे पीछे बैठाया जाता था। इस प्रकार के परिवेश में उन्हें कठिन संघर्ष से शिक्षा प्राप्त हुई। संघर्ष ने ही उनके संवेदनशील व्यक्तित्व को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। “जूठन” आत्मकथा केवल वाल्मीकि आत्मकथा ही नहीं बल्कि भारत और विश्व के “दलित समुदाय” की आत्मकथा है, जो सदियों से सवर्णों द्वारा उपेक्षित और तिरस्कृत होते आ रहे हैं। “जूठन” दलित जीवन का यथार्थ है। वाल्मीकि के जीवन में पहले संघर्ष तब शिक्षा और संगठन है जो आज भी सभी दलितों के साथ है।

#### संदर्भ :

1. त्रैमासिक साहित्यक पत्रिका “तद्भव” में जुलाई 2009 लखनऊ, उ० प्र०
2. ओमप्रकाश बाल्मीकि “जूठन” प्रकाशन—राधाकृष्ण प्रा० लि० दरियागंज, दिल्ली—110002 संस्करण 1999 पृष्ठ भूमिका—2
3. साक्षात्कार रिकार्डिंग और लिखित नागपुर आर्डिनेंस फैक्ट्री 17 फरवरी 2010
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रकाशन नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, नई दिल्ली सं०
5. ओमप्रकाश बाल्मीकि “जूठन” प्रकाशन—राधाकृष्ण प्रा० लि० दरियागंज, दिल्ली—110002 संस्करण 1999 पृष्ठ 11—12
6. ओमप्रकाश बाल्मीकि “जूठन” प्रकाशन—राधाकृष्ण प्रा० लि० दरियागंज, दिल्ली—110002 संस्करण 1999 पृष्ठ 12

punitbharti7@gmail.com



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 81-89

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# भारतीय शिक्षा प्रणाली में कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता एवं संभावनाएँ तथा ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच अंतर : चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. पूराराम मेघवाल



Assistant Professor, HoD. Faculty of Education,

Institute of Advance Studies in Education Gandhi Vidya Mandir, Sardarshahar.

## सारांश (Abstract)

भारतीय शिक्षा प्रणाली ऐतिहासिक रूप से मुख्यतः सैद्धांतिक ज्ञान (Theoretical Knowledge) पर आधारित रही है, जिसमें रटने की प्रवृत्ति को अधिक महत्व दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप विद्यार्थियों में व्यावहारिक कौशल, समस्या-समाधान क्षमता (Problem Solving Ability) और उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुरूप दक्षताओं की कमी देखी जाती है। वर्तमान वैश्विक प्रतिस्पर्धा, तकनीकी विकास और तेजी से बदलते रोजगार बाजार के युग में केवल डिग्री प्राप्त करना पर्याप्त नहीं रह गया है, बल्कि कौशल-आधारित शिक्षा (Skill-Based Education) की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। यह शिक्षा प्रणाली छात्रों को वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से जोड़ती है और उन्हें रोजगार के लिए अधिक सक्षम बनाती है।

इसके साथ ही भारत में ग्रामीण और शहरी शिक्षा के बीच एक स्पष्ट और गहरा अंतर विद्यमान है। शहरी क्षेत्रों में जहाँ आधुनिक शिक्षण तकनीक, प्रशिक्षित शिक्षक, डिजिटल संसाधन और बेहतर बुनियादी ढाँचा उपलब्ध है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में इन सुविधाओं की कमी के कारण शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है। यह असमानता केवल शैक्षिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को भी बढ़ावा देती है, जिससे ग्रामीण विद्यार्थियों के अवसर सीमित हो जाते हैं।

यह शोध-पत्र भारतीय शिक्षा प्रणाली में कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता, उसकी संभावनाओं तथा ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच विद्यमान अंतर का गहन विश्लेषण करता है। साथ ही, यह अध्ययन इन समस्याओं के समाधान हेतु विभिन्न व्यावहारिक उपायों जैसे डिजिटल शिक्षा का विस्तार, शिक्षक प्रशिक्षण, समान संसाधन वितरण और व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार पर भी प्रकाश डालता है। इसका उद्देश्य एक ऐसी समावेशी और समान शिक्षा प्रणाली के निर्माण की दिशा में सुझाव प्रस्तुत करना है, जो भारत के सभी छात्रों को समान

अवसर प्रदान कर सके और उन्हें आत्मनिर्भर एवं सक्षम नागरिक बनने में सहायता करे।

### **प्रस्तावना (Introduction)**

भारत की शिक्षा प्रणाली विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध शिक्षा परंपराओं में से एक रही है। प्राचीन काल में नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालय ज्ञान, दर्शन, विज्ञान और कला के उत्कृष्ट केंद्र माने जाते थे, जहाँ शिक्षा का उद्देश्य केवल सूचना प्राप्त करना नहीं बल्कि समग्र व्यक्तित्व विकास था। समय के साथ शिक्षा प्रणाली में अनेक परिवर्तन हुए और आधुनिक भारतीय शिक्षा व्यवस्था मुख्यतः सैद्धांतिक ज्ञान, परीक्षा-आधारित मूल्यांकन और डिग्री प्राप्ति तक सीमित होती चली गई।

वर्तमान समय में वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और तेजी से बदलते रोजगार बाजार के कारण शिक्षा के स्वरूप में भी परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जा रही है। आज केवल अकादमिक योग्यता पर्याप्त नहीं है, बल्कि व्यावहारिक कौशल (Practical Skills), तकनीकी दक्षता (Technical Skills), संचार कौशल (Communication Skills) और समस्या-समाधान क्षमता जैसे गुण भी अत्यंत आवश्यक हो गए हैं। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए कौशल-आधारित शिक्षा (Skill-Based Education) की अवधारणा को विशेष महत्व दिया जा रहा है, जिसका उद्देश्य छात्रों को रोजगार योग्य बनाना और उन्हें वास्तविक जीवन की चुनौतियों के लिए तैयार करना है।

इस दिशा में भारत सरकार द्वारा लागू की गई नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) एक महत्वपूर्ण कदम है, जो शिक्षा प्रणाली को अधिक लचीला, बहुआयामी और कौशल-उन्मुख बनाने पर बल देती है। यह नीति छात्रों को केवल किताबी ज्ञान तक सीमित न रखकर उन्हें व्यावसायिक प्रशिक्षण, इंटरनशिप और अनुभव आधारित शिक्षा से जोड़ने का प्रयास करती है।

इसके बावजूद, भारत में शिक्षा के क्षेत्र में एक गंभीर चुनौती ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच व्याप्त असमानता है। शहरी क्षेत्रों में जहाँ आधुनिक सुविधाएँ, डिजिटल तकनीक, योग्य शिक्षक और बेहतर शैक्षणिक वातावरण उपलब्ध है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनों की कमी, डिजिटल विभाजन, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव और सीमित अवसर शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। यह अंतर न केवल शैक्षिक उपलब्धियों में असमानता पैदा करता है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक विकास की गति को भी प्रभावित करता है।

अतः यह आवश्यक हो जाता है कि भारतीय शिक्षा प्रणाली को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाए कि वह कौशल-आधारित शिक्षा को बढ़ावा दे और ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच की खाई को कम कर सके, जिससे एक समान और समावेशी शिक्षा व्यवस्था का निर्माण संभव हो सके।

### **कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता (Need for Skill-Based Education)**

वर्तमान वैश्विक और तकनीकी युग में शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री प्राप्त करना नहीं रह गया है, बल्कि छात्रों को ऐसे कौशल प्रदान करना आवश्यक हो गया है जो उन्हें वास्तविक जीवन और रोजगार के क्षेत्र में सक्षम बना सकें। पारंपरिक शिक्षा प्रणाली में जहाँ अधिकतर ध्यान सैद्धांतिक ज्ञान और परीक्षा परिणामों पर केंद्रित रहा है, वहीं कौशल-आधारित शिक्षा (Skill-Based Education) छात्रों को व्यावहारिक अनुभव, तकनीकी दक्षता और समस्या-समाधान क्षमता विकसित करने में सहायता करती है। इसी कारण आज इसकी आवश्यकता पहले की तुलना में कहीं अधिक बढ़ गई है।

## रोजगारयोग्यता बढ़ाने के लिए (To Enhance Employability)

आज के प्रतिस्पर्धी रोजगार बाजार में केवल शैक्षणिक डिग्री प्राप्त करना पर्याप्त नहीं माना जाता। कंपनियाँ ऐसे उम्मीदवारों की तलाश करती हैं जिनमें तकनीकी कौशल, व्यावहारिक ज्ञान, टीम वर्क और संचार क्षमता हो। कौशल-आधारित शिक्षा छात्रों को इन सभी आवश्यक दक्षताओं से लैस करती है, जिससे उनकी रोजगार योग्यता (Employability) में वृद्धि होती है। यह शिक्षा उन्हें केवल नौकरी पाने के लिए ही नहीं, बल्कि कार्यस्थल पर प्रभावी प्रदर्शन करने के लिए भी तैयार करती है।

## उद्योगों की मांग के अनुसार (According to Industry Demand)

आज उद्योगों की आवश्यकताएँ तेजी से बदल रही हैं, विशेषकर सूचना प्रौद्योगिकी (IT), स्वास्थ्य सेवाएँ (Healthcare), प्रबंधन (Management), विनिर्माण (Manufacturing) और स्टार्टअप इकोसिस्टम में कुशल और प्रशिक्षित युवाओं की मांग निरंतर बढ़ रही है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डेटा साइंस, डिजिटल मार्केटिंग और साइबर सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। कौशल-आधारित शिक्षा छात्रों को इन उभरते क्षेत्रों के अनुरूप तैयार करती है, जिससे वे उद्योगों की बदलती मांगों को पूरा करने में सक्षम बनते हैं।

## आत्मनिर्भर भारत के लिए (For Atmanirbhar Bharat)

भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए यह आवश्यक है कि युवा केवल नौकरी खोजने वाले (Job Seekers) न बनें, बल्कि नौकरी देने वाले (Job Creators) भी बनें। कौशल-आधारित शिक्षा उद्यमिता (Entrepreneurship) को बढ़ावा देती है और छात्रों में नवाचार की भावना विकसित करती है। जब युवा विभिन्न व्यावसायिक और तकनीकी कौशलों से सुसज्जित होते हैं, तो वे स्वयं का व्यवसाय शुरू करने में सक्षम होते हैं, जिससे देश की आर्थिक वृद्धि और रोजगार सृजन दोनों को बढ़ावा मिलता है।

## ड्रॉपआउट दर कम करने के लिए (To Reduce Dropout Rate)

पारंपरिक शिक्षा प्रणाली में कई छात्र केवल सैद्धांतिक पढ़ाई में रुचि न होने के कारण स्कूल छोड़ देते हैं। लेकिन जब शिक्षा को व्यावहारिक गतिविधियों, प्रोजेक्ट आधारित सीखने और कौशल प्रशिक्षण से जोड़ा जाता है, तो छात्रों की रुचि बढ़ती है। वे शिक्षा को अधिक उपयोगी और रोचक मानते हैं, जिससे स्कूल छोड़ने (Dropout) की प्रवृत्ति में कमी आती है। यह विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों के लिए अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

इस प्रकार, कौशल-आधारित शिक्षा न केवल छात्रों की व्यक्तिगत क्षमता को बढ़ाती है, बल्कि यह देश के सामाजिक और आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

## कौशल-आधारित शिक्षा की संभावनाएँ (Prospects of Skill-Based Education)

कौशल-आधारित शिक्षा आज भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक परिवर्तनकारी (Transformative) भूमिका निभा रही है। यह न केवल छात्रों को रोजगार योग्य बनाती है, बल्कि उन्हें नवाचार, उद्यमिता और आत्मनिर्भरता की दिशा में भी प्रेरित करती है। बदलते समय के साथ इसके अनेक संभावित क्षेत्र उभरकर सामने आए हैं, जो भविष्य में शिक्षा व्यवस्था को अधिक प्रभावी और उपयोगी बना सकते हैं।

### • व्यावसायिक प्रशिक्षण (Vocational Training)

कौशल-आधारित शिक्षा के अंतर्गत व्यावसायिक प्रशिक्षण का विस्तार एक महत्वपूर्ण संभावना है। इसमें

छात्रों को विभिन्न तकनीकी और गैर-तकनीकी क्षेत्रों जैसे इलेक्ट्रिशियन, मैकेनिक, कंप्यूटर ऑपरेटर, हेल्थकेयर असिस्टेंट, डिजाइनिंग आदि में प्रशिक्षण दिया जाता है। यदि इस प्रशिक्षण को स्कूल और कॉलेज स्तर पर प्रभावी ढंग से लागू किया जाए, तो छात्र पढ़ाई के साथ-साथ रोजगार योग्य कौशल भी प्राप्त कर सकते हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ती है।

- **डिजिटल शिक्षा और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म का विकास :**

डिजिटल क्रांति ने शिक्षा के क्षेत्र में नए अवसर पैदा किए हैं। ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफॉर्म, वर्चुअल क्लासरूम, और शैक्षिक ऐप्स के माध्यम से छात्र किसी भी स्थान से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। यह विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी है, जहाँ संसाधनों की कमी होती है। ई-लर्निंग के माध्यम से कौशल-आधारित शिक्षा को अधिक व्यापक, सुलभ और लचीला बनाया जा सकता है।

- **स्कूल स्तर पर इंटरशिप और प्रोजेक्ट आधारित शिक्षा :**

परंपरागत शिक्षा में सैद्धांतिक ज्ञान पर अधिक जोर दिया जाता है, लेकिन कौशल-आधारित शिक्षा में प्रोजेक्ट आधारित लर्निंग और इंटरशिप को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यदि छात्रों को प्रारंभिक स्तर से ही वास्तविक कार्य अनुभव (Practical Exposure) दिया जाए, तो वे अधिक आत्मविश्वासी और सक्षम बनते हैं। इससे उनकी समस्या-समाधान क्षमता और रचनात्मक सोच का विकास होता है।

- **स्टार्टअप संस्कृति को बढ़ावा :**

भारत में स्टार्टअप इकोसिस्टम तेजी से विकसित हो रहा है। कौशल-आधारित शिक्षा छात्रों में नवाचार (Innovation) और उद्यमिता (Entrepreneurship) की भावना विकसित करती है। जब छात्रों को व्यावसायिक कौशल और व्यावहारिक ज्ञान मिलता है, तो वे नए व्यवसाय शुरू करने के लिए प्रेरित होते हैं। इससे न केवल रोजगार सृजन होता है, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था भी मजबूत होती है।

- **सरकारी और निजी क्षेत्र की साझेदारी (PPP मॉडल)**

कौशल-आधारित शिक्षा को सफल बनाने में सार्वजनिक-निजी भागीदारी (Public-Private Partnership – PPP) मॉडल की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। सरकार और निजी संस्थान मिलकर प्रशिक्षण केंद्र, कौशल विकास कार्यक्रम और आधुनिक शैक्षिक ढांचे का निर्माण कर सकते हैं। इससे शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होगा और उद्योगों की आवश्यकताओं के अनुसार कुशल मानव संसाधन तैयार किया जा सकेगा।

इस प्रकार, कौशल-आधारित शिक्षा की संभावनाएँ अत्यंत व्यापक हैं और यह भारतीय शिक्षा प्रणाली को अधिक व्यावहारिक, रोजगारोन्मुख और भविष्य-उन्मुख बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

### **ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच अंतर (Difference between Rural and Urban Education)**

भारत में शिक्षा प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण और संवेदनशील पहलू ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के बीच विद्यमान असमानता है। यह अंतर केवल शैक्षणिक सुविधाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि यह छात्रों के समग्र विकास, अवसरों और भविष्य की संभावनाओं को भी प्रभावित करता है। नीचे इस अंतर के प्रमुख आयामों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

### **संसाधनों का अंतर (Difference in Resources)**

शहरी क्षेत्रों के विद्यालयों में आधुनिक शैक्षिक संसाधन जैसे स्मार्ट क्लासरूम, डिजिटल बोर्ड, उच्च गति

इंटरनेट, पुस्तकालय, प्रयोगशालाएँ और प्रशिक्षित शिक्षक आसानी से उपलब्ध होते हैं। इसके विपरीत ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढाँचे की कमी एक बड़ी चुनौती है। कई ग्रामीण विद्यालयों में पर्याप्त कक्षाएँ, प्रयोगशालाएँ और डिजिटल उपकरण नहीं होते, जिससे शिक्षण प्रक्रिया सीमित हो जाती है। संसाधनों की यह असमानता शिक्षा की गुणवत्ता पर सीधा प्रभाव डालती है।

### **गुणवत्ता का अंतर (Difference in Quality of Education)**

शहरी विद्यालयों में शिक्षण गुणवत्ता अपेक्षाकृत बेहतर मानी जाती है क्योंकि वहाँ योग्य और प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध होते हैं तथा शिक्षण के आधुनिक तरीकों का उपयोग किया जाता है। वहीं ग्रामीण विद्यालयों में कई बार शिक्षकों की कमी, बहु-ग्रेड कक्षाएँ और सीमित प्रशिक्षण के कारण शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है। इससे ग्रामीण छात्रों को समान शैक्षिक अवसर नहीं मिल पाते।

### **डिजिटल विभाजन (Digital Divide)**

डिजिटल युग में शिक्षा का एक बड़ा हिस्सा तकनीक पर आधारित हो गया है। ऑनलाइन कक्षाएँ, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म और डिजिटल सामग्री शिक्षा का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुके हैं। हालांकि, ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट की धीमी गति, उपकरणों की कमी और डिजिटल साक्षरता का अभाव छात्रों की डिजिटल शिक्षा तक पहुँच को सीमित करता है। इसके विपरीत शहरी छात्र तकनीक का बेहतर उपयोग कर अधिक अवसर प्राप्त करते हैं, जिससे यह अंतर और बढ़ जाता है।

### **सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव (Social and Economic Impact)**

ग्रामीण शिक्षा पर सामाजिक और आर्थिक कारकों का गहरा प्रभाव पड़ता है। गरीबी, अशिक्षा, बाल श्रम और शिक्षा के प्रति कम जागरूकता जैसे कारण छात्रों की पढ़ाई को बाधित करते हैं। कई परिवार आर्थिक तंगी के कारण बच्चों को पढ़ाई के बजाय काम पर लगाने के लिए मजबूर होते हैं। इसके अलावा, सामाजिक रूढ़ियाँ और सीमित जागरूकता भी शिक्षा के विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। इन सभी कारणों से ग्रामीण और शहरी शिक्षा के बीच असमानता और अधिक गहरी हो जाती है।

इस प्रकार, ग्रामीण एवं शहरी शिक्षा के बीच का अंतर भारत की शिक्षा प्रणाली के लिए एक गंभीर चुनौती है, जिसे दूर किए बिना समान और समावेशी विकास संभव नहीं है।

### **प्रमुख चुनौतियाँ (Major Challenges)**

भारत में शिक्षा प्रणाली, विशेषकर कौशल-आधारित शिक्षा और ग्रामीण-शहरी असमानता के संदर्भ में, कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। ये चुनौतियाँ न केवल शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास और देश की मानव संसाधन क्षमता पर भी प्रभाव डालती हैं।

#### **• योग्य शिक्षकों की कमी (Shortage of Qualified Teachers)**

शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता का सबसे महत्वपूर्ण आधार शिक्षक होते हैं। लेकिन भारत के कई ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में प्रशिक्षित और योग्य शिक्षकों की भारी कमी देखी जाती है। कई विद्यालयों में विषय विशेषज्ञ शिक्षक उपलब्ध नहीं होते, जिससे छात्रों को उचित मार्गदर्शन नहीं मिल पाता। इसके अतिरिक्त, नियमित प्रशिक्षण और कौशल उन्नयन (Skill Upgradation) की कमी भी शिक्षण गुणवत्ता को प्रभावित करती है।

- **तकनीकी संसाधनों का अभाव (Lack of Technical Resources)**

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में तकनीक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। स्मार्ट क्लास, कंप्यूटर लैब, इंटरनेट सुविधा और डिजिटल शिक्षण सामग्री अब आवश्यक हो चुकी हैं। लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकांश विद्यालयों में इन संसाधनों की कमी है। इस कारण छात्र डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन लर्निंग के लाभों से वंचित रह जाते हैं, जिससे उनकी प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता प्रभावित होती है।

- **भाषा और जागरूकता की समस्या (Language and Awareness Issues)**

ग्रामीण क्षेत्रों में कई बार शिक्षा की भाषा छात्रों के लिए कठिन हो जाती है, विशेषकर जब शिक्षण माध्यम अंग्रेजी या उच्च स्तरीय हिंदी हो। इससे छात्रों की समझने की क्षमता प्रभावित होती है। इसके अलावा, शिक्षा और कौशल विकास के महत्व के प्रति जागरूकता की कमी भी एक बड़ी समस्या है। कई परिवार अब भी शिक्षा को प्राथमिकता नहीं देते, जिससे छात्रों का विकास बाधित होता है।

- **आर्थिक असमानता (Economic Inequality)**

आर्थिक स्थिति शिक्षा प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। गरीब परिवारों के बच्चे अक्सर शिक्षा के बजाय काम करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। किताबें, यूनिफॉर्म, कोचिंग और अन्य शैक्षिक खर्च कई परिवारों के लिए बोझ बन जाते हैं। यह आर्थिक असमानता शिक्षा तक समान पहुँच को सीमित करती है और समाज में अंतर को और बढ़ाती है।

- **सरकारी योजनाओं का सही क्रियान्वयन न होना (Improper Implementation of Government Schemes)**

सरकार द्वारा शिक्षा और कौशल विकास के लिए अनेक योजनाएँ चलाई जाती हैं, जैसे स्किल इंडिया, डिजिटल इंडिया और सर्व शिक्षा अभियान। हालांकि, जमीनी स्तर पर इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन कई बार कमजोर रहता है। भ्रष्टाचार, प्रशासनिक लापरवाही और निगरानी की कमी के कारण इन योजनाओं का पूरा लाभ लक्षित वर्ग तक नहीं पहुँच पाता, जिससे अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते।

इन सभी चुनौतियों के समाधान के बिना भारत में समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रणाली का निर्माण करना कठिन है। इसलिए इन समस्याओं पर गंभीरता से ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है।

### **समाधान (Solutions)**

भारतीय शिक्षा प्रणाली में मौजूद चुनौतियों और ग्रामीण-शहरी असमानता को दूर करने के लिए एक बहुआयामी और व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है। इसके लिए सरकार, शिक्षण संस्थानों, समाज और निजी क्षेत्र सभी की संयुक्त भूमिका महत्वपूर्ण है। नीचे प्रमुख समाधान विस्तार से प्रस्तुत किए गए हैं।

### **शिक्षक प्रशिक्षण (Teacher Training)**

शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार का सबसे प्रभावी उपाय शिक्षकों का नियमित और आधुनिक प्रशिक्षण है। शिक्षकों को केवल पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों तक सीमित न रखकर उन्हें डिजिटल उपकरणों, स्मार्ट क्लास तकनीक, और कौशल-आधारित शिक्षा पद्धतियों से परिचित कराना आवश्यक है। समय-समय पर कार्यशालाएँ (Workshops), प्रशिक्षण कार्यक्रम और रिफ्रेशर कोर्स आयोजित किए जाने चाहिए ताकि शिक्षक बदलते शैक्षिक परिवेश के अनुसार स्वयं को अद्यतन कर सकें।

## **डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर (Digital Infrastructure)**

ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने के लिए मजबूत डिजिटल ढाँचा अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक विद्यालय में इंटरनेट सुविधा, कंप्यूटर लैब और स्मार्ट क्लासरूम की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके साथ ही डिजिटल लर्निंग प्लेटफॉर्म और ऑनलाइन शैक्षिक सामग्री तक आसान पहुँच सुनिश्चित करनी चाहिए। इससे ग्रामीण छात्र भी शहरी छात्रों की तरह आधुनिक शिक्षा का लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

## **समान शिक्षा नीति का क्रियाव्ययन (Equal Implementation of Education Policy)**

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच शिक्षा के अंतर को कम करने के लिए शिक्षा नीतियों का समान और प्रभावी क्रियान्वयन आवश्यक है। सभी छात्रों को समान अवसर, संसाधन और सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। सरकारी निगरानी प्रणाली को मजबूत बनाकर यह सुनिश्चित किया जाए कि किसी भी क्षेत्र में शिक्षा की गुणवत्ता में भेदभाव न हो।

## **व्यावसायिक शिक्षा का विस्तार (Expansion of Vocational Education)**

कौशल-आधारित शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए व्यावसायिक शिक्षा को स्कूल स्तर से ही लागू करना चाहिए। छात्रों को विभिन्न क्षेत्रों जैसे तकनीकी कार्य, कृषि, कंप्यूटर, स्वास्थ्य सेवाएँ आदि में प्रारंभिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इससे छात्र केवल किताबी ज्ञान तक सीमित न रहकर वास्तविक जीवन में उपयोगी कौशल भी सीख सकेंगे, जिससे उनकी रोजगार क्षमता में वृद्धि होगी।

## **सरकारी योजनाओं का प्रभावी उपयोग (Effective Use of Government Schemes)**

सरकार द्वारा संचालित योजनाएँ जैसे मिड-डे मील योजना, डिजिटल इंडिया, स्किल इंडिया मिशन, और सर्व शिक्षा अभियान शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए पारदर्शिता, निगरानी और जवाबदेही को मजबूत करना आवश्यक है। यदि ये योजनाएँ सही ढंग से लागू हों, तो ग्रामीण और शहरी शिक्षा के बीच की खाई को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

इन समाधानों के प्रभावी क्रियान्वयन से भारतीय शिक्षा प्रणाली अधिक समावेशी, आधुनिक और कौशल-उन्मुख बन सकती है, जिससे देश का समग्र विकास संभव हो सकेगा।

## **निष्कर्ष (Conclusion)**

कौशल-आधारित शिक्षा आज के बदलते वैश्विक परिदृश्य में केवल एक शैक्षिक विकल्प नहीं, बल्कि एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है। यह शिक्षा प्रणाली छात्रों को केवल सैद्धांतिक ज्ञान तक सीमित न रखकर उन्हें व्यावहारिक अनुभव, तकनीकी दक्षता, रचनात्मकता और समस्या-समाधान जैसी महत्वपूर्ण क्षमताओं से सुसज्जित करती है। इससे न केवल उनकी रोजगार क्षमता (Employability) बढ़ती है, बल्कि वे आत्मनिर्भर और नवाचारशील नागरिक भी बनते हैं, जो देश की प्रगति में सक्रिय योगदान दे सकते हैं।

इसके साथ ही, भारत में ग्रामीण और शहरी शिक्षा के बीच मौजूद गहरी खाई एक गंभीर चुनौती है, जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। यह असमानता केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक विकास में भी बाधा उत्पन्न करती है। यदि ग्रामीण क्षेत्रों को समान संसाधन, आधुनिक तकनीक, योग्य शिक्षक और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराई जाए, तो देश का हर नागरिक समान अवसर प्राप्त कर सकता है।

वर्तमान समय की आवश्यकता है कि शिक्षा प्रणाली को अधिक समावेशी (Inclusive), व्यावहारिक (Practical) और कौशल-उन्मुख (Skill-Oriented) बनाया जाए। इसके लिए सरकार, शैक्षणिक संस्थानों और समाज को मिलकर कार्य करना होगा। नई शिक्षा नीतियों का प्रभावी क्रियान्वयन, डिजिटल शिक्षा का विस्तार और व्यावसायिक प्रशिक्षण का समुचित विकास इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम साबित हो सकते हैं।

यदि इन सभी पहलुओं पर गंभीरता से कार्य किया जाए, तो भारत न केवल अपनी शिक्षा प्रणाली को मजबूत बना सकता है, बल्कि एक मजबूत, आत्मनिर्भर और ज्ञान-आधारित अर्थव्यवस्था के रूप में वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान को और अधिक सुदृढ़ कर सकता है।

### संदर्भ (References)

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP 2020) : भारत सरकार द्वारा जारी यह नीति शिक्षा प्रणाली में व्यापक सुधार का आधार है, जिसमें कौशल-आधारित शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और समग्र विकास पर विशेष बल दिया गया है।
2. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार (Ministry of Education, Government of India) : सरकारी रिपोर्टें, वार्षिक शिक्षा रिपोर्ट (ASER), योजनाएँ जैसे सर्व शिक्षा अभियान, पीएम-श्री योजना तथा डिजिटल इंडिया से संबंधित दस्तावेज।
3. स्किल इंडिया मिशन (Skill India Mission) : राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन की रिपोर्टें, प्रशिक्षण कार्यक्रमों का डेटा और रोजगारयोग्यता से संबंधित आंकड़े।
4. नीति आयोग (NITI Aayog) रिपोर्ट्स : शिक्षा सुधार, मानव संसाधन विकास, डिजिटल शिक्षा और कौशल विकास से संबंधित नीति दस्तावेज।
5. राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO), भारत सरकार : साक्षरता दर, स्कूल नामांकन, ड्रॉपआउट दर और ग्रामीण-शहरी शिक्षा असमानता से जुड़े आंकड़े।
6. आर्थिक सर्वेक्षण (Economic Survey of India) : शिक्षा, रोजगार और कौशल विकास से संबंधित आर्थिक विश्लेषण और सरकारी डेटा।
7. यूनिसेफ (UNICEF) रिपोर्ट्स : भारत में बाल शिक्षा, स्कूल ड्रॉपआउट, ग्रामीण शिक्षा और समान अवसरों पर अध्ययन।
8. यूनेस्को (UNESCO) ग्लोबल एजुकेशन मॉनिटरिंग रिपोर्ट : वैश्विक शिक्षा प्रणाली, डिजिटल विभाजन और कौशल-आधारित शिक्षा पर अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण।
9. विश्व बैंक (World Bank) एजुकेशन रिपोर्ट्स : भारत में शिक्षा गुणवत्ता, मानव पूंजी विकास और कौशल प्रशिक्षण से संबंधित अध्ययन।
10. एनसीईआरटी (NCERT) पाठ्यक्रम एवं शैक्षिक सामग्री : विद्यालयी शिक्षा, नई पाठ्यपुस्तकें और कौशल-आधारित शिक्षण मॉडल।
11. यूजीसी (UGC) रिपोर्ट्स और उच्च शिक्षा नीति दस्तावेज : उच्च शिक्षा में सुधार, व्यावसायिक पाठ्यक्रम और अनुसंधान आधारित शिक्षा से संबंधित सामग्री।

12. एआईसीटीई (AICTE) दिशा-निर्देश एवं रिपोर्ट्स : तकनीकी शिक्षा, इंजीनियरिंग शिक्षा और कौशल विकास कार्यक्रमों पर आधारित दस्तावेज।
13. ASER रिपोर्ट (Annual Status of Education Report) : भारत में ग्रामीण शिक्षा की स्थिति, सीखने की गुणवत्ता और स्कूल स्तर के आंकड़े।
14. विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध पत्र (Research Journals) : शिक्षा, कौशल विकास, डिजिटल लर्निंग और ग्रामीण-शहरी असमानता पर प्रकाशित अकादमिक लेख।
15. ऑनलाइन शैक्षणिक स्रोत एवं ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म्स : डिजिटल शिक्षा, कौशल प्रशिक्षण और आधुनिक शिक्षण पद्धतियों से संबंधित अध्ययन सामग्री।

Contact No. 9636705124



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 90-100

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

---

# Unsung Heroines of Resistance : A Historical Study of the Personality and Work of Women Freedom Fighters of Bihar and Their Contemporary Relevance for Young Women

Vikash Kumar Roushan

Research Scholar, Sona Devi University.

---

## Abstract :

The history of India's freedom struggle is often narrated through the contributions of prominent male leaders, leaving the role of women comparatively underrepresented. This paper seeks to recover and critically analyse the lives, personalities, and contributions of women freedom fighters from Bihar during the British colonial period. By focusing on figures such as Tara Rani Srivastava, Prabhavati Devi, Saraswati Devi, and Anees Fatima, the study highlights how these women challenged both colonial authority and deeply embedded patriarchal norms. Their participation ranged from grassroots mobilisation and political activism to imprisonment and sacrifice. The paper also examines the socio-political conditions that shaped their involvement and the strategies they employed within nationalist movements such as the Non-Cooperation Movement, Civil Disobedience Movement, and Quit India Movement. Further, the study evaluates the contemporary relevance of these historical figures for today's female youth, particularly in the context of empowerment, leadership, education, and civic participation. By situating their contributions within a broader feminist and postcolonial framework, the paper argues that these women offer powerful models of resistance, resilience, and ethical leadership. Their legacy continues to inspire young women to engage actively in social transformation and nation-building.

## Keywords :

Women Freedom Fighters, Bihar, Nationalism, Gender Resistance, Youth Empowerment, Colonial India

## 1. Historical Background of Women's Participation in Bihar's Freedom Movement :

The emergence of women as active participants in Bihar's freedom movement must be situated within the broader socio-cultural transformations that unfolded in nineteenth and early twentieth-century India. Although Bihar was often perceived as a socially conservative region, it was not insulated from reformist currents that gradually questioned entrenched hierarchies of caste and gender. The spread of education, the influence of reform movements, and the circulation of nationalist ideas through print culture collectively contributed to a slow yet perceptible shift in women's social positioning. These developments did not immediately dismantle patriarchal constraints; however, they created the intellectual and moral conditions that enabled women to imagine a more participatory role in public life.

The Indian freedom struggle was not merely a political movement; it was also a social revolution that transformed gender roles across the subcontinent. Bihar, a region deeply embedded in India's civilisational history, emerged as a significant centre of anti-colonial resistance. While male leaders such as Rajendra Prasad are widely recognised, the contributions of women remain relatively marginalised in mainstream historiography. This marginalisation reflects not only archival silences but also the gendered nature of historical narration, which has traditionally privileged male agency over female participation. Therefore, the recovery of women's roles in Bihar's freedom movement is essential for constructing a more inclusive and accurate historical account.

Women in Bihar began participating actively in the freedom movement from the early twentieth century, particularly after the influence of Mahatma Gandhi's mass mobilisation strategies. Gandhi's emphasis on inclusivity encouraged women to step into the public sphere, breaking traditional domestic boundaries. His methods—grounded in non-violence, moral discipline, and collective action—allowed women to engage in political activity without entirely abandoning socially sanctioned roles. As a result, women from both urban and rural backgrounds engaged in protests, boycotts, and nationalist campaigns. They participated in movements such as the Non-Cooperation Movement (1920–22), Civil Disobedience Movement (1930–34), and the Quit India Movement (1942) (Kumari 12).

The Champaran Satyagraha of 1917, although primarily focused on agrarian exploitation, played a foundational role in shaping political consciousness in Bihar. While women's direct participation in this movement was limited, its symbolic significance cannot be overstated. It introduced Gandhian methods of resistance to the region and demonstrated the efficacy of collective mobilisation against colonial injustice. The visibility of such resistance created a ripple effect, gradually encouraging women to perceive themselves as potential participants in the nationalist struggle. In this sense, Champaran functioned as a preparatory moment that facilitated the later expansion of women's political

engagement.

The participation of women in Bihar was not limited to symbolic acts. They actively mobilised communities, organised meetings, and promoted swadeshi ideals such as the use of khadi. Many women also courted arrest, demonstrating their commitment to the nationalist cause. For instance, women in Bihar boycotted foreign goods, picketed liquor shops, and participated in salt satyagrahas (Pathshala 4).

These activities were significant not merely for their immediate political impact but also for their transformative implications within the social sphere. By engaging in boycott movements and promoting indigenous production, women redefined domestic practices as acts of political resistance. The act of spinning khadi, for example, became both a symbol of economic self-reliance and a visible assertion of nationalist identity. In this manner, the boundaries between the private and public domains were blurred, allowing women to participate in the freedom struggle while simultaneously renegotiating their roles within the household.

Collective participation constituted another defining feature of women's involvement in Bihar. Women frequently organised themselves into groups, thereby fostering a sense of solidarity and mutual support. These collective formations were crucial in overcoming social inhibitions that had historically restricted women's mobility. Through participation in meetings, processions, and community gatherings, women developed organisational skills and leadership capacities. Such experiences not only strengthened the nationalist movement but also contributed to the emergence of women as active agents within the public sphere.

One of the remarkable features of women's participation in Bihar was its inclusivity across caste, class, and religious lines. Women from diverse backgrounds—elite, middle-class, and rural—joined the movement. This inclusivity not only strengthened the nationalist struggle but also challenged rigid social hierarchies. The mobilisation of women was often facilitated by local leaders who encouraged them to take part in public demonstrations and political activities. While structural inequalities persisted, the shared objective of national liberation created spaces for interaction and cooperation that were otherwise constrained by social divisions.

In rural Bihar, women's participation assumed particularly significant dimensions. Despite limited access to formal education, rural women displayed considerable political awareness and organisational ability. They utilised culturally embedded forms of communication, such as folk songs, storytelling, and informal gatherings, to disseminate nationalist ideas. These methods ensured that the message of resistance permeated even the most remote areas. The involvement of rural women thus underscores the व्यापक and deeply rooted nature of the freedom movement in Bihar.

Furthermore, the role of women extended beyond visible activism. Many women served as messengers, shelter providers, and organisers working behind the scenes. They ensured the continuity of underground networks, particularly during periods of intense repression by colonial authorities. Their contributions, though less visible, were crucial to the success of the movement.

This dimension of women's participation became especially prominent during the Quit India Movement of 1942. With the arrest of prominent leaders, the आन्दोलन entered a more decentralised and clandestine phase. Women played a vital role in sustaining this phase by maintaining communication networks, organising secret meetings, and providing logistical support to activists. Their ability to operate discreetly, often under the surveillance of colonial authorities, highlights their strategic importance within the movement.

The British administration responded to women's activism with repression, including arrests, imprisonment, and violence. However, such measures often strengthened the resolve of women, who continued to participate despite risks. Records indicate that numerous women from Bihar were imprisoned during the Quit India Movement, highlighting the scale of their involvement (Gurumantra 6).

Imprisonment, rather than deterring participation, frequently became a site of political education and solidarity. Women who experienced incarceration often emerged with a heightened sense of commitment and a deeper understanding of the nationalist cause. Their experiences contributed to the formation of a collective identity grounded in resistance and sacrifice.

It is also necessary to acknowledge the personal and emotional dimensions of women's participation. Engagement in the freedom movement required women to negotiate familial expectations, societal norms, and the risks associated with political activism. Their decisions were often marked by profound moral conviction and a willingness to endure hardship. Such experiences reflect a significant transformation in self-perception, as women moved from being passive subjects within a patriarchal order to active agents of historical change.

Thus, the historical background of women's participation in Bihar's freedom movement reveals a dynamic and multifaceted engagement. It was not merely an extension of male leadership but a significant force in its own right. These women not only contributed to India's independence but also initiated a transformation in gender relations, laying the foundation for future feminist movements. Their participation redefined the contours of political action and social identity, leaving behind a legacy that continues to inform contemporary discussions on gender, agency, and nationhood.

## **2. Personality and Contributions of Major Women Freedom Fighters of Bihar :**

The contributions of women freedom fighters from Bihar are best understood through an

examination of individual personalities whose lives embody courage, sacrifice, and leadership. Among these, Tara Rani Srivastava stands out as a symbol of unwavering determination. During the Quit India Movement, she continued a protest march even after her husband was fatally wounded, demonstrating extraordinary resilience and commitment to the nationalist cause (Gandhi.org). Her act was not merely an instance of personal bravery; it symbolised the larger moral strength that women brought into the freedom struggle. In continuing the march under such tragic circumstances, she transformed personal grief into political resistance, thereby embodying the Gandhian ideal of fearless non-violence.

Prabhavati Devi, another prominent figure, played a crucial role in mobilising women and promoting Gandhian ideals. Closely associated with Jayaprakash Narayan and Mahatma Gandhi, she dedicated her life to the freedom struggle and social reform. She organised women volunteers and encouraged them to participate actively in nationalist activities. Her work exemplifies the intersection of political activism and social reform. Beyond her visible contributions to political mobilisation, Prabhavati Devi's life reflected a deep commitment to ethical living and community service. She was instrumental in promoting self-reliance among women and emphasised the importance of discipline, simplicity, and collective welfare. Her engagement with Gandhian institutions further illustrates how women freedom fighters were not only participants in political आन्दोलन but also architects of alternative social visions.

Saraswati Devi also emerged as a significant leader, particularly during the Civil Disobedience Movement. She inspired many women to join the movement and contributed to the spread of khadi and nationalist ideology. Her election to the Bihar Legislature after independence reflects her continued commitment to public service (PW Live). Saraswati Devi's trajectory from activist to legislator is particularly significant, as it demonstrates the continuity between the freedom struggle and post-independence governance. Her political career indicates that the leadership skills developed during the आन्दोलन were not confined to the colonial period but extended into the shaping of democratic institutions in independent India. In this sense, she represents a generation of women who successfully transitioned from resistance to reconstruction.

Anees Fatima represents another dimension of women's participation in Bihar. As a Muslim woman, she not only contributed to the freedom struggle but also advocated for women's education and rights. Her election as one of the first female legislators from Bihar highlights her pioneering role in both politics and social reform (Khan). Her presence within the nationalist movement underscores the inclusive character of the struggle, which brought together individuals from diverse religious and cultural backgrounds. Anees Fatima's emphasis on education is particularly noteworthy, as it highlights the link between political freedom and intellectual empowerment. She recognised

that without access to education, women would remain marginalised even in an independent nation. Thus, her work extended beyond immediate political objectives to address long-term social inequalities.

In addition to these well-known figures, numerous lesser-known women played vital roles in the freedom movement. Figures such as Vindhyavasini Devi, Ram Pyari Devi, and Bhagwati Devi contributed to various movements and helped mobilise local communities (JASSR Study). Their contributions demonstrate that the freedom struggle was a collective effort involving countless individuals whose names are often absent from mainstream narratives. These women, though not widely documented, were integral to the functioning of the movement at the grassroots level. They organised local gatherings, disseminated information, and encouraged participation among ordinary people. Their efforts ensured that the movement was not confined to elite circles but reached a broad section of society.

The significance of these lesser-known figures lies not only in their contributions but also in what their stories reveal about the nature of the freedom struggle itself. It was not a movement led solely by prominent leaders but a mass आन्दोलन sustained by the participation of ordinary individuals. Women at the grassroots level played a crucial role in maintaining this momentum. Their work often involved considerable risk, including the threat of arrest, social ostracism, and economic hardship. Yet, they continued to participate, driven by a sense of duty and collective responsibility.

The personalities of these women were characterised by resilience, courage, and a strong sense of social responsibility. They navigated multiple challenges, including colonial oppression and patriarchal constraints. Their ability to balance personal responsibilities with public activism highlights their extraordinary strength and determination. In many cases, these women had to negotiate resistance within their own families and communities before confronting colonial authority. This dual struggle—against external domination and internal restriction—adds a significant dimension to their contributions.

Another defining feature of these personalities was their adaptability. Women freedom fighters in Bihar employed a variety of strategies depending on the circumstances. While some participated in public demonstrations and protests, others engaged in organisational and support roles. This flexibility allowed them to contribute effectively to the movement while navigating social constraints. It also reflects a pragmatic understanding of resistance, where the choice of action was shaped by both opportunity and necessity.

Moreover, their contributions were not limited to political activities. Many of these women engaged in social reform, education, and community development. They recognised that true

independence required not only political freedom but also social transformation. Initiatives related to literacy, health, and economic self-reliance were often integrated into their activism. By addressing these issues, they sought to create a more equitable and just society. This holistic approach distinguishes their contributions from purely political activism and highlights their broader vision of nation-building. The ethical dimension of their work is also worth emphasising. Many women freedom fighters were deeply influenced by Gandhian principles such as सत्य (truth), अहिंसा (non-violence), and स्वावलम्बन (self-reliance). These principles guided their actions and shaped their approach to both political and social issues. Their commitment to these ideals not only strengthened the moral foundation of the movement but also provided a framework for personal conduct and community life.

Furthermore, the legacy of these women extends beyond their immediate contributions to the freedom struggle. Their lives have continued to inspire subsequent generations, serving as models of courage, integrity, and leadership. By challenging both colonial and patriarchal structures, they opened up new possibilities for women's participation in public life. Their achievements laid the groundwork for the expansion of women's rights and opportunities in independent India.

In conclusion, the study of these personalities reveals the diverse and multifaceted nature of women's contributions to the freedom struggle in Bihar. Their lives serve as powerful examples of courage and leadership, offering valuable lessons for future generations. By examining both well-known and lesser-known figures, it becomes evident that the freedom struggle was sustained by a wide spectrum of contributions, each of which played a vital role in achieving independence. These women were not merely participants in history; they were active creators of it, shaping the course of the nationalist movement and leaving behind a legacy that continues to resonate in contemporary discussions on gender, citizenship, and social justice.

### **3. Gender, Resistance, and Social Transformation :**

The participation of women in Bihar's freedom movement must be understood within the broader context of gender relations and social transformation. Colonial India was characterised by deeply entrenched patriarchal norms that restricted women's mobility and participation in public life. The freedom struggle provided an opportunity for women to challenge these norms and assert their agency.

Women's involvement in nationalist movements represented a form of resistance not only against colonial rule but also against gender inequality. By stepping into the public sphere, women disrupted traditional notions of femininity and redefined their roles within society. This transformation was particularly significant in regions like Bihar, where social conservatism was deeply rooted.

The concept of "gendered resistance" is crucial in understanding this phenomenon. Women's

participation in the freedom movement was often shaped by their social roles and cultural expectations. For instance, activities such as spinning khadi and boycotting foreign goods were seen as extensions of domestic responsibilities, making them socially acceptable forms of resistance. However, women also engaged in more direct forms of activism, including protests, marches, and imprisonment.

The intersection of gender and nationalism created new spaces for women's empowerment. Nationalist leaders encouraged women's participation, recognising their potential to mobilise communities and strengthen the movement. At the same time, women used this opportunity to assert their rights and challenge patriarchal structures.

However, it is important to note that women's participation was not always fully recognised or valued. Historical narratives often marginalise their contributions, focusing primarily on male leaders. This marginalisation reflects broader patterns of gender inequality in historiography.

Despite these challenges, women's participation in the freedom movement led to significant social changes. It contributed to the emergence of women's organisations, increased access to education, and greater political participation. These changes laid the foundation for the women's rights movement in independent India.

Thus, the freedom struggle in Bihar can be seen as a site of both political and social transformation. Women's participation not only contributed to India's independence but also challenged existing gender norms, paving the way for greater equality.

#### **4. Relevance of These Women Freedom Fighters for Present Female Youth :**

The legacy of women freedom fighters from Bihar holds immense relevance for contemporary female youth. In an era marked by rapid social and economic changes, their lives offer valuable lessons in resilience, leadership, and social responsibility.

Firstly, these women serve as powerful role models for young women. Their courage and determination demonstrate that individuals can overcome significant challenges and contribute to societal change. In a context where gender inequality persists, their stories inspire young women to pursue their aspirations and assert their rights.

Secondly, the emphasis on education and self-reliance in the lives of these women is particularly relevant today. Figures like Anees Fatima advocated for women's education and empowerment, recognising its importance for social progress. In contemporary society, education remains a key tool for empowerment, enabling women to participate fully in economic and political life.

Thirdly, the spirit of civic engagement demonstrated by these women is highly relevant in today's democratic context. Their active participation in political movements highlights the importance of civic responsibility and public engagement. Young women can draw inspiration from their example

to participate in social and political processes, contributing to nation-building.

Moreover, the intersection of nationalism and social reform in their work offers valuable insights for contemporary activism. These women recognised that true freedom required addressing social inequalities and injustices. This perspective is particularly relevant in addressing contemporary issues such as gender violence, economic inequality, and environmental challenges.

The relevance of these women also extends to the realm of identity and representation. By highlighting their contributions, it is possible to challenge dominant narratives and promote a more inclusive understanding of history. This, in turn, can empower young women by providing them with a sense of belonging and identity.

In conclusion, the legacy of women freedom fighters from Bihar offers valuable lessons for contemporary female youth. Their lives serve as a source of inspiration and guidance, encouraging young women to engage actively in social transformation and nation-building.

## 5. **Conclusion :**

The historical study of women freedom fighters from Bihar reveals a deeply layered and compelling narrative that goes far beyond the conventional understanding of India's struggle for independence. It uncovers a history shaped not only by political confrontation with colonial power but also by an internal social awakening that redefined the position of women within society. These women did not merely participate in the nationalist movement as passive supporters; rather, they emerged as active agents who negotiated complex social realities while contributing meaningfully to the larger goal of freedom. Their involvement reflects a synthesis of courage, moral conviction, and a profound sense of responsibility towards both nation and community.

One of the most striking aspects of their contribution lies in the way they simultaneously challenged two forms of domination—colonial rule and patriarchal control. In a society where women's roles were largely confined to the domestic sphere, their entry into public political life marked a significant rupture in traditional norms. By participating in protests, organising movements, and even facing imprisonment, they demonstrated that the struggle for national independence was inseparable from the struggle for social dignity and gender justice. Their actions, therefore, must be understood not only as political interventions but also as transformative social acts that questioned deeply entrenched inequalities.

At the same time, it is important to recognise that the contributions of these women have not always received the attention they deserve within mainstream historical narratives. The marginalisation of their roles is indicative of a broader tendency within historiography to privilege certain forms of leadership and visibility over others. Women's contributions, particularly those carried out at the

grassroots level or within informal networks, have often remained undocumented or undervalued. This absence is not merely an issue of historical oversight; it reflects the structural biases that have shaped the writing of history itself. By bringing these stories to the forefront, the present study attempts to address this imbalance and to contribute to a more inclusive and representative understanding of the past.

Moreover, the recovery of these histories is not simply an academic exercise; it carries significant implications for contemporary society. The lives of these women offer enduring lessons in resilience, ethical leadership, and collective action. In a world that continues to grapple with issues such as gender inequality, social injustice, and political instability, their examples remain remarkably relevant. They remind us that meaningful change often requires both personal sacrifice and collective effort. Their ability to persevere in the face of adversity, to organise communities, and to maintain a commitment to justice provides a valuable framework for addressing present-day challenges.

The relevance of these women freedom fighters is particularly significant for the younger generation. At a time when questions of identity, empowerment, and participation are increasingly central to public discourse, their lives offer a powerful source of inspiration. They demonstrate that leadership is not defined solely by formal authority but by the willingness to act with courage and integrity in the face of injustice. For young women, in particular, these historical figures provide role models who exemplify the possibility of overcoming structural barriers and asserting one's agency. Their stories encourage a reimagining of what it means to participate in society, not as passive observers but as active contributors to social transformation.

Another important dimension of their legacy lies in their understanding of freedom as a holistic concept. For these women, independence was not limited to the end of colonial rule; it also encompassed the creation of a more just and equitable society. This vision is evident in their involvement in activities related to education, social reform, and community development. They recognised that political liberation would remain incomplete without addressing issues such as illiteracy, poverty, and social discrimination. This broader perspective continues to hold relevance today, reminding us that the pursuit of freedom must be accompanied by efforts to ensure inclusivity and social justice.

Furthermore, the recognition and celebration of these women's contributions are essential for fostering a more balanced and equitable historical consciousness. History, as a discipline, plays a crucial role in shaping collective memory and identity. When certain voices are excluded or marginalised, it results in an incomplete and often distorted understanding of the past. By acknowledging the role of women freedom fighters from Bihar, it becomes possible to challenge

dominant narratives and to construct a more nuanced account of the freedom struggle. Such an approach not only enhances historical accuracy but also contributes to the broader goal of social equality.

It is also worth noting that the legacy of these women extends beyond the boundaries of their immediate historical context. Their lives continue to resonate in contemporary movements for gender equality, social justice, and democratic participation. The values they embodied—courage, integrity, and a commitment to collective welfare—remain central to the functioning of any just society. In this sense, their contributions are not confined to the past but continue to influence the present and shape the future.

In conclusion, the women freedom fighters of Bihar represent a powerful and enduring legacy of resistance, resilience, and transformation. Their stories challenge us to rethink the nature of historical agency and to recognise the diverse forms of contribution that have shaped the nation's past. They remind us that history is not merely a record of events but a living repository of experiences, ideas, and values that continue to inform our understanding of the present. By engaging with their legacy, contemporary society can draw inspiration to address ongoing challenges and to work towards a more inclusive and equitable future. The struggle for freedom, as exemplified by these women, is not a completed chapter but an ongoing process that requires constant reflection, participation, and commitment.

### Works Cited :

1. "Contribution of Women Freedom Fighters from Bihar in India's Independence Movement." *IJCRT*, 2022.
2. "Contribution of Women in Bihar Freedom Movement." *ResearchGate*, 2024.
3. "Forgotten Women Freedom Fighters of Bihar: Gender, Resistance and Nationalism." *JASSR*, 2025.
4. "Freedom Fighters of Bihar." *PW Live*, 2024.
5. Khan, Afroz. "Anees Fatima: Courageous Freedom Fighter." *New Age Islam*, 2025.
6. "Role of Women of Bihar in Freedom Movement." *Scribd Study Document*.
7. "Role of Women of Bihar in Indian Freedom Struggle." *BPSC Pathshala*.
8. "Shrimati Saraswati Devi and Sadhana Devi's Participation." *Indian Culture Portal*.
9. "Unsung Women Heroes of Freedom Struggle." *MKGandhi.org*.
10. "Women Freedom Fighters of Bihar." *CareerIndia*, 2022.



## उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता पर आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के प्रभाव का अध्ययन

सुप्रीति चावला, शोधकर्त्री

डॉ. प्रीति गोवर, शोध निर्देशिका, प्रोफेसर

टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर।

वर्तमान शोध में शोधकर्त्री ने उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता पर आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के प्रभाव का अध्ययन किया है। न्यादर्श के रूप में 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया है। जिसमें श्रीगंगानगर जिले तक सीमित रखा गया है। जिसमें 300 ग्रामीण विद्यार्थी व 300 शहरी विद्यार्थियों को लिया गया है। इस शोध के लिये सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। आंकड़ों के एकत्रीकरण के लिये मानकीकृत उपकरण का उपयोग किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु सांख्यिकीय विधियों के रूप में मध्यमान, मानक विचलन, टी-मूल्य एवं सह-सम्बन्ध का प्रयोग किया गया है। विश्लेषण में पाया गया है कि सरकारी एवं गैर-सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की प्रसन्नता और आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति सार्थक अंतर नहीं है। प्रसन्नता व आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में घनिष्ठ एवं समान दिशा में सम्बन्ध पाया गया। इस प्रकार दोनों चरों के मध्य प्राप्त सहसम्बन्ध सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसका तात्पर्य है कि जैसे-जैसे प्रसन्नता का स्तर बढ़ता है वैसे-वैसे व्यक्तियों में आशावादी प्रवृत्ति में वृद्धि और निराशावादी प्रवृत्ति में कमी देखी जाती है।

### प्रस्तावना :-

आशावादी दृष्टिकोण वाला व्यक्ति हमेशा प्रसन्न रहता है। क्योंकि वह महेशा सही सोच रखेगा इसलिए उसके चेहरे पर उदासी नहीं आएगी। वह निराश नहीं होगा। नए कार्य को करने के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं उन्हें लगता है कि ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा और वह उस कार्य को बहुत ही प्रसन्नता से करते हैं।

आशावादी दृष्टिकोण जीवन के प्रति सकारात्मक व आशावादी दृष्टिकोण की विशेषता है, यह विश्वास करते हुए कि अच्छी चीजें होंगी व चुनौतियों पर काबू पाया जा सकता है। इसमें प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अनुकूल परिणामों की अपेक्षा करना व स्थितियों के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करना शामिल है।

प्रसन्नता भावनात्मक खुशहाली की एक अवस्था है, जो सकारात्मक भावनाओं, संतोष व पूर्णता से जुड़ी होती है। यह सिर्फ एक क्षणभंगुर भावना नहीं है, बल्कि किसी व्यक्ति के जीवन व उपलब्धियों का एक व्यापक मूल्यांकन भी है, जिसे अक्सर व्यक्तिपरक प्रसन्नता कहा जाता है। खुशी स्थिर नहीं होती है व जीवनभर उतार-चढ़ाव हो सकता है, अध्ययनों से यू-आकार का पैटर्न मिलता है, जहाँ युवावस्था व बुढ़ापे में खुशी

अधिक होती है व मध्य जीवन में कम होती जाती है।

#### **अध्ययन का महत्व :-**

आधुनिक समाज में विद्यार्थियों को शैक्षिक प्रतिस्पर्धा, परीक्षा दबाव, करियर अनिश्चितता तथा सामाजिक अपेक्षाओं का सामना करना पड़ रहा है। इन परिस्थितियों का सीधा प्रभाव उनकी प्रसन्नता पर पड़ता है। प्रसन्नता केवल भावनात्मक संतुष्टि नहीं बल्कि मानसिक संतुलन, कार्यक्षमता एवं जीवन-समायोजन का महत्वपूर्ण संकेतक है। अतः विद्यार्थियों की प्रसन्नता का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है, जिससे यह जाना जा सके कि वे मानसिक रूप से कितने संतुलित, संतुष्ट एवं प्रेरित हैं।

#### **समस्य कथन :-**

“उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता पर आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के प्रभाव का अध्ययन।”

#### **शोध के उद्देश्य :-**

1. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रसन्नता का लिंग, क्षेत्र व विद्यालय के प्रकार के संदर्भ में अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति का क्षेत्र, लिंग व विद्यालय के प्रकार के संदर्भ में अध्ययन।
3. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रसन्नता और आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

#### **शोध की परिकल्पनाएँ :-**

1. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रसन्नता का क्षेत्र के प्रकार के संदर्भ में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाता।
2. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति का क्षेत्र के प्रकार के संदर्भ में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रसन्नता और आशावादी व निराशावादी में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

#### **शोध में प्रयुक्त विधि :-**

प्रस्तुत शोधकार्य में शोध अध्ययन समस्या के उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु वर्णात्मक विधि के अन्तर्गत सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया जायेगा। क्योंकि इस विधि से पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति की जा सतकी है।

#### **उपकरण :-**

1. आशावादी व निराशावादी स्तर मापनी – डी.एस. पराशर।
2. प्रसन्नता – आर.एल. भारद्वाज व पूनम दास।

#### **अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी :-**

1. मध्यमान
2. मानक विचलन

3. टी-मूल्य
4. सहसम्बन्ध

**तथ्यों का विश्लेषण :-**

**परिकल्पना संख्या 1 :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यार्थियों की प्रसन्नता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

**सारणी - 1**

चर	कुल विद्यार्थी	Mean	S.D.	T-Value	सार्थकता का स्तर	
					.05	.01
सरकारी विद्यार्थी	300	98.41	23.40	0.236	स्वीकृत	स्वीकृत
गैर सरकारी विद्यार्थी	300	97.95	24.42			

प्रस्तुत तालिका के अनुसार उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर-सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों की प्रसन्नता के माध्य मान क्रमशः 98.41 व 97.95 पाए गए। समूहों का मानक विचलन 23.40 एवं 24.42 है। इसके आधार पर टी-मूल्य ज्ञात किया गया। प्राप्त टी-मूल्य 0.236 है, जो 0.05 तथा 0.01 दोनों सार्थकता के स्तर के मूल्य से कम है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं गैर-सरकारी विद्यार्थियों की प्रसन्नता में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना को स्वीकृत किया जाता है।

**परिकल्पना 2 :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यार्थियों की आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

**सारणी - 2**

चर	कुल विद्यार्थी	Mean	S.D.	T-Value	सार्थकता का स्तर	
					.05	.01
सरकारी विद्यार्थी	300	30.86	7.11	0.85	स्वीकृत	स्वीकृत
गैर सरकारी विद्यार्थी	300	31.38	7.67			

प्रस्तुत तालिका में सरकारी विद्यार्थियों एवं गैर-सरकारी विद्यार्थियों के आशावाद-निराशावाद स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। आंकड़ों के अनुसार सरकारी विद्यार्थियों व गैर-सरकारी विद्यार्थियों का मध्यमान 30.86 व 31.38 पाया गया, जिससे दोनों समूहों के औसत स्तर में अत्यन्त अंतर परिलक्षित होता है। मानक

विचलन के मान क्रमशः 7.11 व 7.67 है, जो दोनों समूहों में अंकों के प्रसार को दर्शाते हैं। माध्याकों के अंतर की सांख्यिकीय सार्थकता की जांच हेतु टी-परीक्षण किया गया, जिसमें टी-मान 0.85 प्राप्त हुआ। यह टी-मान 0.65 एवं 0.01 दोनों स्तरों पर असार्थक पाया गया। अतः निष्कर्ष निकाला जाता है कि सरकारी एवं गैर-सरकारी विद्यार्थियों के आशावाद निराशावाद स्तर में महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

### परिकल्पना संख्या 3

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता और आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

### सारणी 3

चर	कुल विद्यार्थी	Mean	S.D.	r	उच्च धनात्मक सहसम्बन्ध
प्रसन्नता	600	98.18	23.91	0.80	
आशावादी व निराशावादी	600	30.12	7.39		

प्रसन्नता एवं आशावाद निराशावाद चर के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए सहसम्बन्ध गुणांक का प्रयोग किया गया। प्रसन्नता चर व अशावाद-निराशावाद चर का मध्यमान 98.18 व 30.12 तथा मानक विचलन 23.91 व 7.39 प्राप्त हुआ। दोनों चरों के मध्य प्राप्त सहसम्बन्ध गुणांक का मान .80 है। प्राप्त सहसम्बन्ध गुणांक का मान उच्च एवं धनात्मक है, जो यह स्पष्ट करता है कि प्रसन्नता और आशावाद-निराशावाद के मध्य एक सशक्त सकारात्मक सहसम्बन्ध विद्यमान है। इसका तात्पर्य यह है कि जैसे-जैसे प्रसन्नता का स्तर बढ़ता है, वैसे-वैसे व्यक्तियों में आशावादी प्रवृत्ति में वृद्धि तथा निराशावादी प्रवृत्ति में कमी देखी जाती है। अतः यह निष्कर्ष निकाला गया कि अध्ययन लिए गए नमूने में प्रसन्नता का आशावाद-निराशावाद से घनिष्ठ एवं समान दिशा में सम्बन्ध पाया गया। इस प्रकार दोनों चरों के मध्य प्राप्त सहसम्बन्ध सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण है तथा शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

**निष्कर्ष :-**

**परिकल्पना 1 :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर-सरकारी विद्यार्थियों की प्रसन्नता में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

**निष्कर्ष :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर-सरकारी विद्यार्थियों की प्रसन्नता में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। अतः परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है।

**परिकल्पना 2 :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यार्थियों की आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में

सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

#### **निष्कर्ष :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर-सरकारी विद्यार्थियों की आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया। अतः परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है।

#### **परिकल्पना 3 :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता और आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

#### **निष्कर्ष :-**

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता तथा आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में सहसम्बन्ध ज्ञात किया गया। निष्कर्ष में निकाला गया कि प्रसन्नता तथा आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में धनात्मक सहसम्बन्ध है। अतः परिकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है व कहा जाता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता तथा आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति में सहसम्बन्ध पाया जाता है।

#### **शैक्षिक उपयोगिता :-**

शिक्षा केवल ज्ञानार्जन तक सीमित न रहकर सकारात्मक दृष्टिकोण मानसिक स्वास्थ्य व जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने की दिशा में अग्रसर होगी। स्कूलों व विश्वविद्यालयों में Student Support System को मजबूत करने की प्रेरणा मिलेगी। शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों को सुखी, संतुलित व सतत् सीखने वाला नागरिक बनाने की दिशा में काम कर सकेगी।

आशावादी व आजीवन शिक्षार्थी व्यक्ति समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकते हैं। निराशा व तनाव से मुक्त होकर शिक्षित युवा समाज में खुशहाल, सहयोगी और रचनात्मक वातावरण बना सकते हैं।

#### **संदर्भ ग्रन्थ सूची :-**

1. अब्दोलरेजा मैहमोदी (2019) – डिटरमीनेशन ऑफ द लैवल ऑफ हैपीनेस अमांग स्टूडेंट्स ऑफ शिराज यूनिवर्सिटी ऑफ मैडिकल साइंस।
2. राजाय राओ (2023) – लैवल ऑफ हैपीनेस अमांग मैडिकल स्टूडेंट्स इन बिहार अन ऑनलाईन सर्वे, जर्नल ऑफ एजुकेशन एण्ड हैल्थ प्रमोशन।
3. कोमल व्यास (2020) – ए स्टडी ऑफ द हैपीनेस अमांग द स्टूडेंट्स विद रैफरेंस टू दयर एजुकेशन लैवल एण्ड जैण्डर, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इण्डियन साइकोलॉजी, 2348–5396
4. निशा कुमारी (2018) – द हैपीनेस लेवल ऑफ स्टूडेंट्स फ्रॉम बोरेनो एडवांसेस इन सोशल साइंस, एजुकेशन एण्ड ह्यूमनिटिस रिसर्च, वॉल्यूम 304



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILINGUAL  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 106-110

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# To Study the Impact of Smart Phone Dependency on Social Adjustment of Adolescents

Varinder Kaur, Researcher

Dr. Sangeeta Agarwal, Research Guide & Associate Professor

Tantia University, Sriganaganagar

In this researcher study the Impact of Smart Phone Dependency on Social Adjustment of Adolescents. 600 students had been taken as a sample. This study is confined to Sri Ganganagar district. 300 students were taken from rural area and 300 students urban area. The survey method is used for this study. Standardized tools are used for data collection. Mean, SD, T-test and correlation are used for data analysis. The result shows that there is no significant difference in smart phone dependency and Social Adjustment of rural and urban area students. It also shows that excessive smart phone dependency adversely affect the Social Adjustment of students.

## Introduction :-

Smart phone depending is a growing concern worldwide, with a significant percentage of the population exhibiting addictive behaviour. According to recent statistics, approximately 52.8% of medical students in china have smart phone addiction, which is higher than the average prevalence of 23% among Chinese college students.

In the united states a staggering 97% of American adults own a cell phone with most responding to text within minutes. Furthermore 44.3% of Koreans reported increased cell phone usage due to the COVID-19 pandemic.

These statistics highlights the need for awareness & education about responsible smart phone use to prevent addiction & its negative consequences.

Social adjustment refers to an individual's actual attainment of those goals, including the ability to function in different social roles eg. worker, parent spouse, student to enjoy leisure & recreational activities & to care for oneself.

Smart phone dependency can significantly impact the social adjustment of students, affecting

their relationship, academic performance & overall well-being. More use of smart phone seriously affected the interaction of among persons.

### **Importance of Proposed Research :**

Studying smart phone dependency on social adjustment can provide insight into the social implications of excessive smart phone use, including its impact on relationship, communication skills & emotional intelligence. Research on smart phone dependency & social adjustment can inform the development of strategies for healthy smart phone use, promoting responsible & balanced use of technology. By investigation the relationship between smart phone dependency & social adjustment, researcher can identify potential risk factors for mental health problems & develop targeted interventions. Research findings can inform policy & practice, guiding the development of guidelines & regulations for smart phone use in various settings such as schools & workplaces.

### **Statements of Problems :-**

*“To Study the Impact of Smart Phone Dependency on Social Adjustment of Adolescents”*

### **Objectives of the Study :-**

1. To compare the smart phone depending of adolescents in relation to their locality, gender & type of school.
2. To compare the social adjustment of adolescents in relation their locality, gender & type of school.
3. To study the correlation of smart phone depending & social adjustment of adolescents.

### **Hypothesis of the Study :-**

*In the present study, the researcher has formed the following hypothesis :-*

1. There exist no significant difference in smart phone dependency of adolescents in relation to their type of school, locality & gender.
2. There exist no significant difference in social adjustment of adolescents in relation to their type of school, locality & gender.
3. There exist significant correlation between smart phone dependency & social adjustment of adolescents.

### **Research Method :-**

In the study survey method is used and information will be obtained from students.

### **Tools :-**

1. Standardized tool smart phone dependency scale – Yogita Sarwal & Hardeep Kaur Saini.
2. Standardized Tool on social adjustment inventory – Roma Pal

### **Statistics to be used in the study :-**

1. Graphical representation
2. Mean
3. Standard deviation
4. T-Test
5. Co-relation

**Analysis & Interpretation :-**

**1. Hypothesis :-**

There exist no significant difference in smart phone dependency of rural & urban students.

**Table – 1**

Variables	No. of Students	Mean	SD	T-Value	Level of Significance	
					.01	.05
Rural Students	300	140.38	17.70	0.63	Accepted	accepted
Urban Students	300	141.32	18.81			

Above table shows the mean scores, SD & t-value of two groups on the variable smart phone dependency. The mean score of rural & urban students was 140.38 & 141.32 & SD was 17.70 & 18.81. The mean scores of both groups are very close to each other, indicating nearly similar levels of smart phone dependency. To examine whether the observed difference between the mean score is statistically significant a t-test was applied. The obtained t-value is 0.63, which is lower than the critical value at both level of significance. This indicates that the difference between the two groups on smart phone dependency is not significantly statistically significant. So, hypothesis is accepted.

**2. Hypothesis :-**

There exist no significant difference in social adjustment of rural & urban students.

**Table – 2**

Variables	No. of Students	Mean	SD	T-Value	Level of Significance	
					.01	.05
Rural Students	300	91.55	7.98	0.27	Accepted	Accepted
Urban Students	300	91.20	8.47			

The table indicates that the mean scores of the two groups are 91.55 & 91.20 respectively, showing almost identical performance. The standard deviation values 7.98 & 8.47 reveal similar variability in both groups. The obtained t-value is 0.27, which is lower than the critical value at both 0.05 & 0.01 level of significance. Thus, the difference between the two groups is not statistically significant.

### 3. Hypothesis :-

There exist significant correlation between smart phone dependency & social adjustment of adolescents.

**Table – 3**

<b>Variables</b>	<b>No. of Students</b>	<b>Mean</b>	<b>SD</b>	<b>Coefficient of correlation</b>	<b>Result</b>
Smart Phone Dependency	600	140.85	36.51	- 0.38	Negative Correlation
Social Adjustment	600	91.38	16.45		

The table shows that the mean scores of smart phone dependency & social adjustment were 140.85 & 91.38 respectively. The correlation analysis revealed a negative correlation between smart phone dependency & social adjustment. Which was found to be statistically significant. This indicates that higher smart phone dependency & social adjustment. Which was found to be statistically significant. This indicates that higher smart phone dependency is associated with low levels of social adjust among adolescents. Hence, the hypothesis stating that there exists significant correlation between smart phone dependency & social adjustment of adolescents is supported.

### **Educational Implication :**

#### **(1) Strengthening Social Adjustment Through School Activities :**

Excessive smart phone dependency may negatively affect face to face interaction. Therefore, schools should promote group activities, cooperative learning, debates, sports & cultural programs to improve students social adjustment & interpersonal skills.

#### **(2) Counseling & Guidance Services :**

School counselors should identify students showing signs of smart phone dependency & provide guidance, counseling & intervention programs to improve emotional balance, creativity &

social adjustment.

**References :-**

1. Bhaskara Raw, Digurmarti & E. Sreekanth Babu (2002) : Educational interests of school students, New Delhi, Discovery Publishing House.
2. Chawla, J. (2016) : Achievement in chemistry of graders in relation to study habits, International Education & Research Journal 2(1).
3. Das, P.R. (2003) : A study of level of aspiration of deprived & non-deprived adolescents, Indian psychological review 60(1) 52-56
4. Dicedue, E. & Vande Venj (2008) : Aspiration level, probability of success & failure & expected utility, International Economic Review, 49, 683-700
6. Fecs, Gregory, J. (2012) : Predicting interest in & attitudes towards science from personality & need for cognition, Personality & Individual Differences, Vol. 52, PP. 52, PP. 771-775



# Impact of Microplastics on Soil Microfauna — A Review

**Dr. Bhavna Grover**

Assistant Professor Zoology, Dr. B.R. Ambedkar Govt. College, Sriganaganagar.

## **Abstract :**

Microplastics (MPs; particles <5 mm) are now documented across terrestrial environments and represent an emerging threat to soil biological health. MPs alter soil physical–chemical properties, interact with microbes, and are readily ingested or contacted by soil microfauna (earthworms, nematodes, collembolans, microarthropods), causing effects that range from sublethal physiological stress to changes in population and community structure. This review synthesizes recent literature on sources and fate of MPs in soils, exposure pathways for soil fauna, observed biological effects and mechanisms (physical blockage, chemical toxicity, pollutant/vector effects, and indirect impacts via habitat alteration), ecosystem-level consequences (decomposition, nutrient cycling, soil aggregation), and critical knowledge gaps. We highlight methodological inconsistencies that hamper cross-study comparisons and propose priorities for standardization and future research.

## **1. Introduction :**

Plastic production and use have created pervasive plastic debris worldwide. While marine microplastic research dominated early work, recent studies show that soils—especially agricultural soils receiving sewage sludge, compost, plastic mulches, and irrigation with contaminated water—are major reservoirs of MPs. National-scale surveys and multiple reviews now report widespread occurrence of MPs in diverse soil types and land uses. The ubiquity of MPs in soils raises concern because soil microfauna perform essential ecosystem functions (decomposition, bioturbation, nutrient mineralization) and are likely exposed through ingestion, dermal contact, and habitat alteration.

## **2. Sources, forms, and fate of microplastics in soils :**

Major sources to soils include: sewage sludge (biosolids) and wastewater irrigation, compost and digestate containing plastic fragments, plastic mulch and agricultural films, litter and fragmentation

of larger plastics, atmospheric deposition, and runoff. Once in soils, MPs can be transported vertically by bioturbation (e.g., earthworms), redistributed by tillage, and undergo weathering into smaller fragments and nanoplastics, changing their surface chemistry and reactivity. Polymer types most frequently reported in soils include polyethylene (PE), polypropylene (PP), and polystyrene (PS); shapes range from fibers and films to fragments and beads, each having different interaction potentials with fauna and soil matrices.

### 3. Exposure pathways and susceptible soil organisms :

Soil microfauna vary in size, feeding mode, and habitat, determining exposure pathways :

- **Earthworms (Lumbricidae and other families) :** Surface-feeders and burrowers ingest soil and organic matter and are known to ingest microplastic particles; their feeding and burrowing can also redistribute MPs vertically. Earthworms are the most-studied soil fauna in MP ecotoxicology.
- **Nematodes :** small, abundant, and crucial in nutrient cycling; nematodes may be exposed via ingestion of micro- and nanoplastics and through changes in microbial prey. Dose-dependent effects have been reported.
- **Collembola and microarthropods :** Microarthropod abundance and community composition can shift after MP addition to soil, mediated by changes in microhabitat structure and food quality.

Routes of exposure include direct ingestion (particles mistaken for food), indirect exposure through contaminated food resources (microbial biofilms on MPs), inhalation/adhesion for surface-dwelling fauna, and exposure to chemicals leached from polymers (additives, monomers) or sorbed pollutants (heavy metals, persistent organic pollutants).

### 4. Observed biological effects on soil microfauna

#### 4.1 Individual-level effects :

Laboratory and field studies report a range of effects :

- **Physical impacts :** Gut blockage, abrasions, reduced food intake, altered feeding behavior, and reduced assimilation efficiency have been observed especially in larger detritivores like earthworms.
- **Physiological stress :** Oxidative stress markers, altered immune responses, reduced growth and reproduction, and increased mortality in high-exposure scenarios have been documented across taxa. Nematodes often show dose-dependent reproduction and developmental disruptions.
- **Behavioral changes :** Avoidance behavior, altered burrowing, and reduced locomotion have been reported, which can influence soil structure formation.

#### 4.2 Community- and population-level effects :

Microplastic addition to soils has resulted in altered abundances and community composition

of microarthropods and nematodes in mesocosm and field observations. Some studies show declines in sensitive taxa and shifts toward communities dominated by tolerant species; others report complex, sometimes stimulatory responses depending on MP type, concentration, soil type, and time.

#### 4.3 Indirect effects via soil physical–chemical changes :

MPs change soil bulk density, porosity, water retention, and aggregate stability in a size- and shape-dependent manner. These changes modify habitat quality for soil fauna and can indirectly influence respiration rates, microbial processes, and root–fauna interactions. MPs also alter microbial community composition and function, which cascades to detritivore nutrition and nematode trophic networks.

#### 5. Mechanisms of toxicity and interaction :

- **Physical/mechanical effects :** Direct obstruction of digestive tract, abrasions, and reduced feeding efficiency. Particularly relevant for geophagous and detritivorous organisms.
- **Chemical toxicity :** Leaching of additives (plasticizers, stabilizers) and residual monomers can exert toxic effects, including endocrine and oxidative stress pathways.
- **Vector effects :** MPs sorb and later release co-contaminants (POPs, heavy metals, pesticides), effectively transporting other toxicants into soil food webs and potentially enhancing bioavailability.
- **Habitat-mediated effects :** Alteration of soil structure, moisture dynamics, and microbial food resources producing indirect consequences for fauna.

These mechanisms often act simultaneously, producing synergistic, antagonistic or additive outcomes depending on environmental context and MP characteristics.

#### 6. Ecosystem-level consequences :

Given the central roles of soil fauna in decomposition, nutrient mineralization, and soil structure formation, MP impacts on these organisms can scale up to affect ecosystem services:

- **Decomposition & nutrient cycling :** Reduced faunal activity and shifts in microbial communities can slow organic matter breakdown or change nutrient mineralization rates. Meta-analyses and experiments indicate altered carbon dynamics in MP-amended soils. [Frontiers+1](#)
- **Soil structure & aeration :** Changes in burrowing and aggregation may influence infiltration and root growth. Earthworm-mediated transport of MPs can bury plastics, altering distribution and exposure patterns.
- **Trophic transfer :** MPs ingested by microfauna can be transferred upward to predators (e.g., predatory arthropods, birds), posing a pathway for bioaccumulation of plastics and associated chemicals.

## 7. Methodological challenges and knowledge gaps :

### 7.1 Inconsistent exposure metrics :

Studies use widely varying MP types (pristine vs. weathered), particle sizes, concentrations, and units (mass vs. particle count), complicating comparisons and ecological risk assessment. Environmental relevancy of laboratory concentrations is often unclear.

### 7.2 Lack of standardized ecotoxicity endpoints :

Different biological endpoints (biomass, reproduction, enzyme activity, community metrics) and exposure durations are used; standardized endpoints and chronic exposure studies are needed to detect subtle but ecologically meaningful effects.

### 7.3 Weathering and aging effects underrepresented :

Weathered MPs (with altered surface chemistry) and nanoplastics behave differently from pristine spheres used in many lab tests. Studies need to incorporate environmentally aged particles.

### 7.4 Field-realistic and long-term studies :

Mesocosm and field investigations are fewer than lab tests; long-term, multi-trophic studies under realistic exposure conditions are scarce but essential to assess population/community-level responses and recovery potential.

### 7.5 Interaction with other stressors :

How MPs interact with climate stressors (drought, temperature), agricultural chemicals, pathogens, and land management practices is poorly understood; combined-stressor studies are needed.

## 8. Recommendations and future research priorities :

- **Standardization** : Develop agreed-upon test materials (including environmentally aged MPs), concentration units (particles kg<sup>-1</sup>), and core endpoints for soil fauna ecotoxicology.
- **Field and mesocosm research** : Prioritize long-term, field-realistic studies that track population, community, and ecosystem functions across gradients of MP contamination.
- **Multi-trophic and trophic transfer studies** : Quantify transfer rates of MPs and associated chemicals through soil food webs and to aboveground consumers. **Mechanistic toxicology** : Combine molecular biomarkers (oxidative stress, genotoxicity) with organismal and behavioral endpoints to link exposure to ecological outcomes. **Mitigation and policy-oriented research** : Evaluate management practices (compost sorting, limits on contaminated biosolids, alternatives to plastic mulches) and their effectiveness in lowering soil MP loads. National monitoring programs (like the ADEME national soils assessment) provide models for scaling surveillance.

## 9. Conclusion :

Evidence accumulated over the past decade demonstrates that microplastics are widespread in

soils and interact with soil microfauna in multiple, sometimes harmful ways. Effects range from physical gut impacts and physiological stress at the organism level to alterations in community composition and ecosystem functions such as decomposition and nutrient cycling. However, methodological heterogeneity and a shortage of long-term, field-realistic studies currently limit robust ecological risk assessment. Addressing standardization, investing in integrated field and laboratory programs, and connecting science to management and policy will be crucial to understand and mitigate the ecological consequences of soil microplastic pollution.

## References :

- Rillig, M. C. (2017). Microplastic incorporation into soil in agroecosystems. *Frontiers in Plant Science*, 8, 1805. doi:10.3389/fpls.2017.01805. Frontiers
- de Souza Machado, A. A., Lau, C. W., Till, J., Kloas, W., Lehmann, A., Becker, R., & Rillig, M. C. (2018). Impacts of microplastics on the soil biophysical environment. *Environmental Science & Technology*, 52(17), 9656–9665. ACS Publications
- Nizzetto, L., Futter, M., & Langaas, S. (2016). Are agricultural soils dumps for microplastics of urban origin? *Environmental Science & Technology*, 50(20), 10777–10779. ACS Publications
- Lin, D., Zhang, S., Bai, Z., & et al. (2020). Microplastics negatively affect soil fauna but stimulate microbial activity: insights from a field-based microplastic addition experiment. *Proceedings of the Royal Society B*, 287(1934), 20201268. PMC
- Sajjad, M., et al. (2022). Microplastics in the soil environment: A critical review on methods, occurrence, sources, and potential risk. *Science of the Total Environment*, 780, 146546. ScienceDirect
- Wang, K., et al. (2025). Microplastics and soil microbiomes: structure, functions and ecosystem consequences. *BMC Biology*, 23, 273. PMC
- ADEME (French Agency for Ecological Transition). (2024). *First national reference of microplastic contamination of French soils* (national assessment / press release). ademe.fr+1
- Lahive, E., Cross, R., Saarloos, A. I., Horton, A. A., Svendsen, C., Hufenus, R., & Mitrano, D. M. (2022). Earthworms ingest microplastic fibres and nanoplastics with effects on egestion rate and long-term retention. *Science of the Total Environment*, 807, 151022. PubMed
- Ingrassia, R., Amato, G., Bagarello, V., Carollo, F. G., Giambalvo, D., Iovino, M., Lehmann, A., Rillig, M. C., & Frenda, A. S. (2022). Polyester microplastic fibers affect soil physical properties and erosion as a function of soil type. *SOIL*, 8, 421– (2022). soil.copernicus.org

- de Souza Machado, A. A., et al. (2019). Microplastics in soil: consequences for soil structure and functions (follow-up experimental evidence). *Environmental Pollution* (special issue / experimental studies). (See de Souza Machado et al. for experimental data on aggregation/ water relations). ACS Publications
- Arab, M., et al. (2024). Microplastics in sludges and soils: abundance, fate and impacts — a comprehensive review. *Materials* (or MDPI journal). MDPI
- Aralappanavar, V. K., et al. (2024). Effects of microplastics on soil microorganisms and nutrient cycling: a critical review. *Science of the Total Environment* (review). ScienceDirect
- Zhang, X., et al. (2025). Microplastics lead to behavioral disorders in soil nematodes and affect movement/foraging (laboratory evidence). *Science of the Total Environment* (2025). ScienceDirect+1
- Klimasz, M., et al. (2025). Effects of microplastics on selected earthworm species: survival, respiration and biochemical responses. *Scientific Reports / PMC* (2025). PMC
- Ji, Z., et al. (2021). Effects of pristine microplastics and nanoplastics on soil organisms: a mechanistic perspective. *Journal of Hazardous Materials*, 402, 124034. (studies on nematode and earthworm endpoints). ScienceDirect+1
- de Souza Machado, A. A., Kloas, W., Zarfl, C., Hempel, S., & Rillig, M. C. (2018). Microplastics as an emerging threat to terrestrial ecosystems. *Global Change Biology* (perspective/review). ACS Publications
- Kaegi, R., Frehland, S., Hufenus, R., & Mitrano, D. M. (2020). Long-term assessment of metal-doped microplastics through wastewater treatment and implications for soil application. *Water Research / Environmental Science* (methods for tracing plastics). [ResearchGate](#)
- Mondol, M., et al. (2024). Effects of microplastics on soil physical, chemical and biological properties — a recent synthesis. *Science of the Total Environment / review* (2024). ScienceDirect
- Kwak, J.-I., & An, Y.-J. (2021). Microplastic ingestion damages earthworm reproductive cells and coelomocyte viability. *Journal of Hazardous Materials*, 402, 124034. DNB Portal
- Lin, D., et al. (2020). (Supplemental / data article) Field and mesocosm evidence for shifts in microarthropod and nematode community composition after microplastic addition. *PRSB / data supplement*.



# छत्तीसगढ़ में जल संरक्षण में सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का अध्ययन

डॉ. जसवंत सिंह जांगडे

## सार (Abstract) -

यह शोध पत्र छत्तीसगढ़ राज्य में जल संरक्षण के लिए सरकार द्वारा किए गए प्रयासों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में जल संकट एक गंभीर वैश्विक समस्या बन चुका है। छत्तीसगढ़ जैसे प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध राज्य में भी भूजल स्तर में गिरावट और जल प्रबंधन की चुनौतियाँ सामने आ रही हैं।

इस शोध में राज्य सरकार की प्रमुख योजनाओं जैसे जल संचय अभियान, "मोर गांव मोर पानी", वाटरशेड परियोजनाएँ, वर्षा जल संचयन, तथा सामुदायिक भागीदारी आधारित पहल का विश्लेषण किया गया है। साथ ही इन योजनाओं के प्रभाव, चुनौतियों और सुधार के सुझाव भी प्रस्तुत किए गए हैं।

**शब्द संकेत (Keywords)** - जल संरक्षण, छत्तीसगढ़, जल संचय, वर्षा जल संचयन, वाटरशेड, भूजल, सरकारी योजनाएँ।

## 1. प्रस्तावना (Introduction) -

जल जीवन का आधार है। पृथ्वी पर जीवन के लिए जल का महत्व अत्यधिक है। लेकिन वर्तमान समय में जल संकट एक गंभीर समस्या बन चुकी है।

Chhattisgarh प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध होने के बावजूद जल प्रबंधन की चुनौतियों का सामना कर रहा है। वर्षा पर अत्यधिक निर्भरता भूजल स्तर में गिरावट असमान जल वितरण इन समस्याओं के समाधान के लिए राज्य सरकार ने कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

## 2. अध्ययन के उद्देश्य (Objectives) -

- छत्तीसगढ़ में जल संरक्षण की स्थिति का अध्ययन करना।
- सरकारी योजनाओं का विश्लेषण करना।
- जल संरक्षण में समुदाय की भूमिका समझना सुधार के सुझाव देना।

## 3. अनुसंधान पद्धति (Methodology) -

द्वितीयक डेटा (Secondary Data) सरकारी रिपोर्ट समाचार लेख शोध पत्र।

#### 4. छत्तीसगढ़ में जल समस्या (Water Issues) -

##### मुख्य समस्याएँ :

भूजल स्तर में गिरावट वर्षा का असमान वितरण जल स्रोतों का सूखना कृषि में जल की कमी कई जिलों में जल स्तर तेजी से नीचे जा रहा है। (Hindustan Times)

#### 5. छत्तीसगढ़ सरकार के जल संरक्षण प्रयास -

##### 5.1 जल संचय-जन भागीदारी अभियान (Jal Sanchay Abhiyaan)

राज्य सरकार द्वारा शुरू की गई प्रमुख योजना लक्ष्य : 10 लाख जल संरचनाएँ बनाना।

**प्रमुख कार्य :** वर्षा जल संचयन सोखता गड्ढे (Soak pits) कुओं का पुनर्भरण इस योजना में जन भागीदारी पर विशेष जोर दिया गया।

##### 5.2 मोर गांव मोर पानी :

अभियान 56,000 लोगों को प्रशिक्षण दिया गया APAC Media 37,000 जल संरक्षण कार्य किए गए।

**उद्देश्य :** भूजल स्तर सुधारना गांव स्तर पर जल प्रबंधन।

##### 5.3 वाटरशेड विकास परियोजना (Watershed Project) लगभग 6.9 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में लागू।

**लाभ :** कृषि उत्पादन में वृद्धि जल संरक्षण ग्रामीण आय में सुधार।

##### 5.4 वर्षा जल संचयन (Rainwater Harvesting) छत्तीसगढ़ में वर्षा जल संचयन को बढ़ावा भूजल

पुनर्भरण पर ध्यान Centre for Ground Water Recharge

##### 5.5 जल शक्ति अभियान (Jal Shakti Abhiyan) केंद्र और राज्य का संयुक्त प्रयास "Catch the Rain"

अभियान लागू Drishti IAS.

##### 5.6 धमतरी मॉडल (Dhamtari Model) GIS आधारित जल प्रबंधन 26 अमृत सरोवर बनाए गए 156 जल

संरचनाएँ विकसित इस मॉडल को प्रधानमंत्री पुरस्कार मिला।

#### 6. सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical Analysis) -

सूचकांक आंकड़े जल संरचनाओं का लक्ष्य 10 लाख प्रशिक्षित लोग 56,000 जल परियोजनाएँ 37,000 वाटरशेड क्षेत्र 6.9 लाख हेक्टेयर।

#### 7. सामुदायिक भागीदारी (Community Participation) -

ग्राम पंचायत की भूमिका स्थानीय लोगों की भागीदारी जल संरक्षण में जन जागरूकता "जन भागीदारी" सफलता की कुंजी है।

#### 8. प्रभाव (Impact Analysis) -

**सकारात्मक प्रभाव :** भूजल स्तर में सुधार कृषि उत्पादन बढ़ा जल संकट में कमी कई क्षेत्रों में जल उपलब्धता में सुधार देखा गया।

#### 9. चुनौतियाँ (Challenges) -

जल प्रबंधन में कमी जागरूकता की कमी जल का दुरुपयोग जलवायु परिवर्तन।

#### 10. चर्चा (Discussion) -

यह स्पष्ट है कि छत्तीसगढ़ सरकार ने जल संरक्षण के लिए प्रभावी कदम उठाए हैं। योजनाएँ सफल

रही हैं लेकिन निरंतर सुधार की आवश्यकता है।

**11. सुझाव (Suggestions) -**

जल संरक्षण शिक्षा बढ़ाना आधुनिक तकनीक का उपयोग वर्षा जल संचयन को अनिवार्य बनाना सामुदायिक भागीदारी बढ़ाना।

**12. निष्कर्ष (Conclusion) -**

छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा जल संरक्षण के क्षेत्र में किए गए प्रयास सराहनीय हैं।

यदि इन योजनाओं को सही तरीके से लागू किया जाए।

जल संकट कम होगा कृषि और ग्रामीण विकास होगा।

सतत विकास संभव होगा।

**13. संदर्भ (References) -**

सरकारी रिपोर्ट : जल संचय अभियान Elets eGov समाचार : मोर गांव मोर पानी APAC Media वाटरशेड परियोजना रिपोर्ट जल शक्ति अभियान Drishti IAS धमतरी मॉडल।

jaswant4jun88@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 120-124

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## स्मृतिशास्त्रसमालोके गार्हस्थ्यश्रमे नारीणां भूमिका

ड.नटवरकयालः

natabarkayal@gmail.com

### शोधसारः

सामाजिकजीवनरीतौ सौष्ठवानयनाय स्मार्तैः स्मृतिशास्त्रादिषु नियमवैचित्र्याणां विधानं कृतम्। उक्तशास्त्रेषु गार्हस्थ्यश्रमस्य पालनीयानि यानि कृत्याकृत्यादीनि विहितानि सन्ति, तेषां सम्यगवगमनं गृहस्थैरवश्यमेव कर्तव्यम्। सुन्दरसमाजसंगठनाय नारीणां भूमिका सर्वतः अग्रणी वर्तते। अतः गार्हस्थ्यश्रमे स्मृतिविहितानां नारीणां भूमिकायाः प्रदर्शनस्य कृते अस्माभिरिदमालोच्यते।

### कूटशब्दाः

संस्कारः, स्मृतिशास्त्रम्, गार्हस्थ्यश्रमः, उपनयसंस्कारः, ब्रह्मचर्यम्, विवाहः, नित्यकर्म।

स्मरणार्थकस्य स्मृ-धातोरुत्तरं क्तिन्-प्रत्यययोगेन स्मृतिः इति पदं निष्पद्यते। शब्दस्यास्य प्रकृतिप्रत्ययगतो यौगिकार्थः तावत् स्मरणम् अनुभूतिमूलकविषयस्य वा ज्ञानमिति। अर्थात् संस्काररूपेणात्मस्थितं यत् पूर्वानुभूतज्ञानं तत् स्मरणैः अभिव्यज्यमानं भवतीति सामान्यतया स्मृतिरुच्यते। अत एव संस्कारजन्यविशेषज्ञानाभिव्यक्तिरेव स्मृतिरिति वक्तुं युज्यते।

स्मृतिशास्त्रेषु विचित्रनियमानुशासनं विधीयते। कस्यचन जायमानस्य आमृत्योः व्यक्तिसामाजिककृतकृत्यानि सम्यक्तया स्मृतिशास्त्रादिषु विहितानि वर्तन्ते। स्मृतिशास्त्राणि धर्मशास्त्राणि इति व्यपदेश्यानि भवन्ति।

आश्रमः चतुर्विधः। ते तावत् – ब्रह्मचर्यः, गार्हस्थ्यः, वाणप्रस्थः, सन्न्यासः। मन्वादिविहितेषु स्मृतिशास्त्रेषु एषाम् आश्रमचतुष्टयानां मध्ये गार्हस्थ्यश्रमधर्मस्य माहत्म्यं परत्वेन अभिहितम् । यथा जीवाः प्राणधारणस्य कृते प्राणवायुम् आश्रयन्ते, तथा समाश्रित्य गार्हस्थ्यश्रमं लोकाः जीवनं धारयन्तीति । मनोः मतेन संयतेन्द्रियाः मनुष्याः केवलम् एव इहलौकिक-पारलौकिक-सुखप्राप्त्यर्थं गार्हस्थ्यश्रमसमाश्रयणेऽधिकारिणो वर्तन्ते । न तु असंयतेन्द्रिया इति। गृहस्थाः यजन्ते, गृहस्थाः तपस्यन्ति, ते एव यच्छन्ति अत एव गार्हस्थ्यश्रमस्य एव परत्वमिति । ऋषयः, देवाः, भूतानि, अतिथिवर्गाः च प्रायेण सर्वे एव गृहस्थस्य मुखापेक्षिणो वर्तन्ते । यथाविधि त्रिवर्गादिसेवया गृहस्थानाम् इन्द्रलोकाप्राप्तिः सम्भवेदिति मन्यते। विष्णुसंहिताकारः तदीयायां संहितायामुक्तवान् –

‘गृहस्थ एव यजते गृहस्थस्तप्यते तपः।

ददाति च गृहस्थस्तु तस्माज्ज्येष्ठो गृहाश्रमी।।’<sup>1</sup> इति।

गार्हस्थ्यश्रम एव सर्वाश्रमस्य उत्पत्तिस्थलभूतमिति। तस्मिन् नष्टे सर्वे हीयन्ते। तथा च आम्नातं दक्षसंहिताकारैः – ‘मूलेनैव विनष्टेन सर्वमेतद्विनश्यति।’ इति।

संस्कारविषये स्मार्तानां मध्ये वैमत्यं चेत् दशविधसंस्कारपरिपालनं समाजे दृश्यते। तन्मध्ये विवाहोऽन्यतमः। अनेनैव गार्हस्थ्यश्रमे प्रवेशः सम्भवेत् नारीणाम्। वि-पूर्वकं वह्-धातोरुत्तरं घञ्प्रत्ययनिष्पन्नस्य ‘विवाहः’ इति शब्दस्यार्थो विशेषं वहनमिति। यथाविधि कन्यायाः स्त्रीत्वकरणम्, तथा पितुः गृहात् स्वीयगृहे वहनमेव विवाह इति। तथा चोक्तमस्ति शब्दकल्पद्रुमे -‘विवाहः विशिष्टं वहनम्’ इति। अष्टाविंशतितत्त्वकारस्य भट्टरघुनन्दनस्य मतेन- ‘दारकर्मणि भार्यात्वसम्पादके कर्मणि, तच्च कर्मग्रहणरूपं, तेन भार्यात्वसम्पादकं ग्रहणं विवाहः।’ इति।

नारीणाम् अपि कायशुद्धिनिमित्ते यथाविधि संस्कारो विहित आसीत्। तासाम् उपनयनसंस्कारो विवाहसंस्कारमाध्यमेनैव सम्पन्नोऽभवत्। जन्मना ब्राह्मणः, कर्मणा ब्राह्मणः इति परस्परविरोधिमतद्वयं तदा प्रचलितमासीत्। कालक्रमेण अस्य व्यत्ययः साधितो जातः। ततः प्रभृति एव जन्म एव जातिनिर्धारणस्य परिचायकरूपेण आविर्भूतमभवत्- ‘जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः’ इति।

<sup>1</sup> विष्णुसंहिता, ५९/२८

वेदकालीने समये ज्ञानोपार्जनस्य कृते नार्य्याः गुरुकुलगमनस्य प्रमाणवचः अथर्ववेदे प्राप्यते। तथा आमनातमस्ति अथर्ववेदे – ‘ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्’ इति। लोपामुद्रा विश्ववारा च इत्यादिबह्व्यो विदुष्यो नार्यः अभवन् या बहून् ऋङ्गन्त्राण् दृष्टवत्यः इति।

स्मृतिशास्त्रे विशेषतया मनुस्मृतौ पुरुषाणामिव नारीणां कृते पालनयोग्याः विविधाः नियमा विहिता आसन्। विवाहसंस्कारेण एव स्त्रीभिः उपनयनसंस्कारः पालनीय इति विहितवन्तः स्मार्ताः। एतेन संस्कृतोपनयनानां नारीणां पौरहित्येऽधिकारित्वं द्योतितम्। किन्तु, तेन सह तासां जन्मापि ब्राह्मणकुले भविष्यतीति अपि अपेक्षितं वर्तते।

सम्पन्नोपनयनसंस्कारो गुरुगृहे पालितनियमो ब्रह्मचारीव विवहात् परमेव नार्यो नियमपालनं गार्हस्थ्यश्रमप्रवेशमाध्यमैव प्रारब्धम् अभवत् इति। स्त्रीभिः विवाहात् परं पतिसेवा, पतिसन्तोषविधानं चेत्यादीनि कर्माणि तासां सविधे गुरुगृहे वासतुल्यानि इति। स्वामिनः गृहे विहितानि गृहकर्माणि तावत् तासां सविधे गुरुगृहे अग्निपरिचर्यास्वरूपानि इति। गुरुगृहे सायं प्रातःकालीने विहिते यज्ञीयकाष्ठसंग्रहकर्मणि तावत् स्त्रीभिः पतिगृहे क्रियमाणानि गृहस्थाल्याः कर्मस्वरूपाणि। ब्रह्मचारिणां करणीयानि यमनियमादिकर्माणि नारीणां पतिगृहे क्रियमाणानि रन्धनकर्मादितुल्यानि। तथा चोक्तं मनुसंहिताकृता -

“अमन्त्रिका तु कार्येयं स्त्रीणामावृदशेषतः।

संस्कारार्थं शरीरस्य यथाकालं यथाक्रमम्॥

वैवाहिको विधिः स्त्रीणां संस्कारो वैदिकः स्मृतः।

पतिसेवा गुरौ वासो गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया॥”<sup>2</sup> इति।

गार्हस्थ्यश्रमे नारीणां भूमिका गुरुत्वोपहता आसीदिति मन्यन्ते स्मार्ताः। सुखसन्धानार्थं यः वासः गार्हस्थ्यश्रमे, तस्य एव सुखस्य मूला योषिदिति। स्त्री विनययुक्ता, परुषवाक्यदोषरहिता, धवानुकुलाचारा, मिष्टभाषिणी, कार्यदक्षा, पतिप्रेमानुरक्ता चेत् तादृशी स्त्री देवतासदृशी इति मन्यन्ते स्मार्ताः। पत्युः वाक्यानुगा, वाक्यदोषरहिता, पतिव्रता स्त्री साक्षात्लक्षीस्वरूपा इति स्मार्ताः मन्यन्ते। पत्नी धवानुगता चेत् सपुरुषा सा त्रिवर्गफललाभापन्ना भवति इति वर्णयते दक्षसंहिताकारेण। धर्मकार्येषु स्वेच्छाचारिणी स्त्री सदैव दुःखाय एवा स्वीयधवस्य विरुद्धाचारणमपि शास्त्रे निषिद्धमिति।

<sup>2</sup> मनुसंहिता, २/६६-६७

गार्हस्थ्यश्रमे स्त्रियः कर्तव्यप्रसङ्गे सविशदालोचना लक्ष्यते। ब्राह्ममुहूर्ते शय्यां विहाय ततः परमेव स्त्रिभिः शौचादिकर्म कर्तव्यम्। ततो दन्तधावनम् कार्यम्। दन्तधावनस्यावश्यकता स्मृतौ विहितास्ति। दैनन्दिननित्यकर्मणां मध्ये प्रातःस्नानम् अनिवार्यम्। तत्करणे महत्पापानि विनष्टानि भवन्ति। नष्टे पापे कायः पूतः भवति। पूतशरीर एव केवलं सर्वकार्येषु अधिकारी। अन्यतः प्रातःस्नानात् आरोग्यादिदृष्टफलम् अर्जितं भवति। अतः देहेन्द्रियादिशुद्धिकरणार्थं प्रातःस्नानम् आवश्यकमिति आम्नातं स्मृतिकृद्भिः। प्रतिदिनं संघटमानपापस्खालनार्थं गृहस्थैरवश्यमेव पञ्चमहायज्ञो निष्पादनीयः। तथा च मनुसंहिताकारेण आम्नातं तस्य स्मृतौ -

“ तासां क्रमेण सर्वासां निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः।

पञ्च क्लप्ता महायज्ञा प्रत्यहं गृहमेधिनाम्॥”<sup>3</sup> इति।

स्त्रीणां माहात्म्यं वर्णितुकामाः स्मार्ताः सदैव मुखराः। वशिष्ठसंहितायां मातुः गुरुत्वं पितुरपेक्षया सहस्रगुणितमिति भणितम्। गार्हस्थ्यश्रमधर्मस्य त्रिवर्गाः भार्याया अधिनस्थानि इति मन्यते श्रीमनुः। सा स्त्री सदैव सम्माननीया। पत्नी समादृता चेत् देवाः सन्तुष्यन्ति। देवानुग्रहवञ्चितानां चेत् धर्मानुष्ठानं न कदापि सफलीभवति। अतः उच्चैः स्वरेण स्मार्तेन श्रीमनुसंहिताकारेणोक्तम्-

“यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥”<sup>4</sup> इति।

### निर्वाचितपुस्तकपञ्जिका

- उमेशचन्द्रः, पाण्डेयः. श्रीनारायण-मिश्रः – याज्ञवल्क्यस्मृतिः – चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी।
- मानवेन्दु बन्द्योपाध्यायः- मनुसंहिता-संस्कृतपुस्तक भाण्डार
- राजा राधाकान्तदेव वाहादुरः – शब्दकल्पद्रुमः (पञ्चमभागः) – चौखम्बा संस्कृत सिरिज अफिस्, १९६७
- पण्डित नित्यानन्दपन्तपर्वतीय – वीरमित्रोदय (संस्कारप्रकाश) – चौखम्बा संस्कृत सिरिज अफिस् वाराणसी

<sup>3</sup> मनुसंहिता, ३/६९

<sup>4</sup> तत्रैव, ३/५६

- पञ्चानन तर्करत्नः – उनविंशति संहिता- सम्पादक श्री अशोककुमार बन्द्योपाध्याय, सदेश १०१  
वि.विवेकानन्द रोड कलकाता ७००००६
- विश्वनाथ – मानवधर्मशास्त्र- गणपतकृष्णाजीनामकमुन्द्रणयन्त्रालये मुद्रितः, मुद्रकः आत्मारामकानहोवा
- नीना डोगरा – गृहस्थरत्नाकरः- नागप्रकाशन-११ए/यू ए जवाहरनगर दिल्ली-७
- श्री नलिनीकान्त मिश्र, श्री अशोककुमार बन्द्योपाध्याय- अष्टाविंशतितत्त्वम्-सदेश १०१ वि.विवेकानन्द  
रोड, कलकाता ७००००६
- श्री चन्द्रकान्त तर्कालंकार- पराशरस्मृति-एशियाटिक सोसाइटी १९७४
- श्री विजनविहारी गोस्वामी- अथर्ववेदसंहिता-हरफ प्रकाशनी १२६ कलेज स्ट्रीट् मार्केट कलकाता  
७००००७
- श्री विजनविहारी गोस्वामी-ऋग्वेदसंहिता-हरफ प्रकाशनी १२६ कलेज स्ट्रीट् मार्केट कलकाता ७००००७

Name - Dr.Natabar Kayal  
Email - [natabarkayal@gmail.com](mailto:natabarkayal@gmail.com)  
Phone number- 9775012878



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 125-131

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# कुमाऊँ के आर्थिक विकास में अल्पसंख्यक समुदाय का योगदान : विकास खण्ड भीमताल में स्वनियोजित अल्पसंख्यकों का अध्ययन

सुनील कुमार

शोधार्थी, अर्थशास्त्र विभाग

सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड।

## सारांश :

उत्तराखण्ड राज्य भारत के पहाड़ी राज्यों में से एक है जहाँ रोजगार की सम्भावनाएँ काफी कम थीं। प्रतिकूल यातायात के साधन व प्रतिकूल रोजगार की व्यवस्था की वजह से राज्य की अधिकतर जनसंख्या ने दूसरे राज्यों व शहरों अजीविका कमाने के लिए पलायन किया लेकिन वर्तमान समय में राज्य की जनसंख्या ने अपनी जीविका चलाने के लिए स्वरोजगार को अपनाया है जिससे पलायन में काफी कमी आयी है। राज्य की अल्पसंख्यक जनसंख्या का स्वरोजगार को बढ़ावा देने में बहुत बड़ा योगदान रहा है। दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र में भी अल्पसंख्यक जनसंख्या ने स्वरोजगार को अपनाकर अपनी आजीविका निश्चित की है। प्रस्तुत शोध-पत्र में कुमाऊँ क्षेत्र के नैनीताल जनपद के भीमताल विकास खण्ड के स्वनियोजित अल्पसंख्यकों का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से भीमताल विकासखण्ड के अल्पसंख्यक समुदाय के स्वनियोजित रोजगारों का अध्ययन किया गया है जो राज्य की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं और राज्य सरकार विभिन्न योजनाओं के माध्यम से इन रोजगारों को आसान बनाने के लिए अपना योगदान दे रही है। (समाजार्थिक समीक्षा : जनपद नैनीताल, वर्ष 2024, पृ0 सं0 60-70)

**मुख्य शब्द** - स्वनियोजित, अल्पसंख्यक जनसंख्या, स्वरोजगार योजनाएँ, कुमाऊँ अर्थव्यवस्था, दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र, प्रतिकूल यातायात, प्रतिकूल रोजगार व्यवस्था।

## प्रस्तावना -

भारत में विभिन्न धर्म और संस्कृति के लोग निवास करते हैं। इसी कारण से भाषा, वंश, धर्म, जाति में विविधता दिखाई देती हैं। सम्पूर्ण विश्व में भी यह विविधता किसी न किसी रूप में दिखाई देती हैं।

धर्म, भाषा, वंश, जाति संस्कृति के आधार पर सम्पूर्ण विश्व या किसी देश की जनसंख्या को विभाजित किया जा सकता है। किसी विशेष या एक धर्म को मानने वाले किसी देश में अधिक/बाहुल्यता में पाये जाते

है तथा अन्य दूसरे धर्म को मानने वाले काफी कम संख्या या अल्प संख्या में पाये जाते हैं।

(के सुजिता, "समकालिन हिन्दी कहानियों में अल्पसंख्यक विमर्श" शोध गंगा 2020 पृ0 सं0 03)

अल्पसंख्यकों से अभिप्राय भाषा, धर्म अथवा संस्कृति पर आधारित अपेक्षाकृत छोटे एवं संवेदनशील समूहों से होता है जो किसी एक राज्य में प्रधान समूह अथवा समूहों से अलग होते हैं। अंग्रेजी में व्युत्पत्ति की दृष्टि से अल्पसंख्यक शब्द देखने पर यह ज्ञात होता है कि 'अल्पसंख्यक' शब्द का रूपान्तर (माइनोरिटी) है। यह लैटिन भाषा के 'माइनर' शब्द से बना हुआ है। 'माइनर' का तात्पर्य है—कम छोटा या किसी एक इकाई के समुच्चयों में संख्यात्मक दृष्टि से छोटा समुच्चय। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 29 से 30 और 350—ए से 350—बी तक अल्पसंख्यक शब्द का प्रयोग किया गया है। (कुकरेजा प्रियंका, "सोशियो इकोनोमिक प्रोब्लम्स माइनोरिटीज इन रायपुर सिंस (2001), शोध गंगा पृ0 सं0 74")

उत्तराखण्ड राज्य भारत का 27वाँ राज्य है जो कि दो मण्डलों में विभाजित है उत्तराखण्ड राज्य के अन्तर्गत गढ़वाल मण्डल के 7 जिले क्रमशः देहरादून, टिहरी गढ़वाल, पौड़ी गढ़वाल, उत्तरकाशी, रुद्रप्रयाग, हरिद्वार व चमोली आते हैं व कुमाऊँ मण्डल के 6 जिले क्रमशः नैनीताल, अल्मोड़ा, बागेश्वर, पिथौरागढ़, चम्पावत और ऊधम सिंह नगर सम्मिलित है। उत्तराखण्ड राज्य के कुमाऊँ मण्डल में अल्पसंख्यक समुदाय में मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख, जैन तथा बौद्ध समुदाय को अधिसूचित किया गया है। कुमाऊँ मण्डल के हल्द्वानी विकासखण्ड में अल्पसंख्यक समुदाय की कुल जनसंख्या 76801 है जिसमें सबसे अधिक जनसंख्या में मुस्लिम समुदाय की 67559 की है तथा सिक्ख समुदाय की जनसंख्या 6515 के साथ दूसरे स्थान पर है। (जनसंख्या 2011, उत्तराखण्ड)

क्षेत्र	कुल अल्पसंख्यक	मुस्लिम	ईसाई	सिक्ख	बौद्ध	जैन
जनपद नैनीताल	144178	120742	5091	17419	570	356
विकासखण्ड भीमताल	9439	7294	1225	444	455	21

स्रोत— जनगणना 2011

क्र0 सं0	अल्पसंख्यक	अल्पसंख्यक परिवार
1	मुस्लिम	20
2	सिक्ख	08
3	ईसाई	14
4	जैन	03
5	बौद्ध	05
	कुल	50

स्रोत — प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर।

विकास खण्ड भीमताल में अल्पसंख्यक विभिन्न स्वरोजगार से अपनी जीविका चला रहे हैं।

क्रम सं०	व्यवसाय	अल्पसंख्यक परिवार	प्रतिशत
1	कृषि	16	32
2	पर्यटन	13	26
3	विनिर्माण	13	26
4	खनन	04	8
5	सेवा क्षेत्र	04	8
	कुल	50	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर।

### 1 पर्यटन -

विकासखण्ड में अधिक संख्या में अल्पसंख्यक पर्यटन से किसी न किसी रूप से जुड़े हुए हैं। पर्यटन से सम्बन्धित रोजगार में टैक्सी संचालन, होटल व रेस्तरां सेवाएँ, ट्रेवल एजेंट इत्यादि रोजगार से पर्याप्त आय प्राप्त कर रहे हैं। यह ऐसे व्यवसाय हैं जो कि उत्तराखण्ड की भौगोलिक स्वरूप व प्राकृतिक सौन्दर्य के अनुरूप ही आर्थिक विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

### 2. कृषि -

विकासखण्ड में अल्पसंख्यक जनसंख्या कृषि कार्यों में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्यों में संलग्न है। भीमताल विकासखण्ड का अधिकतर क्षेत्र पर्वतीय होने यहाँ कृषि के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं फिर भी दलहन एवं फलों के उत्पादन के लिए यहाँ की मिट्टी उपयुक्त है।

#### विकासखण्ड हल्द्वानी में अल्पसंख्यक समुदाय की कृषि भूमि का विवरण

क्रम सं.	कृषि योग्य भूमि का आकार	विकासखण्ड हल्द्वानी	प्रतिशत
1	1 हैक्टेयर से कम	36	72
2	1 से 2 हैक्टेयर	08	16
3	2 से 4 हैक्टेयर	05	10
4	4 से 6 हैक्टेयर	01	02
	कुल	50	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण के आधार पर।

क्रम सं०	उद्यमों का प्रकार	ग्रामीण	नगरीय	योग
1	कृषि उद्यम	41111	3891	45002
2	गैर-कृषि उद्यम	190859	158318	349177
3	स्वकार्य उद्यम	172376	106530	278906

स्रोत – संख्यिकी डायरी 2021-22

### 3. खनन -

वर्ष 2001 में राज्य की खनन नीति की घोषणा की गई उसके अनुसार वन क्षेत्र में स्थित खदानों में खनन कार्य वन विकास निगम उत्तराखण्ड तथा अन्य क्षेत्रों में खनन कार्य गढ़वाल मण्डल विकास निगम तथा कुमाऊँ मण्डल विकास निगम द्वारा किया जाता है। 31 मई 2023 को राज्य सरकार द्वारा उत्तराखण्ड नियमावली जारी की गई। इसी नीति के तहत खनिज नीधि की स्थापना की गई। खनिज की दृष्टि से उत्तराखण्ड एक मध्यम श्रेणी का राज्य है। यहाँ के प्रमुख खनिज चूना पत्थर, मैग्नेसाइट, तांबा, लोहा, बेस मेटल्स, संगमरमर, राकफास्फेट, जिप्सम, ग्रेफाइट सोना व चाँदी इत्यादि हैं।

नैनीताल जनपद में खनिज संगमरमर, रॉकफास्फेट, जिप्सम, ग्रेफाइट तथा उपखनिज रेत, बालू, एवं बोल्टर पाये जाते हैं जो कि विकाखण्ड की जनसंख्या का रोजगार का साधन भी है विकाखण्ड की अल्पसंख्यक जनसंख्या का आय का स्रोत भी है। प्राथमिक सर्वेक्षण में पाया गया कि विकाखण्ड की लगभग 08 प्रतिशत जनसंख्या खनन से आय प्राप्त कर रहे हैं। जिससे राज्य की आय के स्रोत भी बढ़ रहे हैं और नए रोजगार भी सृजन हो रहे हैं।

### 4. विनिर्माण -

विनिर्माण क्षेत्र विकाखण्ड में अल्पसंख्यक जनसंख्या के लिए सबसे उपयुक्त रोजगार की तरह है क्योंकि यह पारिवारिक व्यवसाय की भाँति है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसे एक बार स्थापित करने पर आगे पीढ़ी दर पीढ़ी आगे चलता है। प्राथमिक सर्वेक्षण में पाया गया कि विकाखण्ड की लगभग 26 प्रतिशत अल्पसंख्यक जनसंख्या ने इसे स्वरोजगार के रूप में अपनाया है और बेहतर आय का साधन भी समझा है। अल्पसंख्यक विकाखण्ड में मुख्य रूप से फर्नीचर उद्योग, भवन निर्माण व भवन सामग्री उद्योग, खाद्य सामग्री उद्योग, सिलाई कढ़ाई उद्योग, हस्तशिल्प/हथकरघा उद्योग इत्यादि प्रमुख उद्योगों से आय प्राप्त कर रहे हैं।

#### हस्तशिल्प /हथकरघा उद्योग

क्रम सं०	हस्तशिल्प हथकरघा	ग्रामीण	नगरीय	योग
1	उद्यमों की संख्या	6245	3153	9398
2	कार्यरत व्यक्ति	11067	7371	18438

स्रोत - सांख्यिकी डायरी 2021-22

### सेवा क्षेत्र -

विकाखण्ड में सेवा क्षेत्र में अल्पसंख्यक परिवार अन्य व्यवसाय के साथ-साथ कार्यरत हैं। प्राथमिक सर्वेक्षण में पाया गया कि विकाखण्ड की लगभग 8 प्रतिशत जनसंख्या सेवा क्षेत्र से अपना रोजगार चला रहे हैं।

मुख्य रूप से यातायात, स्वास्थ्य, लाजिस्टिक्स, रियल स्टेट इत्यादि मुख्य सेवाओं को रोजगार चला रहे हैं।

### सेवा क्षेत्र से राज्य भी विकास कर रहा है। (सांख्यिकी डायरी 2021-22)

स्वरोजगार व आर्थिक साक्षिकरण को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र व राज्य सरकार की योजनाएँ सीखो और कमाओ 'लर्न एण्ड अर्न', अल्पसंख्यकों के लिए कौशल विकास पहल-अल्पसंख्यकों के पारम्परिक कौशल को बढ़ावा देना और आधुनिक मशीनों का उपयोग कर उनके कार्य कुशलता, कार्य क्षमता में वृद्धि करना है तथा उनके द्वारा तैयार माल को बाजार में बिकवाने की सुविधाएँ प्रदान करना है।

## **विकास के लिए परंपरागत कलाओं, शिल्पों में कौशल और प्रशिक्षण का उन्नयन 'उस्ताद योजना -**

इस योजना के तहत अल्पसंख्यकों में पारंपरिक कला और समुदाय से संबंधित हस्तकला को बढ़ावा देने के लिए उन्हें कौशल विकास तथा प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। योजना में 15 से 35 वर्ष के शिल्पकारों को मास्टर क्राफ्ट मैन के रूप में प्रशिक्षण दिया जाएगा।

## **नई मंजिल योजना -**

नई मंजिल का उद्देश्य अल्पसंख्यक युवकों को शिक्षा और बाजार समेत कौशल प्रशिक्षण के लिए एकीकृत कार्यक्रम पेश करते हुए उनके श्रम बाजार परिणामों में सुधार करना है।

राष्ट्रीय अल्पसंख्यक विकास एवं वित्त निगम 'एनएमडीफसी' के माध्यम से अल्पसंख्यकों को रियायती ऋण-केंद्र सरकार द्वारा अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम 1922 के अंतर्गत 'मुसलमानों, ईसाईयों, बौद्धों, सिखों तथा पारसियों को राष्ट्रीय अल्पसंख्यक के रूप में अधिसूचित किया गया है। 1 जनवरी 2014 में अधिसूचित अल्पसंख्यकों की सूची में जैन समुदाय को भी शामिल किया गया है।

## **विशेष जरूरत - नई रेशनी : अल्पसंख्यक महिलाओं में नेतृत्व क्षमता विकास योजना -**

इस योजना का उद्देश्य सभी स्तर पर सरकारी प्रणालियों बैंकों और अन्य संस्थानों के साथ कार्य व्यवहार करने हेतु जानकारी, साधन तथा तकनीकी मुहैया कराकर अल्पसंख्यक महिलाओं हमारी धरोहर-भारतीय संस्कृति की समग्र संकल्पना के अधीन भारत के अल्पसंख्यक समुदायों की समृद्धि विरासत को संरक्षित करने की योजना 2017 अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय को कार्य आवंटन के अनुसार कानून और व्यवस्था को छोड़कर अल्पसंख्यकों से संबंधित सभी मामलों की देख रेख करने का अधिवेश प्राप्त है।

## **अवसंरचना विकास : प्रधानमंत्री जन विकास कार्यक्रम -**

इस योजना के उद्देश्य देश के समग्र विकास में योगदान देने के लिए अल्पसंख्यक समुदाय पीछे रह जाता है। केंद्र सरकार इस योजना की मदद से ऐसे समुदाय से जाने वाले प्रतिभागियों को आर्थिक सुविधा उपलब्ध कराना है।

- **प्री-मैट्रिक अल्पसंख्यक छात्रवृत्ति योजना '100 प्रतिशत राज्य पोषित'** - अल्पसंख्यक प्री मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना 'सौ प्रतिशत राज्य पोषित' उत्तराखण्ड राज्य के कक्षा 1 से 10वीं तक में अल्पसंख्यक वर्ग से सम्बन्ध रखने वाले उत्तराखण्ड राज्य में स्थित राजकीय, निजी विद्यालयों, मदरसों में अध्ययनरत छात्र, छात्राओं को प्रदान की जाती है। (बेबसाइट : उत्तराखण्ड अल्पसंख्यक आयोग, योजनाएं/कार्यक्रम)
- **मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना 2.0** - 2025 से शुरू की गई यह योजना सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों को स्थापित करने के लिए प्रवासियों, युवाओं और कारीगरों को ऋण और मार्जिन मनी अनुदान प्रदान करती है।
- **वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली स्वरोजगार योजना** - यह योजना मुख्य रूप से पर्यटन और संबद्ध गतिविधियों (जैसे होटल, रेस्तरां, ट्रांसपोर्ट) से संबंधित स्वरोजगार स्थापित करने के लिए ऋण सहायता प्रदान करती है। बेरोजगार अल्पसंख्यक समुदायों के लिए स्वरोजगार योजना-उत्तराखण्ड अल्पसंख्यक कल्याण विभाग द्वारा शुरू की गई इस योजना में 1 से 10 लाख रुपये तक के ऋण पर 25 प्रतिशत अनुदान मिलता है।

- **देवभूमि उद्यमिता योजना** - इसका उद्देश्य छात्र और युवा उद्यमियों को वित्तीय सहायता और कौशल विकास के माध्यम से सशक्त बनाना है।
- **कौशल विकास और सेवायोजना विभाग की पहल** - इसके माध्यम से समय-समय पर रोजगार मेले, कैरियर काउंसलिंग और कौशल प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। (बेबसाइट : उत्तराखण्ड स्पर्ोजगार योजनाएं आयोग : योजनाएं)

### चुनौतियाँ एवं सुझाव -

- **निवेश का अभाव** - स्वरोजगार का स्तर बढ़ाने में निवेश का अभाव एक बहुत बड़ी चुनौती है। इसी वजह से अल्पसंख्यक समुदाय में लघु उद्योग तक ही सीमित रह जाता है जबकि स्वरोजगार संबंधित बहुत सारी योजनाएं सरकार द्वारा चलाई जा रही हैं लेकिन योजना का लाभ नहीं मिल पा रहा है।
- **पर्याप्त बाजार न मिल पाना** - विकासखण्ड में यह सर्वेक्षण में पाया गया कि स्वनियोजित उत्पाद को उचित बाजार नहीं मिल पाता जिससे उत्पाद को उचित मांग बाजार तक में आने तक बहुत लागत लग जाती है जिससे उत्पाद का मूल्य बढ़ जाता है और परिणामस्वरूप उत्पाद की मांग कम हो जाती है।
- **उचित मूल्य न मिल पाना** - प्राथमिक सर्वेक्षण में यह पाया गया विकासखण्ड में स्वरोजगार करने वाले अल्पसंख्यकों को उनके द्वारा उत्पादित उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाता क्योंकि अधिकतर लघु उद्योग इकाई हैं इसीलिए उत्पादन भी कम मात्रा में होता है।
- **तकनीकी का अभाव** - प्राथमिक सर्वेक्षण में यह पाया गया विकासखण्ड में स्वनियोजित अल्पसंख्यक उत्पादन में तकनीकी का प्रयोग उस तरह से नहीं कर जिस तरह बाजार में अन्य उत्पाद में हो रही है। इसका एक बड़ा कारण निवेश भी है। निवेश से ही मशीनरी व तकनीकी का सही उपयोग हो सकता है।

### निष्कर्ष -

किसी भी क्षेत्र का विकास तभी हाता है जब उस क्षेत्र के छोटे-छोटे भागों का विकास होता है। इसी प्रकार कुमाऊँ का विकास भी उसके अन्तर्गत जनपद व विकासखण्ड का विकास होने पर ही होगा। विकासखण्ड भीमताल में स्वरोजगार में संलग्न अल्पसंख्यक परिवारों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अधिकतर अल्पसंख्यक परिवारों ने अपने पारिवारिक व पुस्तैनी स्वरोजगार को आगे बढ़ाया है और प्रदेश की आय सृजन में योगदान दिया है और सरकार द्वारा चलाई जा रही रोजगार व स्वरोजगार योजनायें अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहीं हैं जिससे स्वरोजगार को स्तर बढ़ रहा है और रोजगार के साधन बढ़ रहे हैं लेकिन बहुत सारी चुनौतियाँ भी हैं जैसे कि पर्याप्त निवेश का ना होना, तकनीकी का अभाव स्वरोजगार को आगे बढ़ने से रोक रहा है। इसीलिए विकासखण्ड में अधिकतर स्वरोजगार लघु उद्योग तक ही सीमित रह गये हैं।

### सन्दर्भ सूची :

1. भूतत्व एवं खनिकर्म निदेशालय, देहरादून, उत्तराखण्ड "वार्षिक रिपोर्ट 2024-25".
2. उत्तराखण्ड अल्पसंख्यक कल्याण विभाग, "वार्षिक रिपोर्ट 2024-25"

3. समाजार्थिक समीक्षा, जनपद नैनीताल, वर्ष 2024
4. सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद नैनीताल, वर्ष 2024
5. के सुजिता, "समकालिन हिन्दी कहानियों में अल्पसंख्यक विमर्श" शोध गंगा 2020 पृ0 03
6. कुकरेजा प्रियंका, "सोशियो –इकोनोमिक प्रोब्लम्स माइनोरिटीज इन रायपुर सिंस 2001" शोध गंगा, पृ0 74
7. जनगणना 2011 उत्तराखण्ड।
8. उत्तराखण्ड : स्वरोजगार योजनाएँ, उत्तराखण्ड सरकार।
9. उत्तराखण्ड : एक समग्र अध्ययन, बौद्धिक प्रकाशन, जनवरी, 2024

[sunil.bbt@gmail.com](mailto:sunil.bbt@gmail.com)



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILINGUAL  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 132-135

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## कठोपनिषदः मतानुसारेण आत्मनः स्वरूपम्

SHRABANIMANNA, पी.एच. डी शोधार्थी,

DR. AJAY KUMAR, शोध निर्देशक (असिस्टेंट प्रोफेसर)

डिपार्टमेंट ऑफ संस्कृत, बिनोद विहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय।

उपनिषदः भारतस्य मुख्यशास्त्राणि सन्ति। तेषां प्रभावः सहस्रवर्षेभ्यः अस्ति भारतीयसंस्कृतेः, चिन्तनस्य च। द्रव्यस्य उपरि आत्मानः, प्रकृतेः उपरि मनुष्यस्य श्रेष्ठतां घोषयित्वा उपनिषदिभः आध्यात्मिकतायाः महती परम्परा निर्मितवती तस्याः सुदृढीकरणं, संरक्षणं च कृतम्। उपनिषदानां तार्किकनिष्कर्षान् ऋषयः न केवलं निर्भयजिज्ञासेन, अपितु न्यायस्य दुर्गमेन आध्यात्मिकमहत्त्वस्य भावेन आगतवन्तः। उपनिषदेषु आत्मसंयमं आध्यात्मिकजीवनस्य मूलं मन्यते, परन्तु तस्य अर्थः न भवति यत् जगतः अवहेलना वा गृहसम्पत्त्याः परित्यागः वा जगतः प्रति द्वेषात् वयं जगतः उपरि उत्तिष्ठितुं न शक्नुमः। जगति यत्किमपि निर्जीवं चौतन्यम् अस्ति तत् ईश्वरस्य स्वामित्वं भवति य उपनिषदानां परमे लक्ष्ये मोक्षः एव वयं तत् जन्ममरणचक्रात् मुक्तिः अपि वक्तुं शक्नुमः। कर्मवशीकरणात् अपि मुक्तिः। मुक्तात्मनः शुभाशुभस्य कर्मणा तस्य न प्रभावः।

कठोपनिषद्वन्ये यमराजः आत्मानः शुद्धरूपं तस्य नित्यत्वे च वर्णयति, यतः यावत् साधकः स्वस्य नित्यत्वे विकारं च न अनुभवति, शरीरादिभ्यः अनित्यवस्तुताभ्यां पृथक् न मन्यते, तावत् एतेषु अनित्येषु यदर्थेषु जीवितुं न शक्नुयात् अस्मात् तस्य विरागं प्रति नित्यतत्त्वस्य इच्छा तस्य हृदये न उत्पद्यते। आत्मा नित्यः, चैतन्यः ज्ञानरूपः, सः अनित्यः, नाशः, जडः, शरीरेण जनानां च सह तस्य कोऽपि सम्बन्धः नास्ति इति तस्य प्रबलः भावः भवेत्। नित्यं अनन्तं च, न तस्य कारणं न कार्यं च, अतः जन्ममरणरहिते सर्वथा नित्ये नित्ये सर्वथा अविकारी। शरीरस्य विनाशेन न नश्यति।

**‘हन्ताचेन्नन्यते हन्तुश्च हतश्चेन्नन्यते हतम्।**

**उभौ तौ न विजानीतौ नायश्च हन्ति न हन्यते।।<sup>१</sup>**

ये मन्यन्ते यत् एषः (आत्मा) घातकः वा म्रियमाणः वा, ते वस्तुतः आत्मानः यथार्थं स्वरूपं न जानन्ति, ते सर्वथा मोहिताः सन्ति। वस्तुतः आत्मा न कश्चित् हन्ति न कश्चित् हन्तुं शक्नोति। साधकः देहसुखयोः अनित्यतां स्वात्मनः स्थायित्वं च विचार्य एतेभ्यः अनित्यसुखेभ्यः सुखस्य आशां त्यक्त्वा सदा सह तिष्ठन्ते नित्यसुखमूर्ति परब्रह्मपुरुषोत्तमं प्राप्तुं आकांक्षेत्। श्रीमद्भगवद्गीतायां अपि आत्मनः स्वरूपं वर्णयन् उक्तं यत्—

**‘य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चौनं मन्यते हतम्।**

**उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते।।<sup>२</sup>**

कठोपनिषदस्य मते ईश्वरः अस्माकं कर्मफलं भुङ्गे अर्थात् वयं ईश्वरस्य प्रतिकृतयः प्रतिबिम्बाः च स्मः तथा च यदा वयं स्वकर्मफलं दुःखं प्राप्नुमः तदा सः अपि तानि भोगयति । अस्याः उपनिषदस्य अनुसारं आत्मानं सारथिः, शरीरं रथं, बुद्धिः सारथिः, मनः च लज्जा इति मन्तव्यम् । ज्ञानिनः इन्द्रियाणि अश्वत्वेन वर्णयन्ति, अश्वरूपेण कल्पितेषु विषयेषु मार्गं वर्णयन्ति, शरीरेन्द्रियमनसात्मकात्मन् भोक्ता इति वदन्ति च । किन्तु सदा अविवेकी अनिरुद्धचित्तपूर्णस्य बुद्धिरथस्य प्रभावेण इन्द्रियाणि तु अनियंत्रित अश्ववत् वर्तन्ते । प्रत्युत इन्द्रियाणि बुद्धिरूपस्य कुशलस्य सूतस्य नित्यमग्नचित्तस्य वशं तिष्ठन्ति यथा सत् अश्वाः सारथिवशं भवन्ति । विवेकबुद्धियुक्तः मनसः नियन्त्रणं च लौकिकमार्गं लङ्घाय विष्णुपदं प्राप्नोति । आत्मानैक्येन आत्मानानां भेदाः असङ्गताः न भवन्ति । आत्मानः 'बुद्धि' इत्यनेन सह संयोगात् भिन्नाः भवन्ति अतः तेषां कर्मणां परिणामाः भिन्नाः भवन्ति (बुद्धिये देन् रोक्त्रीयदात्) । अमृतत्वस्य मृत्युस्य च तत्त्वानि प्रत्येकं मनुष्यशरीरे वर्तन्ते । मायानुसृत्य मृत्युं प्राप्नुमः, सत्यानुसरणेन अमृतत्वं प्राप्नुमः ।<sup>३</sup>

### आत्मज्ञानस्य फलम् -

**‘तं दुर्दर्शं गूढमनुप्रविष्टं गुहाहिते गहरेष्ठं पुराणम् ।**

**अध्यायत्नयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशौको जहाति ॥३**

यस्माद् आत्मानं ज्ञातुम् इच्छसि सः अतिशयेन प्रतीयमानत्वात् दुर्दर्श-अशुभः, अतिसूक्ष्मत्वात् । स च बुद्धेः नकारात्मकज्ञानेन आवृतः, अर्थात् सूक्ष्म-अगम्य-अर्थ-प्रकृत-ध्वनयः विषये बौद्धिक ज्ञानम् । ओहहिते अर्थात् बुद्धिगुहायां च स्थिता, यतः तत्रैव आत्मासाक्षात्कारः भवति । गभारेष्टम् च-गुहायां अर्थात् अध्ययनार्थं जन्ममरणरूपेण) बहुविधं दारिद्र्य गभारेष्टं नाम स्थितं (इति शरीरे अवतारितम्) । आत्मानं तादृशमणिभिः प्रविश्य बुद्धिगुवे (अर्थात् संकायैः आवृतः सूक्ष्मतमरूपेण तेषां सह ध्यायितः) इति कारणात् सः गह्वरेषु (अर्थात् ध्यानं जन्ममरणादिविधि विपदानां अधीनः) अतः दुर्दर्शम् इति ।

**‘ज्योतिषामपि तज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।**

**ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ॥४**

ईश्वरः परमात्मरूपेण सर्वेषां हृदये निवसति । अथ तस्य अर्थः सूर्यस्य उदाहरणरूपेण दीयते मध्याह्नसूर्यः स्वकक्षायां स्थितः । परन्तु यदि कश्चित् पञ्चसहस्रमाइलत्रिज्यायाः अन्तः सर्वान् पृच्छति यत् सूर्यः कुत्र अस्ति इति । तदा सर्वे वक्ष्यन्ति यत् सः विपत्तौ अस्ति । अनेन उदाहरणेन वैदिकशास्त्रेषु व्याख्यातं यत् यद्यपि सः अविभक्तः तथापि सः विभक्तः इव अनुभूयते । इति वैदिकशास्त्रेषु उक्तम्, एकः विष्णुः सर्वत्र तस्य अकल्पनीयशक्तेः प्रभावेण वर्तमानः, यथा सूर्यः बहुषु स्थानेषु बहुषु स्थानेषु प्रतिबिम्बितः भवति । यद्यपि च परमेश्वरः सर्वभूतानां पालकः अस्ति तथापि विनाशकाले सः सर्वं ग्रसति । तत् कथनं अध्याये पुनः पुनः उक्तं पदाधरः वदति यत् सः मभूमिनिस्तान सर्वान् योद्धान् भक्षयितुम् आगतः इति । स च उक्तं यत्, कालरूपेण, उपभोजयति । सः सर्वं नाशयति । सृष्टिकाले सः सर्वं मूलस्थित्याः विकासे करोति, विनाशकाले च तान् नाशयति । वैदिकश्लोकाः तत्सत्यं प्रतिविम्बयन्ति, सः सर्वेषां प्राणिनां स्रोतः आश्रयः च इति वदन्ति । तदनन्तरं सर्वं तदनन्तरं सर्वं पुनः तं शरणं प्रत्यागतम् ।

अतः पुरुषोत्तमस्य सारविषये मनसि प्रचं उत्थापयितुं यमराजः परब्रह्म-तत्तज्ञानस्य अधिकारस्य विषये इति कथयति-

**‘एतच्छ्रुत्वा संपरिगृह्य मर्त्यः प्रवृह्य धर्म्यमणुमेतमाप्य ।**

**स मोदते मोदनीय हि लब्ध्वा विवृत सद्य नचिकेतसं मन्ये ॥’**

अस्मिन् आध्यात्मिकविषये धार्मिकोपदेशः संवेदनशीलस्य ज्ञानी मुनिस्य मुखात् बहु आदरपूर्वकं श्रोतव्यः, ध्यानं च कर्तव्यः। ततः एकान्ते उपविश्य स्वमनसा निर्णयः कर्तव्यः। यदा तादृशसाधनेन स्वस्य आत्मसाक्षात्कारः उत्पद्यते तदा स्वस्य पारमार्थिकरूपस्य परब्रह्म परमात्मस्य साक्षात्कारः भविष्यति। स च तस्मिन् आनन्दसमुद्रे सदा निमग्नः भविष्यति। हे नचिकेत! तस्य परमस्य धामस्य द्वारं ते उद्घाटितम् अस्ति। तत्र गन्तुं भवन्तं कोऽपि निवारयितुं न शक्नोति।

**आत्मस्वरूपः निरूपणम् -**

आत्मा लघुतमपरमाणुतः लघुतर अर्थात् कृष्णादिसुक्ष्मद्रव्याणां अपि महतमस्य अर्थात् पृथिव्यादीनां विचित्रात्मना शक्तिहीन भवति। अतः अर्थ आत्मा एवं परमाणुतः लघुः महत्तमात् अपि महत्तरः यतः। सा तस्य शाश्वतस्य आत्मारूपस्य माध्यमेन एवं आत्मसाक्षात्कार (स्वस्य यथार्थस्य भवितम अर्हति। नामयुक्ताः सर्वे पदार्थाः तस्य उपाधिः एव। अयं आत्मा एव अस्य जीवसमुदायस्य गहाहदये बातः स्तम्भपर्यन्तं निहितः अर्थात् अन्तरात्मनि स्थितः।

**‘अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च ।**

**नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥’**

एते सर्वे परमाणात्मनः गुणाः संशयात् परे सिद्धयन्ति यत्, अवश्यं परमात्माः परमाणुसदृशः भागः अस्ति। तथा च सः नित्यं तस्मिन् एव परमाणुरूपेण वर्तते, नित्ये अपरिवर्तितः। अद्वैतवादिनः मायाविमुक्ते आत्मा—परमात्माः भवति इति सिद्धान्तः अस्मिन् श्लोके दोषपूर्णः सिद्धः। मायाविमुक्तो जीवात्माः भगवतः निर्गतकृपे बिन्दुरूपेण स्थातुं शक्नोति यदि सः इच्छति, परन्तु बुद्धिमान् जीवात्मा भगवतः सङ्गतिं प्राप्नुवन्ति। तथावत्—धामे प्रविशति। सर्वगतशब्दः (सर्वव्यापी) अत्र महत्त्वपूर्णः, यतः ईश्वरस्य सम्पूर्णसृष्टी आत्मा वर्तते इति न संशयः। जले भूमौ अन्तरिक्षे अग्नौ अपि जीवनम् अस्ति। प्रतीयते यत् अग्नी आत्मा नास्ति, परन्तु एतत् वयं अवगच्छामः, विचारः अस्ति यत्, अग्निः आत्मानं भक्षयितुं न शक्नोति। अस्मात् सूर्यलोकस्यापि तत्र उपयोगी शरीरं जीवात्मा अस्ति इति गम्यते। यदि सूर्यलोकः जीवनं न जनयति स्म तर्हि सर्वगत इति पदं अर्थात् ‘विश्वात्मनः गतिः’ इति न प्रयुक्तं स्यात्।

पश्यन् श्रुत्वा ध्यायन् ज्ञात्वा च स आत्मा अकृत्—निष्काम पुरुषः अर्थात् दृश्य—अदृश्य—बाह्य—वस्तुभ्यः परं गता बुद्धिः मतः, यतः यदा तादृशी स्थितिः भवति तस्मिन् काले, तस्मिन् काले शरीरं धारयन्ति मनः इत्यादयः इन्द्रियाणि, एवं करणात् धातु उच्यते, सुखी भवति, अतः एतेषां धातूनां नैवेद्येन स्वकर्मणा स्वात्मनः वृद्धिं पश्यति तथा च महिमा यः क्षयविहीनः—

**‘अनोरण्यमहतो महिया नात्मस्य जन्तोर्निहितो गुहायम् ।**

**तामक्रतुः पश्यति वीतशोके धातुप्रसादनम्ममन्मात्मनः ॥’**

**श्लोकसूची :**

1. कठोपनिषद (१/२/१६)
2. श्रीमद्भागवद्गीता (२/१६)

3. कठोपनिषद् (१/२/१२)
4. श्रीमद्भागवद्गीता (१३/१७)
5. कठोपनिषद् (१/२/१३)
6. श्रीमद्भागवद्गीता (६/८)
7. श्रीमद्भागवद्गीता (२/२४)
8. कठोपनिषद् (१/२/२०)

**ग्रन्थसूची :**

1. कठोपनिषद् : स्वामी जुष्टानन्द : उद्धोधन कार्यालय।
2. ईशादि नौ उपनिषद् : गीताप्रेस, गोरखपुर।
3. शुद्धात्मानन्दः, स्वामी, गीता विज्ञान, कलिकाता, संस्कृत पुस्तक भाण्डारः, २०१५
4. सोमेश्वरानन्दः, स्वामी, गीता ओ आजकेर जीवन जिज्ञासा, हाओड़ा, प्राची पावलिकेशनस्, १४१८

दूरवाणी : 9831245022

Shrabanimanna20@gmail.com

shrabanimanna@icloud.com



## हिंदी सिनेमा में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति

रुवेता कंडुलना

शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग

सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर, आणंद।

### शोध सार :

भारतीय संस्कृति की आत्मा उसके 'परिवार' और 'संस्कारों' में बसती है, जिसे हिंदी सिनेमा ने अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का मुख्य आधार बनाया है। प्रस्तुत शोध आलेख राजश्री प्रोडक्शंस की दो कालजयी कृतियों— 'हम साथ-साथ हैं' (१९६६) और 'विवाह' (२००६) के माध्यम से भारतीय पारिवारिक संरचना और नैतिक मूल्यों के अटूट संबंधों का विश्लेषण करता है। जहाँ एक ओर 'हम साथ-साथ हैं' के जरिए संयुक्त परिवार की एकजुटता, भाईचारे और रामायण कालीन आदर्शों को आधुनिक परिवेश में पिरोया गया है, वहीं दूसरी ओर 'विवाह' के माध्यम से विवाह की पवित्रता, मर्यादा और संकट के समय चरित्र की दृढ़ता को रेखांकित किया गया है।

यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि वैश्वीकरण और बदलती जीवनशैली के दौर में भी ये फिल्में किस प्रकार भारतीय दर्शकों के हृदय में अपनी जगह बनाए हुए हैं। 'विवाह' फिल्म जहाँ प्रेम को केवल दैहिक आकर्षण से ऊपर उठाकर 'प्रतिबद्धता' और 'समर्पण' के रूप में परिभाषित करती है, वहीं 'हम साथ-साथ हैं' यह संदेश देती है कि संस्कारों की शक्ति ही परिवार को टूटने से बचाती है।

शोध का मुख्य निष्कर्ष यह है कि ये फिल्में केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि भारतीय समाज के उस 'आदर्श स्वरूप' का प्रतिबिंब हैं, जो आधुनिकता की चकाचौंध के बीच भी अपनी जड़ों और परंपराओं से जुड़ा हुआ है। यह लेख स्पष्ट करता है कि तकनीकी प्रगति के बावजूद सिनेमा की मूल संवेदना आज भी उन शाश्वत मूल्यों में निहित है जो एक व्यक्ति को 'परिवार' और 'समाज' से जोड़ते हैं।

**बीज शब्द :** पारिवारिक मूल्य, संयुक्त परिवार, विवाह की पवित्रता, राजश्री सिनेमा, संस्कार, नैतिकता, सामाजिक जड़े।

भारतीय समाज की संरचना में 'परिवार' केवल कुछ व्यक्तियों का एक साथ रहने भर का ढाँचा नहीं है, बल्कि वह एक जीवंत संस्कारशाला है जहाँ व्यक्ति का सामाजिक, नैतिक और सांस्कृतिक निर्माण होता है। भारतीय संस्कृति में परिवार को वह प्रथम संस्था माना गया है जहाँ मनुष्य जीवन के मूलभूत मूल्यों— प्रेम, त्याग, सहयोग, अनुशासन और कर्तव्य का पाठ सीखता है। यही कारण है कि भारतीय समाज में परिवार को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

जब हम हिंदी सिनेमा की विकास यात्रा पर दृष्टि डालते हैं तो स्पष्ट रूप से यह दिखाई देता है कि

सिनेमा ने इन पारिवारिक मूल्यों को केवल प्रतिबिंबित ही नहीं किया, बल्कि उन्हें एक आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का भी निरंतर प्रयास किया है। सिनेमा और समाज के इस गहरे अंतर्संबंध को स्पष्ट करते हुए विमलेंदु लिखते हैं कि, "हिंदी सिनेमा के इतिहास पर नजर डालें तो हम पायेंगे कि भारतीय जीवन-मूल्य सिनेमा को गहरे स्तर तक प्रभावित करते हैं, वहीं सिनेमा भी हमारे जीवन मूल्यों को संस्कारित करने का काम करता है।"<sup>1</sup>

यह कथन इस तथ्य को रेखांकित करता है कि सिनेमा और समाज के बीच एक द्विपक्षीय संबंध है—समाज सिनेमा को प्रभावित करता है और सिनेमा समाज को। विमलेंदु जी के इस विचार के आलोक में यह कहा जा सकता है कि राजश्री का सिनेमा केवल समाज का प्रतिबिंब नहीं है, बल्कि यह समाज के लिए एक 'सांस्कृतिक मानक' तय करता है। जब दर्शक पर्दे आदर्श संबंधों को देखता है, तो उसके भीतर अपने स्वयं के पारिवारिक रिश्तों को पुनः परिभाषित करने की प्रेरणा जागती है।

भारतीय सिनेमा के इस सांस्कृतिक पक्ष को समझने के लिए राजश्री प्रोडक्शंस का सिनेमा एक महत्वपूर्ण उदाहरण के रूप में सामने आता है। राजश्री की फिल्मों ने लंबे समय तक भारतीय पारिवारिक मूल्यों को अपने कथानकों के केंद्र में रखा है। इन फिल्मों में परिवार केवल एक सामाजिक इकाई नहीं बल्कि एक भावनात्मक और सांस्कृतिक संसार के रूप में चित्रित होता है।

राजश्री प्रोडक्शंस का सिनेमा यह सिद्ध करता है कि संस्कार कोई जड़ और मृत परंपरा नहीं है, बल्कि वह एक प्रवहमान जीवनधारा है जो समय के साथ बदलते हुए भी अपनी मूल आत्मा को बनाए रखती है। इसी संदर्भ में विमलेंदु का एक और मत उल्लेखनीय है कि "साहित्य की तरह सिनेमा भी अपनी प्राणशक्ति समाज से प्राप्त करता है, इसलिए सिनेमा पर विचार करते हुए समाज के साथ उसके संबंधों पर विचार करना आवश्यक है। सिनेमा चाहे मनोरंजन के लिए हो या व्यवसाय के लिए या फिल्म कला की उत्कर्ष की अभिव्यक्ति के लिए, उसमें अपने दौर का समाज किसी न किसी रूप में व्यक्त हुए बिना नहीं रह सकता।"<sup>2</sup>

यह विचार सिनेमा की सक्रिय सामाजिक भूमिका को रेखांकित करता है। इस संदर्भ में यह कहना उचित होगा कि राजश्री ने 'पारिवारिक सिनेमा' को एक नई दिशा दी है। जहाँ अन्य फिल्मकार अक्सर सामाजिक विखंडन को दिखते हैं, वहीं राजश्री 'एकता' और 'समरसता' को अपनी फिल्मों का केंद्र बनाकर समाज को जुड़ाव का संदेश देते हैं।

राजश्री प्रोडक्शन हाउस की विशेषता यह रही है कि उन्होंने भारतीय समाज के पारंपरिक मूल्यों को अत्यंत सकारात्मक और आदर्शवादी रूप में प्रस्तुत किया है। राजश्री की फिल्मों में परिवार केवल एक पृष्ठभूमि नहीं होता, बल्कि वह कथा का केंद्र होता है। बड़ों का आदर और छोटे सदस्यों के प्रति स्नेह को यहाँ विशेष महत्व दिया गया है।

राजश्री सिनेमा का उद्देश्य केवल मनोरंजन प्रदान करना नहीं है, बल्कि वह दर्शकों को उन मूल्यों की ओर पुनः उन्मुख करना भी है जो आधुनिक जीवन की भागदौड़ में कहीं पीछे छूटते जा रहे हैं यदि हम फिल्म 'हम साथ-साथ हैं' का विश्लेषण करें तो यह फिल्म भारतीय संयुक्त परिवार की उस अवधारणा को सामने लाती है जो भारतीय संस्कृति की पहचान रही है। फिल्म में परिवार के सदस्यों के बीच प्रेम, परस्पर सम्मान और त्याग की भावना को अत्यंत आदर्शवादी रूप में प्रस्तुत किया गया है।

यह फिल्म उसी सामाजिक संरचना को पुनर्स्थापित करने का प्रयास करती है। फिल्म के विस्तृत फलक

पर जब हम एक संयुक्त परिवार की संकल्पना को देखते हैं तो वह समकालीन भारत में 'रामायण' के उन शाश्वत जीवन मूल्यों का आधुनिक विस्तार प्रतीत होती है, जहाँ भाईचारा, कर्तव्य और पारिवारिक एकता सर्वोपरि हैं।

फिल्म के पात्रों के माध्यम से यह संदेश दिया जाता है कि परिवार केवल अधिकारों का संबंध नहीं है, बल्कि यह कर्तव्यों और जिम्मेदारियों की भी एक व्यवस्था है। बड़े भाई का त्याग, छोटे भाइयों का सम्मान, माता-पिता के प्रति समर्पण और परिवार के प्रति निष्ठा— ये सभी तत्व मिलकर एक आदर्श पारिवारिक संरचना का निर्माण करते हैं। इस प्रकार 'हम साथ-साथ हैं' केवल एक मनोरंजनात्मक फिल्म नहीं रह जाती, बल्कि यह वह भारतीय सामाजिक आदर्शों की पुनर्स्थापना का सांस्कृतिक दस्तावेज बन जाती है।

हालाँकि, इस आदर्शवादी चित्रण के साथ-साथ एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण भी मौजूद है, विशेष रूप से नारी की भूमिका के संदर्भ में। कई नारीवादी आलोचकों ने यह प्रश्न उठाया है कि क्या इस प्रकार की फिल्मों में स्त्री को केवल त्याग और सेवा की प्रतिमूर्ति के रूप में सीमित कर दिया जाता है। रिंकी के अनुसार, "भारतीय सिनेमा ने अपनी उत्पत्ति के बाद से न केवल भारतीय समाज में महिलाओं की अधीनस्थ स्थिति को प्रदर्शित किया है, बल्कि महिलाओं को वस्तु के रूप में भी पेश किया है और महिलाओं की आदर्श छवि को बढ़ावा दिया है जो निःस्वार्थ भाव से अपने परिवार का पालन-पोषण, देखभाल और सेवा करती हैं।"<sup>3</sup>

यह दृष्टिकोण इस बात की ओर संकेत करता है कि पारिवारिक मूल्यों के आदर्शीकरण के दौरान स्त्री की स्वतंत्रता और उसकी व्यक्तिगत आकांक्षाएँ अक्सर गौण हो जाती हैं। रिंकी जी के इस तर्क के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजश्री की फिल्मों में स्त्री केवल 'अधीनस्थ' नहीं है, बल्कि वह 'आधारशिला' है। यद्यपि वह निस्वार्थ सेवा करती है, किन्तु परिवार के नैतिक पतन को रोकने की शक्ति भी उसी के पास है। यह त्याग उसकी कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी सांस्कृतिक श्रेष्ठता का परिचायक है।

राजश्री की फिल्मों में स्त्री का चरित्र प्रायः परिवार की नैतिक धुरी के रूप में सामने आता है। वह परिवार की एकता और संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, परंतु यह भूमिका अक्सर त्याग और समर्पण के दायरे में सीमित दिखाई देती है।

रिंकी आगे लिखती हैं कि "एक सर्वेक्षण में पाया गया कि भारतीय संविधान में समानता, न्याय और स्वतंत्रता की अवधारणाओं के बावजूद महिलाएं हमेशा पुरुषों से गौण रही हैं।"<sup>4</sup> यहाँ 'स्वतंत्र चेतना' और 'पारिवारिक समर्पण' के बीच एक सूक्ष्म संतुलन है। राजश्री की नायिकाएँ शिक्षित और आधुनिक हैं, किन्तु वे अपनी स्वतंत्रता का उपयोग परिवार को तोड़ने के लिए नहीं, बल्कि उसे जोड़ने के लिए करती हैं, जो भारतीय संस्कृति का मूल गुण है। इस प्रकार, जहाँ एक ओर ये फिल्में भारतीय पारिवारिक मूल्यों को संरक्षित करने का कार्य करती हैं, वहीं दूसरी ओर वे पारिवारिक लैंगिक भूमिकाओं को भी पुनर्स्थापित करती हैं।

इसके बावजूद यह भी सत्य है कि इन फिल्मों में स्त्री केवल निष्क्रिय पात्र नहीं होती। कई बार वह परिवार के नैतिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और संकट के समय परिवार को संभालने का कार्य भी करती है। इस प्रकार, स्त्री का चरित्र एक जटिल रूप में सामने आता है—जहाँ वह एक ओर परंपरा की संरक्षक है, वहीं दूसरी ओर परिवार भावनात्मक शक्ति का स्रोत भी है।

इसी वैचारिक शृंखला में फिल्म 'विवाह' का उल्लेख विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यह फिल्म विवाह संस्था की उस पवित्रता और गरिमा को सामने लाती है जो आधुनिक समय में तेजी से बदलती सामाजिक परिस्थितियों

के कारण प्रभावित हो रही है। आज के समय में जहाँ रिश्ते अक्सर तात्कालिकता और उपभोक्तावादी मानसिकता से प्रभावित दिखाई देते हैं, वहाँ 'विवाह' एक ऐसे प्रेम की कहानी प्रस्तुत करती है जो धैर्य, विश्वास और संस्कारों पर आधारित है।

आधुनिक परिवेश में बदलते प्रेम के स्वरूप पर बृजेश यादव लिखते हैं कि "प्रेम को सिनेमा का सबसे पसंदीदा विषय कहें तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। आधुनिक परिवेश में रिश्ते कब जुड़ते हैं और कब टूट जाते हैं, पता ही नहीं चलता। आज जैसे-जैसे प्रेम का स्वरूप बदल रहा है, सिनेमाई पर्दे पर भी उसे उसी रूप में प्रदर्शित किया जा रहा है जिस रूप में वह व्यावहारिक जीवन में विद्यमान है।"<sup>5</sup> यह कथन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि सिनेमा समय के साथ बदलते सामाजिक यथार्थ को अपने कथानकों में समाहित करता है। बृजेश जी की बात वर्तमान की कड़वी सच्चाई है, किंतु राजश्री का सिनेमा यहाँ एक 'प्रतिरोध' के रूप में खड़ा होता है।

फिल्म विवाह यह सिद्ध करती है कि प्रेम केवल 'क्षणभंगुर' नहीं है, बल्कि वह एक 'शाश्वत वचन' है जो समय की कसौटी पर खरा उतरता है। किन्तु 'विवाह' इस प्रवृत्ति के विपरीत एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। इस फिल्म में प्रेम का आधार बाहरी आकर्षण या तात्कालिक भावनाएँ नहीं हैं, बल्कि परस्पर सम्मान, विश्वास और आंतरिक संस्कार हैं। फिल्म की नायिका का चरित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो अपनी सरलता, विनम्रता और नैतिक दृढ़ता के माध्यम से प्रेम के एक उच्च आदर्श को स्थापित करती है। फिल्म का कथानक यह संदेश देता है कि सच्चा प्रेम केवल सुख के क्षणों में ही नहीं बल्कि कठिन परिस्थितियों में भी अपनी शक्ति और स्थायित्व को सिद्ध करता है।

फिल्म के इसी पक्ष को स्पष्ट करते हुए मनोज कुमार सैनी रेखांकित करते हैं कि, "हिंदी के व्यावसायिक सिनेमा ने बीसवीं सदी की नारी की जो तस्वीर प्रस्तुत की है वह वही है जिसके आदर्श धार्मिक पुस्तकों में मिलते हैं और जो प्राक् पूंजीवादी समाज में नारी की वास्तविक स्थिति का प्रतिबिंब है।"<sup>6</sup> यह कथन राजश्री की फिल्मों की वैचारिक दिशा को स्पष्ट करता है। इन फिल्मों का उद्देश्य केवल मनोरंजन प्रदान करना नहीं है, बल्कि वे दर्शकों को जीवन के उन मूल्यों की ओर पुनः उन्मुख करने का प्रयास करती हैं जिन्हें आधुनिक जीवन की भागदौड़ में अक्सर भुला दिया जाता है।

यह कहना तर्क संगत होगा कि राजश्री का सिनेमा 'उपभोक्तावाद' के विरुद्ध 'संस्कारवाद' की जीत है। जब नायक प्रेम झुलसी हुई पूनम को अपनाता है, तो वह यह संदेश देता है कि सौंदर्य 'त्वचा' में नहीं, बल्कि 'आत्मा' और 'निष्ठा' में होता है।

इन फिल्मों की प्रासंगिकता केवल उनके कथानकों तक सीमित नहीं है, बल्कि उनके द्वारा निर्मित सांस्कृतिक परिवेश में भी निहित है। राजश्री की फिल्मों में जिस प्रकार से पारिवारिक उत्सव, परंपराएँ, संस्कार और सामाजिक संबंधों को चित्रित किया जाता है, वह दर्शकों को एक सांस्कृतिक आत्मीयता का अनुभव कराता है। विवाह, त्योहार, पारिवारिक समारोह और पारंपरिक रीति-रिवाज इन फिल्मों में केवल दृश्यात्मक तत्व नहीं हैं, बल्कि वे भारतीय जीवन की सांस्कृतिक आत्मा का प्रतिनिधित्व करते हैं।

परंपरा और प्रगति के इसी अनूठे समन्वय पर रिंकी जी लिखती हैं कि "भारतीय संस्कृति में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं, जो कि समाज पर पड़े गहरे प्रभाव का परिणाम है। परिवर्तन प्रकृति का एकमात्र

अपरिवर्तनीय नियम है। इसलिए संस्कृति भी प्रकृति में स्थिर नहीं है, बल्कि बदलती रहती है।<sup>9</sup> यह विचार इस बात की ओर संकेत करता है कि आधुनिकता और परंपरा परस्पर विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे एक-दूसरे के पूरक हो सकते हैं। यदि आधुनिकता को संस्कारों की आधारभूमि प्राप्त हो, तो वह अधिक संतुलित और मानवीय रूप ग्रहण कर सकती है।

आधुनिकता का अर्थ परंपराओं का त्याग नहीं है। राजश्री के पात्र लैपटॉप और तकनीक का प्रयोग करते हैं, लेकिन बड़ों के पैर छूना नहीं भूलते। यही 'संतुलन' आज के समाज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

वास्तव में, राजश्री की फिल्मों की लोकप्रियता का एक प्रमुख कारण यह भी है कि वे दर्शकों को उनके सांस्कृतिक अतीत से जोड़ने का कार्य करती हैं। तेजी से बदलते सामाजिक परिवेश में, जहाँ पारिवारिक संरचनाएँ और सामाजिक संबंध निरंतर परिवर्तन के दौर से गुजर रहे हैं, वहाँ ये फिल्में दर्शकों को एक स्थिर और परिचित सांस्कृतिक संसार का अनुभव कराती हैं। यही कारण है कि तकनीकी प्रगति और बदलते सिनेमाई रुझानों के बावजूद आज भी दर्शकों का एक बड़ा वर्ग इन फिल्मों से भावनात्मक रूप से जुड़ाव महसूस करता है।

### निष्कर्ष :

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राजश्री प्रोडक्शंस की फिल्में भारतीय समाज के सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों की पुनर्सृष्टि का कार्य करती हैं। ये फिल्में दर्शकों को यह स्मरण कराती हैं कि आधुनिक जीवन की जटिलताओं और प्रतिस्पर्धा के बीच भी प्रेम, परिवार, त्याग और संस्कार जैसे मूल्य आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने पहले थे। इस प्रकार, ये फिल्में केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे भारतीय सांस्कृतिक चेतना को जीवित रखने का एक महत्वपूर्ण साधन भी हैं।

यह अध्ययन इस निष्कर्ष की ओर संकेत करता है कि तकनीकी प्रगति और वैश्वीकरण के बावजूद भारतीय दर्शक इन फिल्मों से गहरा जुड़ाव महसूस करते हैं। इसका कारण यह है कि इन फिल्मों के भीतर वह 'संस्कारित भारत' जीवित है जिसे आधुनिकता की दौड़ में हम कहीं पीछे छोड़ आए हैं, परंतु जो आज भी हमारी सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक चेतना में गहराई से बसा हुआ है। यही वह कारण है जिसके कारण राजश्री का सिनेमा समय के परिवर्तन के बावजूद अपनी प्रासंगिकता बनाए रखने में सफल रहा है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि जब तक संसार में 'परिवार' नाम की संस्था जीवित है, तब तक राजश्री की फिल्मों का मूल्य कम नहीं होगा। यह सिनेमा केवल परदे की कहानी नहीं है, बल्कि यह उस 'आदर्श भारत' का स्वप्न है जिसे हम अपनी आने वाली पीढ़ियों को सौंपना चाहते हैं।

### संदर्भिका :

1. हिंदी सिनेमा और भारतीय मूल्य—बोध— डॉ. बिमलेंदु तीर्थकर, अपनी माटी (ISSN 2322-0724 Apni Maati) अंक—45, अक्टूबर—दिसम्बर, <https://www.apnimaati.com>
2. वही
3. सिनेमा का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव आलोचनात्मक विश्लेषण— रिंकी, सिनेमा विशेषांक चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) से प्रकाशित पत्रिका, अपनी माटी (ISSN 2322-0724 Apni Maati) अंक—58, दिसम्बर, 2024, <https://www.apnimaati.com>

4. वही।
5. आधुनिक जीवन संदर्भ और हिंदी सिनेमा— बृजेश यादव, सिनेमा विशेषांक चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) से प्रकाशित पत्रिका, अपनी माटी (ISSN 2322-0724 Apni Maati) अंक-58, दिसम्बर, 2024, <https://www.apnimaati.com>
6. समकालीन समानांतर हिन्दी सिनेमा में स्त्री सशक्तिकरण के विविध आयाम— मनोज कुमार सैनी, सिनेमा विशेषांक चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) से प्रकाशित पत्रिका, अपनी माटी (ISSN 2322-0724 Apni Maati) अंक-58, दिसम्बर, 2024, <https://www.apnimaati.com>
7. सिनेमा का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव आलोचनात्मक विश्लेषण— रिंकी सिनेमा विशेषांक चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) से प्रकाशित पत्रिका, अपनी माटी (ISSN 2322-0724 Apni Maati) अंक-58, दिसम्बर, 2024, <https://www.apnimaati.com>

kandulnasweta29@gmail.com



## ‘अग्निदाह’ एवं ‘चार बेटों वाली माँ’ कहानियों में अभिव्यक्त वृद्ध-विमर्श

परमार निशाबेन

शोधार्थी

### शोध सारांश :

प्रस्तुत शोध-पत्र समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में ‘वृद्ध-विमर्श’ के उभरते स्वरूप का बहुआयामी विश्लेषण करता है। उत्तर-आधुनिकता, वैश्वीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति ने मानवीय संबंधों की संरचना को गहराई से प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप पारिवारिक मूल्यों का क्षरण हुआ है। इस बदलते सामाजिक परिदृश्य में वृद्ध वर्ग सबसे अधिक प्रभावित हुआ है, जो आज आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर असुरक्षा और उपेक्षा का सामना कर रहा है।

डॉ. दिलीप मेहरा की ‘अग्निदाह’ और ‘चार बेटों वाली माँ’ कहानियाँ इस कटु यथार्थ को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती हैं कि पारंपरिक ‘पुत्र-मोह’ और पितृसत्तात्मक संरचना अब विखंडित हो रही है। इन दोनों ही कहानियों में वृद्धों की स्थिति केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक संकट का प्रतीक है। आर्थिक परावलंबन, मानसिक उत्पीड़न, पारिवारिक विघटन और अस्तित्वगत संकट इनके प्रमुख आयाम हैं।

यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि आधुनिक समाज में मानवीय संबंधों का आधार संवेदना के स्थान पर उपयोगिता बन गया है। जिसके परिणामस्वरूप वृद्धों का अस्तित्व संकटग्रस्त हो गया है। इस शोध-पत्र का उद्देश्य इस विडंबना को उजागर करना तथा सामाजिक चेतना का निर्माण करना है।

### प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य सदैव समाज का दर्पण रहा है और उसने समय-समय पर समाज के उपेक्षित वर्गों को स्वर प्रदान किया है। स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श और आदिवासी-विमर्श की तरह ही ‘वृद्ध-विमर्श’ भी समकालीन साहित्य में एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभरा है। यह विमर्श समाज के उस वर्ग की पीड़ा को केंद्र में लाता है, जिसे अक्सर अनुभव का भंडार माना जाता है, किन्तु व्यवहार में उपेक्षित कर दिया जाता है।

आधुनिक युग में तकनीकी प्रगति और भौतिक समृद्धि ने जीवन को सरल अवश्य बनाया है, परंतु इसके साथ ही मानवीय संबंधों में आत्मीयता का क्षरण भी हुआ है। संयुक्त परिवारों का विघटन और एकल परिवारों की प्रवृत्ति ने वृद्धों की स्थिति को और अधिक जटिल बना दिया है। अब वे परिवार के केंद्र में न होकर परिधि पर स्थित हैं, जहाँ उनकी भूमिका सीमित होती और महत्व घटता हुआ दिखाई देता है।

प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' से लेकर आधुनिक कहानियों तक वृद्धों की पीड़ा का चित्रण हमे मिलता है, किन्तु 'अग्निदाह' और 'चार बेटों वाली माँ' कहानियाँ इस पीड़ा को अधिक तीव्रता और यथार्थ के साथ प्रस्तुत करती हैं। ये कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि आधुनिक समाज में वृद्धावस्था केवल एक जैविक अवस्था नहीं रही, बल्कि एक सामाजिक और आर्थिक संकट बन चुकी है।

वृद्धों की समस्या का मूल कारण उनका आर्थिक परावलंबन रहा है। जब कोई व्यक्ति अपनी आय का स्रोत खो देता है, तो परिवार में उसकी स्थिति स्वतः कमजोर हो जाती है। 'अग्निदाह' के मनसुखलाल इस स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्होंने बिना कुछ सोचे अपने जीवन की सारी जमा-पूँजी अपने पुत्रों के लिए समर्पित कर दी, जिसके परिणामस्वरूप वृद्धावस्था में वे आर्थिक रूप से निर्बल हो गए। इस स्थिति का लाभ उठाते हुए परिवार के अन्य सदस्य, जिनमें विशेषकर बहुएँ, सत्ता पर नियंत्रण स्थापित कर लेती हैं। इस कथन से यह स्पष्ट होता है— **"पप्पा, बिजली का बिल बहुत आ रहा है, इसलिए पंखा बंद रखा करो।"**<sup>1</sup>

यह कथन केवल पारिवारिक संवाद नहीं, बल्कि यह उत्तर-आधुनिक उपभोक्तावादी समाज में संबंधों के आर्थिक वस्तुकरण का प्रतीक है। इस कहानी में हम देख सकते हैं कि कैसे आज के इस युग में वृद्ध व्यक्ति की बुनियादी आवश्यकताओं को भी 'अनुत्पादक व्यय' के रूप में देखा जा रहा है। यह स्थिति मार्क्सवादी 'उपयोगिता-मूल्य' और 'विनिमय-मूल्य' के द्वन्द्व को उजागर करती है, जहाँ मनुष्य का मूल्य उसकी आर्थिक उत्पादकताओं से निर्धारित होने लगता है।

अतः यह संवाद पारिवारिक सत्ता-संबंधों में आए उस बदलाव को रेखांकित करता है, जहाँ आर्थिक निर्भरता सीधे सामाजिक अवमूल्यन में परिणत होती है। वृद्धों के साथ होने वाला अत्याचार केवल शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक स्तर पर अधिक गंभीर होता है। 'चार बेटों वाली माँ' में कांताबाई की स्थिति इसका स्पष्ट उदाहरण है। चार पुत्र होने के बावजूद उसे 'रोटेशन प्रणाली' के तहत एक घर से दूसरे घर भेजा जाता है। यह व्यवस्था उसे एक 'व्यक्ति' से 'वस्तु' में परिवर्तित कर देती है।

जब कांताबाई का छोटा लड़का उसे सँभाल रहा होता है तभी उसकी पत्नी उसे कहती है— **"पूरा घर गंदा कर दिया इस करमजली ने। उसे खाना ही न दें। खाना खाकर चारपाई में हगती-मूतती है। पूरा घर बड़बू से भर गया।"**<sup>2</sup>

इस कथन के माध्यम से हम देख सकते हैं कि किस प्रकार आज का समाज वृद्धों के प्रति संवेदनहीन हो चुका है। यहाँ व्यक्ति की पहचान व्यक्ति न होकर वह एक 'बोझ' या 'वस्तु' में परिवर्तित हो जाती है। यहाँ हम नारी-विमर्श के अंतर्विरोध को भी देख सकते हैं कि किस प्रकार— जहाँ स्वयं एक स्त्री (बहू) दूसरी स्त्री (वृद्धा) के प्रति संवेदनहीन हो जाती है। इस प्रकार यह कथन पितृसत्तात्मक संरचना के अंतर्गत स्त्रियों के बीच उत्पन्न सत्ता-संघर्ष को भी रेखांकित करता है।

इसी प्रकार 'अग्निदाह' में मनसुखलाल से कहा जाता है— **"घर का झाड़ू पोछा बाकी है और आप सुबह-सुबह मंदिर चले जाते हो? मंदिर जाने का याद रहता है तो झाड़ू पोछा करने का याद क्यों नहीं रहता?"**<sup>3</sup>

यह उनके व्यक्तिगत जीवन और स्वतंत्रता पर नियंत्रण का संकेत है। यह व्यवहार उन्हें आत्महीनता और निरर्थकता की भावना से भर देता है। यहाँ वृद्ध को एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि 'घरेलू श्रम-शक्ति' के रूप में देखा जा रहा है। जब व्यक्ति को लगातार अपमान और उपेक्षा का सामना करना पड़ता है, तो वहाँ

उसका आत्मसम्मान धीरे-धीरे समाप्त होने लगता है। 'अग्निदाह' में मनसुखलाल का सुसाइड नोट इस स्थिति को मार्मिक रूप से व्यक्त करता है—

**“जब तक मेरे पास जमा पूँजी थी तब तक तो मुझे कोई परेशानी नहीं थी पर जैसे मेरे पास जमा पूँजी खत्म हुई, दोनों लड़कों ने मुँह फेर लिया।”<sup>४</sup>**

यह कथन दर्शाता है कि वृद्धों के लिए सबसे बड़ा संकट शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक और अस्तित्वगत है। जब व्यक्ति को यह महसूस होने लगे कि उसका कोई महत्व नहीं है, तो वह जीवन से विमुख हो जाता है। यह आत्मविनाश की प्रवृत्ति केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक विफलता का परिणाम है, जहाँ समाज अपने ही अनुभव-सम्पन्न वर्ग को 'अप्रासंगिक' बना देता है।

भारतीय समाज में 'पुत्र' को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। उसे परिवार का रक्षक और वंश का संवाहक माना गया है। किंतु इन दोनों ही कहानियों में यह धारणा पूरी तरह टूटती हुई दिखाई देती है। पुत्र जहाँ उपेक्षा और शोषण के प्रतीक बन जाते हैं, वहीं पुत्रियाँ संवेदनशीलता और कर्तव्यनिष्ठा का परिचय देती हैं। 'अग्निदाह' में मिताली का चरित्र इस परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करता है।

**“अगर मेरी लड़की मिताली आती है तो उसे अग्निदाह देने का अधिकार देता हूँ। पुलिस से मेरा निवेदन है कि मेरी बेटी अगर नहीं पहुँच पाती है तो मेरी लाश को आवारा लाश की तरह जला दिया जाये, परंतु मेरे पुत्रों को न दी जाये।”<sup>५</sup>**

मनसुखलाल का यह कथन सामाजिक रूढ़ियों पर एक क्रांतिकारी प्रहार है जिन्होंने जेंडर के आधार पर अधिकारों का बटवारा किया था। यह सिद्ध करता है कि सेवा और प्रेम का संबंध लिंग से नहीं, अपितु आत्मा की संवेदना से होता है। मिताली यहाँ केवल एक पात्र नहीं, बल्कि एक 'परिवर्तनकारी चेतना' के रूप में उभरती है, जो पितृसत्ता के खोंखलेपन को उजागर करती है।

आधुनिक समाज में उपभोक्तावादी दृष्टिकोण ने संबंधों को भी प्रभावित किया है। अब संबंधों का मूल्यांकन उनकी उपयोगिता के आधार पर किया जाता है। वृद्ध, जो आर्थिक रूप से सक्रिय नहीं होते, इस दृष्टिकोण में 'अनुपयोगी' माने जाते हैं।

'चार बेटों वाली माँ' में कांताबाई की स्थिति इसी मानसिकता का परिणाम है। उसे भोजन और देखभाल के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। यह स्थिति दर्शाती है कि समाज में मानवीय संवेदनाओं का स्थान धीरे-धीरे समाप्त होता जा रहा है।

अंततः, समाज का विद्रुप पाखंड तब उजागर होता है जब वृद्ध की मृत्यु को एक 'प्रदर्शन' का रूप दे दिया जाता है। 'चार बेटों वाली माँ' में जहाँ जीवित रहते माँ को स्नेह की दो रोटियाँ नसीब नहीं हुईं, माँ के पैर टूटने पर इलाज के पैसे नहीं निकले, वहीं उसकी मृत्यु पर डीजे बजवाना और विशाल मृत्यु-भोज का आयोजन करवाना संतानों के आत्म-अपराध को ढकने का एक कुत्सित प्रयास है।

लोग बातें करने लगे कि—

**“अच्छा ही हुआ। बेचारी पीड़ा से मुक्त हो गयी।”<sup>६</sup>**

यह वृद्धों की उपेक्षा जनित 'धीमी हत्या' को 'स्वाभाविक मृत्यु' का जामा पहनाने जैसा है। यह विरोधाभास आज के समाज की सबसे बड़ी नैतिक विडंबना है जहाँ जीवित व्यक्ति की गरिमा शून्य है, किन्तु मृत देह का

विसर्जन आडंबरपूर्ण है। यह समाज की उस रुग्णता को दर्शाता है जहाँ व्यक्ति से अधिक उसकी 'सोशल ब्रांडिंग' को महत्व दिया जाता है।

### निष्कर्ष :

'अग्निदाह' एवं 'चार बेटों वाली माँ' कहानियाँ आधुनिक समाज के संवेदनात्मक संकट का सशक्त चित्रण करती हैं। ये कहानियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि वृद्धों की समस्या केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना से जुड़ी हुई है। वृद्ध-विमर्श का समाधान केवल कानूनी उपायों में नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं के पुनर्जीवन में निहित है। समाज को 'पुत्र-मोह' से ऊपर उठकर 'संतान-धर्म' की व्यापक अवधारणा को अपनाना होगा।

साहित्य की भूमिका इस संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उसे समाज की विसंगतियों को उजागर करते हुए चेतना का निर्माण करना होगा। मिताली जैसे पात्र इस परिवर्तन की दिशा को इंगित करते हैं। अतः यह आवश्यक है कि हम वृद्धों के प्रति केवल सहानुभूति न रखें, बल्कि उनके अधिकारों और गरिमा की रक्षा के लिए ठोस कदम उठाएँ।

### संदर्भिका

१. अग्निदाह, डॉ. दिलीप मेहरा, उत्कर्ष पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, २०२६, पृ. १४
२. वही, पृ. ४३
३. वही, पृ. १३
४. वही, पृ. १६
५. वही
६. वही, पृ. ४४

parmarnisha20520@gmail.com



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 146-158

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में गांधीवादी विचारों की प्रासंगिकता

**डॉ. राजेश गुप्ता**

सह आचार्य—राजनीति विज्ञान,

बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर (राजस्थान)

## सारांश :

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा वर्तमान समय में भारत की आर्थिक, सामाजिक और विकासात्मक नीतियों का एक केंद्रीय आधार बनकर उभरी है, जिसका उद्देश्य देश को उत्पादन, संसाधन प्रबंधन और नवाचार के क्षेत्र में स्वावलंबी बनाना है। यह अवधारणा केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक सशक्तिकरण, स्थानीय संसाधनों का प्रभावी उपयोग और समावेशी विकास की दृष्टि भी निहित है। इस संदर्भ में गांधीवादी विचारधारा विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होती है, क्योंकि उसमें स्वावलंबन, स्वदेशी, विकेंद्रीकरण और नैतिक अर्थव्यवस्था जैसे सिद्धांतों को प्रमुख स्थान दिया गया है।

गांधीवादी आर्थिक दृष्टिकोण में उत्पादन और उपभोग के बीच संतुलन, स्थानीय उद्योगों को प्रोत्साहन तथा मानव-केंद्रित विकास की अवधारणा को महत्व दिया गया है। यह दृष्टिकोण आधुनिक वैश्वीकरण और केंद्रीकृत आर्थिक संरचनाओं के बीच एक वैकल्पिक मॉडल प्रस्तुत करता है, जो आत्मनिर्भर भारत की भावना के साथ सामंजस्य स्थापित करता है। विशेष रूप से ग्राम स्वराज, कुटीर उद्योगों का विकास और संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग जैसे विचार आज के संदर्भ में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

समकालीन नीतियों में स्थानीय उत्पादन को बढ़ावा देना, लघु उद्योगों का विकास और आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रयास गांधीवादी सिद्धांतों के प्रभाव को दर्शाते हैं। हालांकि, इन विचारों के व्यावहारिक क्रियान्वयन में कुछ चुनौतियाँ भी मौजूद हैं, जैसे वैश्विक प्रतिस्पर्धा, तकनीकी परिवर्तन और आर्थिक असमानताएँ। अतः आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा और गांधीवादी विचारधारा के बीच गहरा संबंध है, जो एक संतुलित, समावेशी और सतत विकास की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

**मुख्य शब्द :** आत्मनिर्भर भारत, गांधीवादी विचार, स्वदेशी, विकेंद्रीकरण, सतत विकास।

## प्रस्तावना :

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा वर्तमान समय में भारत की विकास-यात्रा का एक केंद्रीय तत्व बन चुकी है, जो देश को आर्थिक, सामाजिक और तकनीकी दृष्टि से सशक्त और स्वतंत्र बनाने की दिशा में प्रेरित करती

है। यह अवधारणा केवल उत्पादन क्षमता बढ़ाने या आयात पर निर्भरता कम करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है, जिसमें स्थानीय संसाधनों का उपयोग, रोजगार सृजन, नवाचार और सामाजिक समावेशन जैसे तत्व शामिल हैं। इस संदर्भ में आत्मनिर्भरता को एक समग्र विकास मॉडल के रूप में देखा जा रहा है, जो देश की आंतरिक क्षमताओं को सुदृढ़ करने पर बल देता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में आत्मनिर्भरता का विचार नया नहीं है। यह लंबे समय से सामाजिक और आर्थिक चिंतन का हिस्सा रहा है, किंतु वर्तमान वैश्विक परिस्थितियोंकृतैसे आर्थिक अस्थिरता, आपूर्ति श्रृंखला में बाधाएँ और वैश्विक प्रतिस्पर्धाकृने इसे और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। इन परिस्थितियों में यह आवश्यक हो गया है कि भारत अपनी आंतरिक क्षमताओं को पहचानकर उन्हें सशक्त बनाए, ताकि वह बाहरी निर्भरता को कम कर सके और एक स्थायी विकास की दिशा में आगे बढ़ सके।

इसी संदर्भ में गांधीवादी विचारधारा विशेष रूप से प्रासंगिक हो जाती है। गांधीवादी दृष्टिकोण में आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक स्वतंत्रता का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्वावलंबन का भी प्रतीक है। गांधीजी ने अपने विचारों में स्थानीय उत्पादन, श्रम के सम्मान, संसाधनों के न्यायपूर्ण उपयोग और सरल जीवन-शैली पर बल दिया था। उनका मानना था कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके गांवों और स्थानीय समुदायों में निहित होती है, और जब ये इकाइयाँ सशक्त होंगी, तभी राष्ट्र सच्चे अर्थों में आत्मनिर्भर बन सकेगा।

आधुनिक संदर्भ में जब अर्थव्यवस्था अधिक केंद्रीकृत और वैश्विक हो चुकी है, तब गांधीवादी विचार एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं, जो स्थानीयता और विकेंद्रीकरण को महत्व देता है। यह दृष्टिकोण इस बात पर बल देता है कि विकास केवल बड़े उद्योगों और शहरी केंद्रों तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसका लाभ समाज के सभी वर्गों और क्षेत्रों तक पहुँचना चाहिए। इस प्रकार गांधीवादी विचारधारा आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को एक मानवीय और संतुलित आधार प्रदान करती है।

आत्मनिर्भर भारत केवल आर्थिक नीति का विषय नहीं है, बल्कि यह एक मानसिकता और दृष्टिकोण का परिवर्तन भी है। इसमें व्यक्ति, समाज और राष्ट्र— तीनों स्तरों पर आत्मविश्वास, नवाचार और स्वावलंबन की भावना का विकास आवश्यक है। गांधीवादी विचार इस मानसिकता के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, क्योंकि वे व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित करते हैं और समाज में सहयोग तथा सामूहिकता की भावना को बढ़ावा देते हैं।

इसके अतिरिक्त, वर्तमान समय में सतत विकास और पर्यावरणीय संतुलन के प्रश्न भी अत्यंत महत्वपूर्ण हो गए हैं। इस संदर्भ में गांधीवादी विचारधारा एक संतुलित जीवन-शैली और संसाधनों के सीमित एवं विवेकपूर्ण उपयोग की बात करती है, जो आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा के साथ सामंजस्य स्थापित करती है। यह दृष्टिकोण विकास को केवल आर्थिक वृद्धि के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय संतुलन के साथ जोड़कर देखता है।

समकालीन नीतिगत प्रयासों में भी यह देखा जा सकता है कि स्थानीय उद्योगों को प्रोत्साहन, कौशल विकास, उद्यमिता और नवाचार पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। ये सभी तत्व गांधीवादी विचारों के साथ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि गांधीवादी दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है और

वह आधुनिक विकास मॉडल को एक नैतिक और मानवीय दिशा प्रदान कर सकता है। आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा और गांधीवादी विचारधारा के बीच एक गहरा संबंध है, जो केवल सैद्धांतिक स्तर पर ही नहीं, बल्कि व्यावहारिक और नीतिगत स्तर पर भी दिखाई देता है।

### **आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा :**

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा एक बहुआयामी विकास-दृष्टि के रूप में उभरती है, जिसका उद्देश्य देश को आंतरिक संसाधनों, कौशल और क्षमताओं के आधार पर सशक्त बनाना है। यह केवल आर्थिक स्वावलंबन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक सुदृढ़ता, तकनीकी उन्नति और संस्थागत मजबूती का भी समावेश है। इस दृष्टिकोण में यह विश्वास निहित है कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक प्रगति तभी संभव है, जब वह अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाहरी निर्भरता को न्यूनतम करते हुए अपने आंतरिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग करे।

आत्मनिर्भरता का अर्थ आत्मकेंद्रित या पृथक रहना नहीं है, बल्कि इसका आशय ऐसी सक्षम व्यवस्था से है, जो वैश्विक परिदृश्य में प्रतिस्पर्धी होते हुए भी अपनी आंतरिक मजबूती बनाए रख सके। इस संदर्भ में आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा एक संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है, जहाँ वैश्विक सहयोग और स्थानीय सशक्तिकरण के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है। यह दृष्टिकोण देश को एक ऐसे आर्थिक ढाँचे की ओर अग्रसर करता है, जिसमें स्थानीय उत्पादन, नवाचार और उद्यमिता को प्राथमिकता दी जाती है।

आर्थिक आयाम के स्तर पर आत्मनिर्भर भारत का मुख्य उद्देश्य उत्पादन क्षमता का विस्तार, आयात पर निर्भरता में कमी और निर्यात की संभावनाओं में वृद्धि करना है। इसके लिए लघु, मध्यम और कुटीर उद्योगों को सुदृढ़ करने पर विशेष बल दिया जाता है, क्योंकि ये उद्योग न केवल रोजगार सृजन में सहायक होते हैं, बल्कि स्थानीय स्तर पर आर्थिक गतिविधियों को भी प्रोत्साहित करते हैं। इस प्रकार आत्मनिर्भरता का यह मॉडल विकेंद्रीकृत विकास को बढ़ावा देता है, जिससे आर्थिक लाभ समाज के व्यापक वर्गों तक पहुँच सके।

सामाजिक आयाम में आत्मनिर्भर भारत का संबंध जनसशक्तिकरण और समावेशी विकास से है। इसमें यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है कि समाज के प्रत्येक वर्ग को विकास की प्रक्रिया में भागीदारी का अवसर मिले। शिक्षा, कौशल विकास और उद्यमिता को बढ़ावा देकर व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित किया जाता है। इस प्रकार आत्मनिर्भरता केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं, बल्कि व्यक्तिगत और सामुदायिक स्तर पर भी विकसित होती है। तकनीकी दृष्टि से आत्मनिर्भर भारत नवाचार और अनुसंधान पर आधारित विकास की ओर संकेत करता है। आधुनिक तकनीकों का विकास और उनका स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार अनुकूलन इस अवधारणा का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

इससे देश न केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बन सकता है। इस प्रक्रिया में डिजिटल तकनीक, स्टार्टअप संस्कृति और नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। संस्थागत स्तर पर आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा शासन व्यवस्था की प्रभावशीलता और पारदर्शिता को भी महत्व देती है। नीतियों का निर्माण और उनका क्रियान्वयन इस प्रकार किया जाता है कि वे स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप हों और समाज के सभी वर्गों को लाभान्वित करें। इससे विकास की प्रक्रिया अधिक न्यायसंगत और संतुलित बनती है। इसके अतिरिक्त, आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा

में पर्यावरणीय संतुलन का भी विशेष महत्व है। संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण को इस दृष्टिकोण का अभिन्न अंग माना जाता है। यह पहलू इस बात को रेखांकित करता है कि आत्मनिर्भरता केवल वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करने तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि यह भविष्य की पीढ़ियों के हितों को भी ध्यान में रखे।

### **गांधीवादी आर्थिक चिंतन का स्वरूप :**

गांधीवादी आर्थिक चिंतन एक विशिष्ट मानवीय और नैतिक आधार पर निर्मित विचारधारा है, जो पारंपरिक आर्थिक सिद्धांतों से भिन्न एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। यह चिंतन आर्थिक विकास को केवल उत्पादन और लाभ के संदर्भ में नहीं देखता, बल्कि इसे मानव कल्याण, सामाजिक न्याय और नैतिक मूल्यों के साथ जोड़कर समझता है। इस दृष्टि से गांधीवादी अर्थशास्त्र का केंद्र मनुष्य और उसकी आवश्यकताएँ हैं, न कि केवल बाजार और पूंजी।

इस चिंतन का एक प्रमुख आधार 'जरूरत आधारित अर्थव्यवस्था' का सिद्धांत है, जिसमें यह विचार निहित है कि उत्पादन का उद्देश्य केवल अधिकतम लाभ प्राप्त करना नहीं होना चाहिए, बल्कि यह समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होना चाहिए। इस दृष्टिकोण में अनावश्यक उपभोग और संसाधनों के अत्यधिक दोहन का विरोध किया गया है। इसके स्थान पर संयम, संतुलन और सादगी को आर्थिक जीवन का आधार माना गया है। गांधीवादी आर्थिक विचारों में श्रम की गरिमा को विशेष महत्व दिया गया है। यह माना गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने श्रम के माध्यम से जीवनयापन करने का अवसर मिलना चाहिए और श्रम का सम्मान समाज में समान रूप से होना चाहिए। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत शारीरिक श्रम को उतना ही महत्वपूर्ण माना गया है जितना कि बौद्धिक श्रम को। इससे आर्थिक असमानता को कम करने और समाज में समानता स्थापित करने की दिशा में योगदान मिलता है।

गांधीवादी चिंतन का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू विकेंद्रीकरण है, जिसमें आर्थिक गतिविधियों को छोटे-छोटे स्तरों पर संचालित करने पर बल दिया जाता है। इसका उद्देश्य यह है कि उत्पादन और वितरण की प्रक्रिया स्थानीय स्तर पर ही संपन्न हो, जिससे लोगों को अपने क्षेत्र में ही रोजगार और संसाधनों का उपयोग करने का अवसर मिले। यह दृष्टिकोण बड़े उद्योगों और केंद्रीकृत अर्थव्यवस्था के विपरीत एक संतुलित और समावेशी आर्थिक व्यवस्था का समर्थन करता है। इस चिंतन में नैतिकता का विशेष स्थान है। गांधीवादी अर्थव्यवस्था यह मानती है कि आर्थिक गतिविधियाँ केवल लाभ और प्रतिस्पर्धा के आधार पर नहीं चलनी चाहिए, बल्कि उनमें नैतिक मूल्यों और सामाजिक उत्तरदायित्व का भी समावेश होना चाहिए। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत ईमानदारी, पारदर्शिता और न्याय जैसे मूल्यों को आर्थिक व्यवहार का अभिन्न अंग माना गया है।

गांधीवादी आर्थिक चिंतन में 'ट्रस्टीशिप' का सिद्धांत भी महत्वपूर्ण है, जिसके अनुसार संपन्न वर्ग को अपनी संपत्ति का उपयोग समाज के कल्याण के लिए करना चाहिए। यह सिद्धांत संपत्ति के पूर्ण राष्ट्रीयकरण के बजाय नैतिक जिम्मेदारी पर आधारित एक संतुलित व्यवस्था की बात करता है, जिसमें आर्थिक संसाधनों का उपयोग समाज के व्यापक हित में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, गांधीवादी विचारधारा में पर्यावरणीय संतुलन और प्रकृति के साथ सामंजस्य पर भी बल दिया गया है। संसाधनों का सीमित और विवेकपूर्ण उपयोग इस चिंतन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो आज के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक हो गया है। यह दृष्टिकोण आर्थिक विकास

को पर्यावरणीय संरक्षण के साथ जोड़कर देखता है, जिससे सतत विकास की अवधारणा को बल मिलता है।

### **स्वदेशी सिद्धांत और आत्मनिर्भरता :**

स्वदेशी सिद्धांत गांधीवादी आर्थिक चिंतन का एक केंद्रीय तत्व है, जो आत्मनिर्भरता की अवधारणा के साथ गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। स्वदेशी का मूल अर्थ केवल देश में निर्मित वस्तुओं का उपयोग करना नहीं है, बल्कि इसका व्यापक आशय उस आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था से है, जिसमें स्थानीय संसाधनों, कौशल और उत्पादन को प्राथमिकता दी जाती है। यह सिद्धांत व्यक्ति और समाज को अपने परिवेश के प्रति उत्तरदायी बनाता है तथा स्थानीय स्तर पर विकास की संभावनाओं को सुदृढ़ करता है। स्वदेशी की धारणा में यह विश्वास निहित है कि जब समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने ही संसाधनों और उत्पादों पर निर्भर होता है, तब वह बाहरी निर्भरता से मुक्त होकर अधिक सशक्त और स्थिर बनता है। इस दृष्टिकोण में उत्पादन और उपभोग के बीच एक संतुलन स्थापित किया जाता है, जिससे संसाधनों का अनावश्यक दोहन कम होता है और आर्थिक गतिविधियाँ अधिक टिकाऊ बनती हैं। यह संतुलन आत्मनिर्भरता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा सकता है।

आत्मनिर्भरता के संदर्भ में स्वदेशी सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण पक्ष स्थानीय उत्पादन को प्रोत्साहन देना है। जब स्थानीय स्तर पर वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन बढ़ता है, तो न केवल रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं, बल्कि आर्थिक गतिविधियाँ भी विकेंद्रित रूप में विकसित होती हैं। इससे क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने में सहायता मिलती है और समाज के विभिन्न वर्गों को विकास की प्रक्रिया में शामिल होने का अवसर प्राप्त होता है। स्वदेशी का एक अन्य महत्वपूर्ण आयाम यह है कि यह आर्थिक स्वतंत्रता को सांस्कृतिक आत्मसम्मान के साथ जोड़ता है। जब समाज अपने उत्पादों और संसाधनों पर विश्वास करता है, तो उसमें आत्मविश्वास और आत्मगौरव की भावना विकसित होती है। यह भावना आत्मनिर्भरता को केवल आर्थिक लक्ष्य तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि इसे एक व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलन का रूप प्रदान करती है।

समकालीन संदर्भ में स्वदेशी सिद्धांत का महत्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि वैश्वीकरण के प्रभाव से स्थानीय उद्योगों और पारंपरिक व्यवसायों पर दबाव बढ़ा है। ऐसे में स्वदेशी की भावना स्थानीय उत्पादन, हस्तशिल्प, कुटीर उद्योग और पारंपरिक ज्ञान को पुनर्जीवित करने में सहायक हो सकती है। यह दृष्टिकोण आधुनिक तकनीक और नवाचार के साथ मिलकर एक संतुलित विकास मॉडल प्रस्तुत कर सकता है, जिसमें परंपरा और आधुनिकता का समन्वय संभव हो। इसके अतिरिक्त, स्वदेशी सिद्धांत संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग और पर्यावरणीय संतुलन की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। स्थानीय स्तर पर उत्पादन और उपभोग के कारण परिवहन और ऊर्जा की आवश्यकता कम होती है, जिससे पर्यावरण पर दबाव घटता है। इस प्रकार स्वदेशी केवल आर्थिक दृष्टिकोण नहीं है, बल्कि यह सतत विकास की अवधारणा को भी सुदृढ़ करता है।

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा में स्वदेशी सिद्धांत का समावेश इस बात को स्पष्ट करता है कि विकास की प्रक्रिया को स्थानीय स्तर से आरंभ करना आवश्यक है। जब प्रत्येक क्षेत्र अपने संसाधनों और क्षमताओं के आधार पर सशक्त होता है, तब समग्र राष्ट्र की आर्थिक संरचना भी मजबूत होती है। इस प्रकार स्वदेशी आत्मनिर्भरता का आधार बनकर एक ऐसी व्यवस्था की स्थापना करता है, जो समावेशी, संतुलित और टिकाऊ विकास की दिशा में अग्रसर होती है।

## विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का महत्व :

विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का विचार गांधीवादी चिंतन का एक मूलभूत आधार है, जो आर्थिक शक्ति और संसाधनों के समान वितरण पर बल देता है। इस दृष्टिकोण में यह माना जाता है कि जब आर्थिक गतिविधियाँ कुछ सीमित केंद्रों में सिमट जाती हैं, तब समाज में असमानता, बेरोजगारी और क्षेत्रीय असंतुलन की समस्याएँ बढ़ जाती हैं। इसके विपरीत, यदि उत्पादन, वितरण और उपभोग की प्रक्रियाएँ स्थानीय स्तर पर संचालित हों, तो विकास का लाभ समाज के अधिक व्यापक हिस्से तक पहुँच सकता है। विकेंद्रीकरण का प्रमुख उद्देश्य यह है कि आर्थिक निर्णय और संसाधनों का नियंत्रण स्थानीय समुदायों के हाथों में हो, जिससे वे अपनी आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुसार विकास की दिशा निर्धारित कर सकें। इस प्रकार यह व्यवस्था स्थानीय स्वायत्तता को बढ़ावा देती है और लोगों को अपनी आर्थिक गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्रदान करती है। इससे न केवल आत्मनिर्भरता की भावना विकसित होती है, बल्कि समाज में उत्तरदायित्व और सहभागिता भी बढ़ती है।

आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि यह स्थानीय संसाधनों के अधिकतम उपयोग को संभव बनाती है। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशिष्ट प्राकृतिक, मानव और सांस्कृतिक संपदाएँ होती हैं, जिनका उपयोग यदि स्थानीय स्तर पर किया जाए, तो उत्पादन अधिक प्रभावी और टिकाऊ बन सकता है। इससे न केवल आर्थिक विकास को गति मिलती है, बल्कि संसाधनों का संरक्षण भी सुनिश्चित होता है।

विकेंद्रीकरण रोजगार सृजन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब आर्थिक गतिविधियाँ छोटे-छोटे स्तरों पर फैलती हैं, तो विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर उत्पन्न होते हैं। इससे लोगों को अपने स्थान पर ही कार्य करने का अवसर मिलता है, जिससे पलायन की समस्या कम होती है और सामाजिक संरचना अधिक स्थिर बनी रहती है। इस प्रकार विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था सामाजिक संतुलन को बनाए रखने में भी सहायक होती है। इस दृष्टिकोण का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह छोटे और मध्यम स्तर के उद्योगों को प्रोत्साहित करता है। ये उद्योग न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाते हैं, बल्कि वे नवाचार और उद्यमिता के विकास में भी योगदान देते हैं। बड़े उद्योगों की तुलना में ये अधिक लचीले और अनुकूलनीय होते हैं, जिससे वे बदलती परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सकते हैं।

विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था पर्यावरणीय दृष्टि से भी अधिक संतुलित होती है। स्थानीय स्तर पर उत्पादन और उपभोग के कारण परिवहन की आवश्यकता कम होती है, जिससे ऊर्जा की खपत घटती है और प्रदूषण में कमी आती है। इसके अतिरिक्त, छोटे स्तर पर उत्पादन करने से संसाधनों का अत्यधिक दोहन भी नहीं होता, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में सहायता मिलती है।

समकालीन संदर्भ में, जहाँ वैश्विक अर्थव्यवस्था अत्यधिक केंद्रीकृत और प्रतिस्पर्धात्मक हो गई है, वहाँ विकेंद्रीकरण एक संतुलनकारी विकल्प प्रस्तुत करता है। यह न केवल आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा देता है, बल्कि समाज में समानता और न्याय की भावना को भी सुदृढ़ करता है। इस प्रकार यह आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को एक व्यावहारिक और समावेशी आधार प्रदान करता है।

## ग्रामीण विकास और गांधीवादी दृष्टि :

गांधीवादी विचारधारा में ग्रामीण विकास को राष्ट्र निर्माण का मूल आधार माना गया है। यह दृष्टिकोण इस विश्वास पर आधारित है कि किसी भी देश की वास्तविक प्रगति तभी संभव है, जब उसके गाँव सशक्त, आत्मनिर्भर और संगठित हों। इस संदर्भ में ग्रामीण विकास केवल आधारभूत सुविधाओं के विस्तार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सुदृढ़ता का समग्र स्वरूप प्रस्तुत करता है। गांधीवादी दृष्टि में गाँव को एक स्वायत्त और सशक्त इकाई के रूप में देखा गया है, जो अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं करने में सक्षम हो।

ग्रामीण विकास के संदर्भ में गांधीवादी विचारधारा का एक महत्वपूर्ण पहलू ग्राम-आधारित संरचना है, जिसमें स्थानीय स्तर पर उत्पादन, वितरण और उपभोग की प्रक्रिया को महत्व दिया जाता है। इस दृष्टिकोण में यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध संसाधनों का उपयोग वहीं किया जाए, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था सुदृढ़ हो सके। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है और वहाँ के लोगों को अपने ही क्षेत्र में रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

गांधीवादी दृष्टि में कुटीर और लघु उद्योगों को विशेष महत्व दिया गया है, क्योंकि ये उद्योग ग्रामीण विकास के लिए अत्यंत उपयुक्त माने जाते हैं। इन उद्योगों के माध्यम से कम पूंजी में अधिक लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है, जिससे बेरोजगारी की समस्या को कम करने में सहायता मिलती है। इसके साथ ही, ये उद्योग पारंपरिक कौशल और हस्तशिल्प को भी संरक्षित रखते हैं, जो लोकसंस्कृति के संरक्षण में सहायक होते हैं।

ग्रामीण विकास में आत्मनिर्भरता की अवधारणा भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। गांधीवादी विचारधारा यह मानती है कि गाँवों को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं 'जैसे भोजन, वस्त्र और आवास' की पूर्ति स्वयं करने में सक्षम होना चाहिए। इससे न केवल आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होती है, बल्कि बाहरी निर्भरता भी कम होती है। इस प्रकार ग्रामीण आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होती है।

गांधीवादी दृष्टि में ग्रामीण समाज के सामाजिक ढाँचे को भी सुदृढ़ करने पर बल दिया गया है। इसमें सहयोग, सामूहिकता और पारस्परिक सहायता की भावना को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे समाज में एकता और समरसता बनी रहती है। यह दृष्टिकोण ग्रामीण विकास को केवल आर्थिक प्रक्रिया न मानकर उसे एक सामाजिक आंदोलन के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी आवश्यक होती है।

इसके अतिरिक्त, गांधीवादी विचारधारा में शिक्षा और कौशल विकास को भी ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण घटक के रूप में देखा गया है। शिक्षा के माध्यम से ग्रामीण समाज में जागरूकता और आत्मविश्वास का विकास होता है, जिससे वे अपने संसाधनों का बेहतर उपयोग कर सकते हैं। कौशल विकास के माध्यम से लोग विभिन्न प्रकार के कार्यों में दक्ष बनते हैं, जिससे उनकी उत्पादकता और आय में वृद्धि होती है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी गांधीवादी ग्रामीण विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग और संरक्षण पर बल दिया जाता है, जिससे पर्यावरणीय संतुलन बना रहता है। ग्रामीण जीवन-शैली में प्रकृति के साथ सामंजस्य का भाव होता है, जो सतत विकास की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

## नैतिकता और सतत विकास का संबंध :

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को केवल आर्थिक दृष्टि से समझना पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके साथ

नैतिक मूल्यों और सतत विकास के सिद्धांतों का समन्वय भी अत्यंत आवश्यक है। गांधीवादी विचारधारा इस समन्वय को विशेष महत्व देती है, क्योंकि इसमें आर्थिक गतिविधियों को नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व के साथ जोड़कर देखा जाता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार विकास तभी सार्थक माना जा सकता है, जब वह मानव कल्याण के साथ-साथ प्रकृति और समाज के संतुलन को भी बनाए रखे।

गांधीवादी नैतिकता का मूल आधार सादगी, संयम और उत्तरदायित्व की भावना है। यह विचारधारा अनावश्यक उपभोग और संसाधनों के अत्यधिक उपयोग के विरुद्ध है तथा यह मानती है कि मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखते हुए संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना चाहिए। इस प्रकार नैतिकता आर्थिक व्यवहार को एक नियंत्रित और संतुलित दिशा प्रदान करती है, जिससे विकास की प्रक्रिया अधिक टिकाऊ बनती है।

सतत विकास का सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि वर्तमान पीढ़ी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति इस प्रकार करे कि भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। गांधीवादी दृष्टिकोण इस सिद्धांत के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है, क्योंकि इसमें प्रकृति के साथ सामंजस्य और संसाधनों के संरक्षण को अत्यधिक महत्व दिया गया है। यह दृष्टिकोण आर्थिक प्रगति को पर्यावरणीय संतुलन के साथ जोड़ता है, जिससे विकास की प्रक्रिया दीर्घकालिक और स्थायी बनती है।

नैतिकता और सतत विकास के संबंध का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन लाने की आवश्यकता पर बल देता है। आत्मनिर्भरता केवल नीतिगत उपायों से ही संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए व्यक्ति स्तर पर भी जिम्मेदारी और जागरूकता आवश्यक है। गांधीवादी विचारधारा व्यक्ति को यह सिखाती है कि वह अपने उपभोग के प्रति सजग रहे और संसाधनों का उपयोग इस प्रकार करे कि समाज और पर्यावरण दोनों को लाभ हो।

इसके अतिरिक्त, नैतिकता सामाजिक न्याय और समानता के प्रश्नों से भी जुड़ी हुई है। गांधीवादी दृष्टिकोण यह मानता है कि आर्थिक विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों तक समान रूप से पहुँचना चाहिए। यदि विकास केवल कुछ सीमित वर्गों तक सीमित रह जाता है, तो वह न तो नैतिक रूप से उचित होता है और न ही स्थायी। इस प्रकार सतत विकास के लिए सामाजिक समावेशन और न्याय को भी आवश्यक माना जाता है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी नैतिकता का विशेष महत्व है। प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन पर्यावरणीय असंतुलन को जन्म देता है, जिससे दीर्घकालिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। गांधीवादी विचारधारा इस प्रकार के दोहन का विरोध करते हुए प्रकृति के साथ संतुलित संबंध स्थापित करने की बात करती है। यह दृष्टिकोण आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा को एक पर्यावरण-संवेदनशील दिशा प्रदान करता है।

समकालीन संदर्भ में, जब औद्योगिकीकरण और तकनीकी विकास के कारण पर्यावरणीय चुनौतियाँ बढ़ रही हैं, तब नैतिकता और सतत विकास का संबंध और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। इस संदर्भ में गांधीवादी विचारधारा एक मार्गदर्शक के रूप में सामने आती है, जो विकास को केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित न रखकर उसे एक व्यापक सामाजिक और पर्यावरणीय प्रक्रिया के रूप में देखती है।

### **समकालीन नीतियों में गांधीवादी प्रभाव :**

समकालीन भारत में आत्मनिर्भरता को सुदृढ़ करने के लिए जो नीतिगत प्रयास किए जा रहे हैं, उनमें गांधीवादी विचारधारा का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यद्यपि वर्तमान आर्थिक

नीतियाँ आधुनिक वैश्विक परिप्रेक्ष्य और तकनीकी विकास को ध्यान में रखकर निर्मित की गई हैं, फिर भी उनमें स्थानीयता, स्वावलंबन और समावेशी विकास जैसे तत्व प्रमुख रूप से उपस्थित हैं, जो गांधीवादी दृष्टिकोण के मूल सिद्धांतों से मेल खाते हैं।

आत्मनिर्भर भारत के अंतर्गत स्थानीय उत्पादन को प्रोत्साहन देने की नीति एक महत्वपूर्ण पहल के रूप में सामने आई है। इस दृष्टिकोण में घरेलू उद्योगों, विशेषकर सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों को सशक्त बनाने पर बल दिया गया है। यह प्रयास न केवल आर्थिक गतिविधियों को गति देता है, बल्कि स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन को भी बढ़ावा देता है। इस प्रकार यह नीति गांधीवादी स्वदेशी सिद्धांत की समकालीन अभिव्यक्ति के रूप में देखी जा सकती है, जहाँ स्थानीय संसाधनों और उत्पादों को प्राथमिकता दी जाती है।

समकालीन नीतियों में कौशल विकास और उद्यमिता को भी विशेष महत्व दिया गया है। विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से युवाओं को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित किया जा रहा है, जिससे वे रोजगार प्राप्त करने के साथ-साथ रोजगार सृजन में भी योगदान दे सकें। यह दृष्टिकोण गांधीवादी विचारों के उस पहलू को प्रतिबिंबित करता है, जिसमें व्यक्ति को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाने पर बल दिया गया है।

इसके अतिरिक्त, डिजिटल और तकनीकी विकास को भी आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में अपनाया गया है। डिजिटल प्लेटफॉर्म, स्टार्टअप संस्कृति और नवाचार आधारित पहलें आर्थिक गतिविधियों को नई दिशा प्रदान कर रही हैं। यद्यपि यह पहल आधुनिक है, फिर भी इसका उद्देश्य स्थानीय स्तर पर नवाचार और उत्पादन को बढ़ावा देना है, जो गांधीवादी विकेंद्रीकरण की भावना के अनुरूप है।

समकालीन नीतियों में ग्रामीण विकास और कृषि क्षेत्र को सुदृढ़ करने पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का विकास, कृषि में नवाचार और किसानों को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास इस बात को दर्शाते हैं कि विकास को केवल शहरी क्षेत्रों तक सीमित नहीं रखा जा रहा है। यह दृष्टिकोण गांधीवादी ग्राम-केंद्रित विकास की अवधारणा से मेल खाता है, जहाँ गाँवों को राष्ट्र की आधारशिला माना गया है।

सामाजिक समावेशन भी समकालीन नीतियों का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। विभिन्न योजनाओं के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गों को सशक्त बनाने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे वे विकास की मुख्यधारा में शामिल हो सकें। यह दृष्टिकोण गांधीवादी विचारधारा के उस सिद्धांत के अनुरूप है, जिसमें समाज के अंतिम व्यक्ति के कल्याण को प्राथमिकता दी गई है।

हालाँकि, यह भी ध्यान देने योग्य है कि समकालीन नीतियाँ पूर्णतः गांधीवादी नहीं हैं, क्योंकि इनमें बड़े उद्योगों, विदेशी निवेश और वैश्विक व्यापार को भी महत्व दिया जाता है। यह अंतर इस बात को दर्शाता है कि वर्तमान समय में विकास के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जिसमें पारंपरिक और आधुनिक दोनों तत्वों का समन्वय हो।

### **चुनौतियाँ और सीमाएँ :**

आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में गांधीवादी विचारों की प्रासंगिकता जितनी स्पष्ट और प्रेरणादायक है, उतनी ही इसके व्यावहारिक क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ और सीमाएँ भी विद्यमान हैं। इन चुनौतियों को समझे बिना इस अवधारणा की वास्तविक प्रभावशीलता का मूल्यांकन संभव नहीं है। समकालीन आर्थिक और सामाजिक संरचनाओं में गांधीवादी सिद्धांतों को लागू करना एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें अनेक प्रकार के अंतर्विरोध और

बाधाएँ सामने आती हैं।

सबसे पहली चुनौती वैश्विक आर्थिक व्यवस्था से संबंधित है। वर्तमान समय में अर्थव्यवस्था अत्यधिक वैश्वीकृत हो चुकी है, जहाँ देशों के बीच व्यापार, निवेश और तकनीकी आदान-प्रदान परस्पर निर्भरता को बढ़ाते हैं। ऐसे में पूर्ण आत्मनिर्भरता की अवधारणा को लागू करना व्यावहारिक रूप से कठिन हो जाता है। गांधीवादी स्वदेशी और स्थानीयता के सिद्धांत इस वैश्विक प्रतिस्पर्धा के बीच कई बार सीमित प्रतीत होते हैं, क्योंकि आधुनिक बाजार में प्रतिस्पर्धा के लिए उच्च तकनीक और बड़े पैमाने पर उत्पादन आवश्यक होता है।

दूसरी महत्वपूर्ण चुनौती तकनीकी विकास और औद्योगिकीकरण से जुड़ी हुई है। आधुनिक अर्थव्यवस्था में उत्पादन की दक्षता और गुणवत्ता बढ़ाने के लिए उन्नत तकनीकों का उपयोग अनिवार्य हो गया है। गांधीवादी विचारधारा में छोटे और कुटीर उद्योगों पर जोर दिया गया है, जो सीमित संसाधनों और पारंपरिक तकनीकों पर आधारित होते हैं। इस कारण यह प्रश्न उठता है कि क्या ये उद्योग आधुनिक तकनीकी प्रतिस्पर्धा के साथ तालमेल बिठा सकते हैं या नहीं।

सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ भी एक बड़ी चुनौती के रूप में सामने आती हैं। समाज में संसाधनों और अवसरों का असमान वितरण आत्मनिर्भरता की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। यदि समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्राप्त नहीं होते, तो आत्मनिर्भरता का लक्ष्य केवल कुछ सीमित वर्गों तक ही सिमट सकता है। गांधीवादी विचारधारा समानता और न्याय की बात करती है, लेकिन इन सिद्धांतों को व्यवहार में लागू करना एक कठिन कार्य है, विशेषकर जब सामाजिक संरचनाएँ जटिल और विषम हों। इसके अतिरिक्त, उपभोक्तावाद की बढ़ती प्रवृत्ति भी एक महत्वपूर्ण बाधा है। आधुनिक समाज में उपभोग को प्रगति का संकेत माना जाने लगा है, जिससे लोग अधिकाधिक वस्तुओं के उपयोग की ओर आकर्षित होते हैं। गांधीवादी विचारधारा सादगी और संयम पर बल देती है, जो इस प्रवृत्ति के विपरीत है। इस कारण इन विचारों को अपनाने के लिए मानसिकता में परिवर्तन आवश्यक है, जो एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है।

राजनीतिक और नीतिगत स्तर पर भी कुछ सीमाएँ दिखाई देती हैं। आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए बनाई गई नीतियाँ कई बार जमीनी स्तर पर प्रभावी ढंग से लागू नहीं हो पातीं। प्रशासनिक जटिलताएँ, संसाधनों की कमी और समन्वय की कमी इस प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। इसके अतिरिक्त, नीतियों में निरंतरता का अभाव भी एक चुनौती के रूप में सामने आता है, जिससे दीर्घकालिक लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से भी कुछ सीमाएँ देखने को मिलती हैं। यद्यपि गांधीवादी विचारधारा पर्यावरणीय संतुलन पर बल देती है, फिर भी आधुनिक विकास की आवश्यकताओं के कारण कई बार संसाधनों का अधिक उपयोग अपरिहार्य हो जाता है। इस स्थिति में विकास और संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करना एक जटिल चुनौती बन जाता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण सीमा यह है कि गांधीवादी विचारों को कई बार आदर्शवादी माना जाता है, जिससे उनके व्यावहारिक उपयोग पर प्रश्न उठते हैं। आधुनिक आर्थिक संरचना, जो प्रतिस्पर्धा और लाभ पर आधारित है, उसमें नैतिकता और सादगी जैसे सिद्धांतों को लागू करना सरल नहीं है। इस कारण इन विचारों को समकालीन संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित करने की आवश्यकता महसूस होती है।

## समालोचनात्मक विश्लेषण :

आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में गांधीवादी विचारों का समालोचनात्मक विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि ये विचार न केवल ऐतिहासिक महत्व रखते हैं, बल्कि समकालीन विकास-चर्चा में भी एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। तथापि, इनकी प्रासंगिकता का मूल्यांकन केवल आदर्शात्मक आधार पर नहीं, बल्कि व्यावहारिक परिस्थितियों और वर्तमान आर्थिक संरचनाओं के संदर्भ में करना आवश्यक है। यह विश्लेषण इस बात को समझने का प्रयास करता है कि गांधीवादी सिद्धांत किस सीमा तक आधुनिक संदर्भ में लागू किए जा सकते हैं और किन क्षेत्रों में इनके पुनर्संयोजन की आवश्यकता है।

गांधीवादी विचारों की प्रमुख विशेषता यह है कि वे विकास को मानव-केंद्रित दृष्टिकोण से देखते हैं। इस दृष्टिकोण में आर्थिक प्रगति का उद्देश्य केवल उत्पादन या लाभ नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति का समग्र कल्याण होता है। समकालीन संदर्भ में यह दृष्टिकोण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि वर्तमान विकास मॉडल कई बार सामाजिक असमानताओं और पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है। इस दृष्टि से गांधीवादी विचार एक संतुलित और नैतिक विकास की दिशा प्रस्तुत करते हैं, जो आत्मनिर्भर भारत के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकते हैं।

हालाँकि, यह भी स्वीकार करना आवश्यक है कि गांधीवादी सिद्धांतों का पूर्णतः अनुप्रयोग आधुनिक औद्योगिक और तकनीकी युग में संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, वैश्विक प्रतिस्पर्धा के इस दौर में बड़े पैमाने पर उत्पादन और तकनीकी दक्षता को अनदेखा नहीं किया जा सकता। ऐसे में केवल कुटीर उद्योगों और स्थानीय उत्पादन पर निर्भर रहना व्यावहारिक नहीं होगा। इस स्थिति में आवश्यक है कि गांधीवादी विचारों को आधुनिक तकनीक और नवाचार के साथ समन्वित किया जाए, ताकि एक संतुलित विकास मॉडल विकसित हो सके। गांधीवादी विचारों में नैतिकता और सादगी पर अत्यधिक बल दिया गया है, जो आधुनिक उपभोक्तावादी समाज में चुनौतीपूर्ण प्रतीत होता है। वर्तमान समय में आर्थिक विकास को उपभोग और बाजार के विस्तार से जोड़ा जाता है, जिससे गांधीवादी संयम और सीमित उपभोग की अवधारणा कई बार अव्यावहारिक लगती है। फिर भी, यह दृष्टिकोण दीर्घकालिक स्थिरता और पर्यावरणीय संतुलन के लिए आवश्यक माना जा सकता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि गांधीवादी विकेंद्रीकरण का सिद्धांत आधुनिक शासन व्यवस्था और आर्थिक ढाँचे के साथ किस प्रकार समन्वित हो सकता है। वर्तमान समय में कई नीतियाँ केंद्रीकृत रूप से संचालित होती हैं, जबकि गांधीवादी दृष्टिकोण स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्राथमिकता देता है। इस अंतर को संतुलित करने के लिए ऐसी नीतिगत संरचना की आवश्यकता है, जो दोनों दृष्टिकोणों के बीच समन्वय स्थापित कर सके।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में गांधीवादी विचारों का पुनर्पाठ भी आवश्यक है। इसका अर्थ यह नहीं है कि इन विचारों को यथावत लागू किया जाए, बल्कि इन्हें वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप पुनः व्याख्यायित किया जाए। उदाहरण के लिए, स्वदेशी की अवधारणा को आधुनिक तकनीकी नवाचार और वैश्विक सहयोग के साथ जोड़कर देखा जा सकता है, जिससे यह अधिक व्यावहारिक और प्रभावी बन सके।

इसके अतिरिक्त, यह भी महत्वपूर्ण है कि गांधीवादी विचारों को केवल आर्थिक दृष्टिकोण तक सीमित न रखा जाए, बल्कि उन्हें सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में भी समझा जाए। आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक

स्वतंत्रता का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह एक मानसिक और सामाजिक प्रक्रिया भी है, जिसमें व्यक्ति और समाज दोनों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक होती है।

### निष्कर्ष :

आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा और गांधीवादी विचारधारा के बीच एक गहरा और बहुआयामी संबंध विद्यमान है, जो केवल सैद्धांतिक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि व्यावहारिक और नीतिगत संदर्भों में भी अपनी प्रासंगिकता बनाए रखता है। आत्मनिर्भरता की आधुनिक अवधारणा जहाँ आर्थिक सुदृढ़ता, तकनीकी विकास और वैश्विक प्रतिस्पर्धा पर बल देती है, वहीं गांधीवादी दृष्टिकोण इसे नैतिकता, सामाजिक समावेशन और स्थानीय सशक्तिकरण के साथ जोड़कर एक व्यापक रूप प्रदान करता है। गांधीवादी विचार आत्मनिर्भर भारत को एक संतुलित दिशा प्रदान करते हैं, जिसमें विकास का केंद्र केवल उत्पादन या पूंजी नहीं, बल्कि मानव कल्याण और सामाजिक न्याय होता है। स्वदेशी, विकेंद्रीकरण, ग्राम-आधारित विकास और सीमित उपभोग जैसे सिद्धांत आत्मनिर्भरता की अवधारणा को जमीनी स्तर पर साकार करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। ये सिद्धांत यह सुनिश्चित करते हैं कि विकास की प्रक्रिया समाज के सभी वर्गों तक पहुँचे और उसमें समान भागीदारी संभव हो।

इसके साथ ही यह भी स्पष्ट हुआ कि आधुनिक संदर्भ में गांधीवादी विचारों को यथावत लागू करना संभव नहीं है, बल्कि उन्हें वर्तमान परिस्थितियों के अनुरूप पुनर्व्याख्यायित करने की आवश्यकता है। तकनीकी प्रगति, वैश्विक आर्थिक संबंध और बदलती सामाजिक संरचनाओं को ध्यान में रखते हुए इन विचारों का समन्वय करना आवश्यक है, ताकि वे अधिक प्रभावी और व्यवहारिक बन सकें। इस प्रकार गांधीवादी दृष्टिकोण को आधुनिक विकास मॉडल के साथ जोड़कर एक समन्वित और संतुलित व्यवस्था विकसित की जा सकती है। आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक नीतियों का परिणाम नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक और मानसिक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति, समाज और शासन तीनों की सक्रिय भूमिका होती है। गांधीवादी विचार इस प्रक्रिया को एक नैतिक और मानवीय आधार प्रदान करते हैं, जिससे आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक लक्ष्य न रहकर एक समग्र विकास का माध्यम बन जाती है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में गांधीवादी विचारधारा एक प्रेरक और मार्गदर्शक भूमिका निभा सकती है, बशर्ते इसे समकालीन आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुरूप लचीले ढंग से अपनाया जाए। यह दृष्टिकोण विकास को अधिक समावेशी, संतुलित और टिकाऊ बनाने में सहायक सिद्ध होगा तथा भारत को एक सशक्त, आत्मनिर्भर और नैतिक रूप से सुदृढ़ राष्ट्र के रूप में स्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान देगा।

### संदर्भ सूची :

1. महात्मा गांधी. (2009). हिंद स्वराज. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन।
2. महात्मा गांधी. (2010). ग्राम स्वराज. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन।
3. महात्मा गांधी. (2011). सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा. अहमदाबाद : नवजीवन प्रकाशन।
4. कुमारप्पा, जे. सी. (2008). गांधीवादी अर्थशास्त्र. वाराणसी : सर्व सेवा संघ प्रकाशन।

5. कुमारप्पा, जे. सी. (2010). आर्थिक व्यवस्था और ग्राम विकास. नई दिल्ली : सर्व सेवा संघ।
6. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (2006). गांधी और भारतीय संस्कृति. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
7. शर्मा, रामविलास. (2005). भारतीय चिंतन और गांधीवाद. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
8. सिंह, रामजी. (2012). गांधीवादी विचारधारा और आधुनिक भारत. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन।
9. मिश्र, विद्यानिवास. (2009). भारतीय समाज और गांधीवादी दृष्टि. वाराणसी : चौखंबा प्रकाशन।
10. पाण्डेय, रामशंकर. (2014). गांधी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था. आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
11. वर्मा, अनीता. (2018). गांधीवादी अर्थनीति और विकास. नई दिल्ली : दीप एंड दीप प्रकाशन।
12. तिवारी, संजीव. (2016). भारतीय विकास और गांधीवादी मूल्य. भोपाल : मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
13. चौधरी, कुसुम. (2017). समकालीन भारत में गांधीवादी विचार. जयपुर : रावत पब्लिकेशन।
14. सिंह, अर्चना. (2020). आत्मनिर्भर भारत : गांधीवादी परिप्रेक्ष्य. जयपुर : रावत पब्लिकेशन।
15. गुप्ता, रमेश. (2021). गांधीवादी अर्थशास्त्र और आत्मनिर्भरता. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन।
16. शर्मा, संदीप. (2022). आत्मनिर्भर भारत और गांधीवादी चिंतन. नई दिल्ली : दीप एंड दीप प्रकाशन।
17. जोशी, राजेश. (2023). गांधी और समकालीन विकास मॉडल. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
18. मिश्रा, कविता. (2019). गांधीवादी दर्शन और भारतीय अर्थव्यवस्था. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 159-169

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# A study on the Growth of E-commerce in India and its future prospects

Ms. Shahin Shaikh, Research Scholar

DR. B.L. Patidar, Research Guide

School of Studies in Commerce, Samrat Vikramaditya University Ujjain (M.P.)

## 1. Abstract –

E-commerce in India has emerged as one of the fastest growing sectors in the digital economy, significantly transforming the traditional retail system. This study examines the growth, patterns, key drivers, economic impact, challenges, and future prospects of e-commerce in India. The research is based on secondary data collected from various reports, journals, and credible online sources, adopting a descriptive and analytical approach.

The findings indicate that the rapid expansion of internet penetration, increasing smartphone usage, and the growth of digital payment systems have been the major factors driving e-commerce development in India. The sector has not only changed consumer buying behaviour but has also contributed to employment generation, MSME development, and increased foreign investment.

Despite its significant growth, the e-commerce sector faces challenges such as logistics inefficiencies, cybersecurity concerns, regulatory issues, and high competition. However, continuous technological advancements, improved infrastructure, and supportive government initiatives are expected to address these challenges effectively.

The study further highlights that the future of e-commerce in India is highly promising, with increasing opportunities in rural markets, mobile commerce, artificial intelligence, and digital innovations. It is concluded that e-commerce will continue to play a vital role in strengthening India's digital economy and overall economic development in the coming years.

## 2. Keywords –

E-commerce, Digital Economy, Online Shopping, Supply Chain, Logistics, Digital Payments, Internet Penetration, Mobile Commerce, Future Prospects, Retail Transformation, Technology, Market etc.

### **3. Introduction –**

E-commerce, commonly known as electronic commerce, refers to the buying and selling of goods and services through digital platforms, primarily the internet. Over the last decade, India has witnessed a remarkable transformation in its commercial landscape due to the rapid growth of e-commerce. This transformation has been fuelled by technological advancements, increased accessibility to the internet, and changing consumer preferences.

India is currently one of the fastest-growing e-commerce markets in the world. The rise of affordable smartphones and low-cost internet services has enabled millions of people, even in rural areas, to access online platforms. Consumers are now more inclined towards online shopping due to convenience, variety, competitive pricing, and doorstep delivery.

The COVID-19 pandemic acted as a catalyst for the growth of e-commerce in India. During the lockdown period, consumers shifted significantly towards online platforms for purchasing essential and non-essential goods. This led to a surge in demand for online services, further strengthening the e-commerce ecosystem.

Despite its rapid growth, the e-commerce sector in India faces several challenges, including logistics constraints, cybersecurity risks, and regulatory complexities. However, the continuous evolution of technology and increasing consumer trust indicate a bright future for this sector.

This research paper aims to provide a comprehensive analysis of the growth of e-commerce in India and explore its future prospects, considering both opportunities and challenges.

### **4. Objectives of the Study –**

The objectives of this study are designed to systematically examine the growth and development of e-commerce in India. This section focuses on identifying the key factors influencing its expansion, evaluating its economic impact, and exploring future opportunities to understand the overall significance of e-commerce in the digital era.

#### **Objectives are follows :**

- To study the growth of e-commerce in India
- To analyse the growth pattern of e-commerce in India.
- To identify key factors driving e-commerce expansion.
- To examine the economic impact of e-commerce.
- To study challenges faced by the sector.
- To evaluate future opportunities and prospects.

### **5. Research Methodology –**

The present study is descriptive and analytical in nature. It is based entirely on secondary data

sources. Data has been collected from research journals, government reports, industry publications, and reliable online sources. Various statistical reports and market analysis studies have been used to understand trends in the growth of e-commerce in India.

## **6. Review of Literature –**

E-commerce in India has been widely studied by various researchers, highlighting its growth, challenges, and future potential. Some important studies are reviewed below :

**6.1. Sharma (2022) :** Sharma examined the rapid growth of e-commerce in India and found that increasing internet penetration and digital payment systems are the major drivers. The study emphasized that urban consumers are the primary contributors, but rural participation is also increasing steadily.

**6.2. Kumar and Singh (2021) :** This study focused on consumer behavior in online shopping. It concluded that convenience, price comparison, and home delivery significantly influence consumer preferences. The research also highlighted that trust and security are critical factors in customer retention.

**6.3. Patel (2020) :** Patel analysed the role of logistics and supply chain management in e-commerce. The study found that efficient delivery systems and warehouse management are essential for customer satisfaction and business success.

**6.4. Verma (2019) :** Verma studied the challenges faced by the e-commerce sector in India. The research identified issues such as cybersecurity risks, return management, and regulatory constraints as major barriers to growth.

**6.5. Gupta and Mehta (2023) :** This study examined the economic impact of e-commerce in India. It concluded that the sector has contributed significantly to employment generation, increased market access for small businesses, and attracted foreign investment.

The reviewed literature indicates that e-commerce in India has experienced rapid growth due to technological advancements and changing consumer behaviour. However, challenges such as logistics inefficiencies and security concerns still need to be addressed for sustainable development.

## **7. Growth of E-Commerce in India –**

E-commerce in India has witnessed rapid growth over the past decade. This expansion has not been limited to urban areas but has also extended to rural and semi-urban regions. The digital revolution, technological innovations, and changes in consumer behavior have significantly contributed to elevating this sector to new heights.

### **7.1 Growth in Internet Users and Digital Access –**

E-commerce growth in India is closely linked with the expansion of internet users. The availability of affordable data plans and improved network connectivity has significantly increased

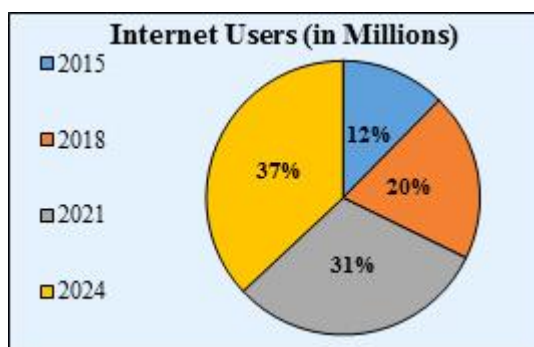
online access.

**Table : 1**  
**Growth of Internet Users in India**

Year	Internet Users (in Millions)
2015	302
2018	483
2021	750
2024	900

**Source:** TRAI Reports 2015-2024,

**Figure : 1**



#### **Analysis –**

The table clearly shows a continuous rise in internet users, which has directly contributed to the expansion of e-commerce platforms. More internet users mean a larger customer base for online businesses.

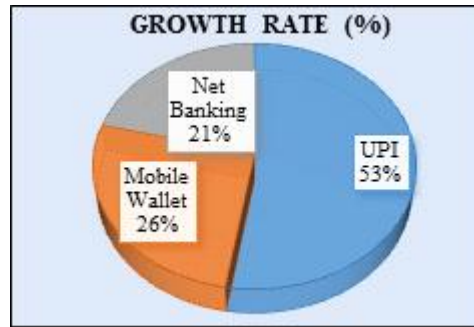
#### **7.2 Rise of Digital Payment Systems –**

The introduction of secure and user-friendly digital payment systems has accelerated e-commerce growth. Platforms such as UPI, mobile wallets, and net banking have simplified online transactions.

**Table : 2**  
**Growth of Digital Payment Modes**

Payment Mode	Growth Rate (%)
UPI	300%
Mobile Wallet	150%
Net Banking	120%

**Source:** RBI and NPCI Reports.



### Analysis –

The rapid increase in digital payments has reduced dependency on cash and enhanced consumer trust in online transactions, thereby boosting e-commerce adoption.

### 7.3 Increasing Smartphone Penetration –

Smartphones have played a crucial role in the expansion of e-commerce in India. Affordable smartphones have enabled people from all income groups to access online platforms. Mobile commerce (m-commerce) is now dominating the e-commerce sector, with a large percentage of transactions being conducted through mobile devices.

### 7.4 Changing Consumer Behaviour –

Consumer preferences have shifted significantly in recent years. Customers now prefer online shopping due to convenience, time-saving, product variety, and competitive pricing. Features such as easy returns, discounts, and home delivery have further increased the popularity of e-commerce platforms.

### 7.5 Government Initiatives and Policy Support –

Government initiatives such as “Digital India”, “Start-up India”, and promotion of cashless transactions have created a favourable environment for the growth of e-commerce. These initiatives have improved digital infrastructure and encouraged both businesses and consumers to adopt online platforms.

### 7.6 Expansion of Logistics and Supply Chain –

Efficient logistics and supply chain management have been key drivers of e-commerce growth. Companies have invested heavily in warehousing, inventory management, and last-mile delivery systems to ensure faster and reliable delivery services.

### 7.7 Growth During COVID-19 Pandemic –

The COVID-19 pandemic acted as a turning point for the e-commerce sector. During lockdowns, consumers relied heavily on online platforms for purchasing essential goods. This led to a surge in online shopping and increased adoption among first-time users.

## **7.8 Rural Market Penetration –**

E-commerce companies are now focusing on rural and semi-urban markets. Increased internet penetration and digital literacy in these areas have opened new opportunities for growth. Rural consumers are becoming active participants in online shopping, expanding the overall market size.

## **7.9 Role of Technology in Growth –**

Advanced technologies such as Artificial Intelligence (AI), Big Data Analytics, and Cloud Computing have enhanced the efficiency of e-commerce operations. These technologies help in demand forecasting, personalized marketing, and improving customer experience.

The growth of e-commerce in India is the result of a combination of technological advancements, supportive government policies, improved digital infrastructure, and evolving consumer behavior. The continuous increase in internet users, digital payments, and logistics efficiency indicates that the sector will continue to expand in the coming years.

## **8. Impact of E-Commerce on Indian Economy –**

E-commerce has emerged as a significant contributor to the growth and transformation of the Indian economy. Over the past decade, it has not only reshaped the retail sector but has also influenced various economic dimensions such as employment generation, investment, and market expansion.

One of the most notable impacts of e-commerce is “employment generation”. The rapid expansion of online businesses has created numerous job opportunities in areas such as logistics, warehousing, delivery services, customer support, and information technology. The rise of e-commerce platforms has also led to the growth of gig and freelance employment, particularly in last-mile delivery services.

E-commerce has also played a crucial role in the “development of Micro, Small, and Medium Enterprises (MSMEs)”. Online marketplaces have enabled small businesses to reach a wider customer base beyond geographical boundaries. This has increased their sales potential and enhanced their competitiveness in the market. As a result, many traditional businesses have transitioned to digital platforms to sustain and grow their operations.

E-commerce has also contributed to “consumer welfare” by providing greater product variety, competitive pricing, and convenience. Consumers can now compare products, read reviews, and make informed purchasing decisions from the comfort of their homes.

In addition, the growth of digital payment systems has promoted a “cashless economy”, improving transparency and reducing transaction costs. Government initiatives supporting digital transactions have further strengthened this trend.

In conclusion, e-commerce has become a vital driver of economic growth in India. Its positive

impact on employment, business expansion, investment, and consumer welfare highlights its growing importance in the country's economic framework.

## **9. Challenges Faced by E-Commerce in India –**

Despite its rapid growth, the e-commerce sector in India faces several challenges that hinder its smooth functioning and long-term sustainability. One of the major challenges is “logistics and infrastructure limitations”, particularly in rural and remote areas. Inefficient transportation networks and lack of proper warehousing facilities often lead to delays in delivery and increased operational costs.

Another significant issue is “cybersecurity and data privacy concerns”. As online transactions increase, the risk of data breaches, fraud, and cyberattacks also rises. This affects consumer trust, which is a critical factor for the success of e-commerce platforms. Ensuring secure payment systems and protecting customer information remain ongoing challenges.

## **10. Future Prospects of E-Commerce in India –**

The future of e-commerce in India appears highly promising, driven by rapid technological advancements, increasing digital adoption, and evolving consumer preferences. As India continues to move towards a digital economy, e-commerce is expected to play a pivotal role in shaping the country's retail and business landscape. The sector is projected to witness sustained growth, supported by both urban expansion and rising participation from rural markets.

### **10.1 Expansion into Rural and Semi-Urban Markets –**

One of the most significant future prospects of e-commerce in India lies in its expansion into rural and semi-urban areas. With increasing internet penetration, affordable smartphones, and rising digital literacy, consumers in these regions are gradually embracing online shopping. E-commerce companies are also focusing on these untapped markets by offering localized services, regional language interfaces, and tailored product offerings. This expansion will significantly increase the overall market size and customer base.

### **10.2 Technological Advancements and Innovation –**

Emerging technologies such as Artificial Intelligence (AI), Machine Learning (ML), Big Data Analytics, and Cloud Computing are expected to revolutionize the e-commerce sector. These technologies enable businesses to analyze consumer behavior, predict demand patterns, and provide personalized shopping experiences. AI-powered chatbots, recommendation systems, and automated warehouses will enhance efficiency and customer satisfaction.

### **10.3 Growth of Mobile Commerce (M-Commerce) –**

Mobile commerce is expected to dominate the future of e-commerce in India. With a large

proportion of the population accessing the internet through smartphones, mobile-based shopping applications have become the preferred choice for consumers. User-friendly interfaces, secure payment options, and app-based discounts further encourage mobile shopping. This trend is likely to strengthen in the coming years.

#### **10.4 Strengthening of Logistics and Supply Chain –**

The future growth of e-commerce will heavily depend on the efficiency of logistics and supply chain systems. Companies are investing in advanced warehousing, real-time tracking systems, and last-mile delivery solutions to ensure faster and more reliable delivery. Innovations such as drone delivery and automated distribution centers may further enhance logistics efficiency in the future.

#### **10.5 Rise of Social Commerce –**

Social media platforms are increasingly becoming important channels for online shopping. Social commerce, which involves selling products through social networking platforms, is gaining popularity among younger consumers. Influencer marketing, live streaming and interactive content are expected to drive sales and improve customer engagement.

#### **10.6 Increased Adoption of Digital Payments –**

The continued growth of digital payment systems will further strengthen the e-commerce ecosystem. Secure and seamless payment options such as UPI, digital wallets, and contactless payments will enhance consumer trust and encourage more people to engage in online transactions.

#### **10.7 Government Support and Policy Initiatives –**

Government initiatives such as Digital India, Startup India, and improvements in digital infrastructure are expected to provide strong support to the e-commerce sector. Favorable policies and regulatory frameworks will encourage innovation, investment, and expansion in this field.

#### **10.8 Focus on Customer Experience and Personalization –**

In the future, e-commerce companies will increasingly focus on enhancing customer experience through personalization. By using data analytics, businesses can offer customized product recommendations, targeted promotions, and improved customer service, leading to higher customer satisfaction and loyalty.

#### **10.9 Sustainable and Green E-Commerce Practices –**

Sustainability is becoming an important aspect of e-commerce. Companies are expected to adopt eco-friendly packaging, green logistics, and energy-efficient operations to reduce their environmental impact. Consumers are also becoming more conscious of sustainable practices, which will influence business strategies.

### **10.10 Integration of Omni channel Retailing –**

The future of e-commerce will involve the integration of online and offline retail channels, known as Omni channel retailing. Businesses will provide a seamless shopping experience by combining physical stores with digital platforms. This approach will enhance convenience and improve customer engagement.

### **11. Findings of the Study –**

The findings of this study are derived from a comprehensive analysis of the growth, trends, and impact of e-commerce in India.

#### **Findings are follows :**

- E-commerce in India has experienced rapid and consistent growth over the past decade.
- Increasing internet penetration and smartphone usage are the primary drivers of e-commerce expansion.
- Digital payment systems have significantly enhanced the adoption of online shopping.
- Consumer behaviour has shifted towards convenience, variety, and time-saving purchasing methods.
- E-commerce has contributed substantially to employment generation in logistics, IT, and service sectors.
- The sector has enabled MSMEs to expand their market reach beyond geographical limitations.
- Efficient logistics and supply chain management play a crucial role in ensuring customer satisfaction.

### **12. Suggestions –**

Based on the findings of the study, several practical suggestions are proposed to strengthen the growth and sustainability of e-commerce in India.

#### **Suggestions: are follow :**

- Strengthen logistics and transportation infrastructure, especially in rural and remote areas.
- Enhance cybersecurity measures to protect consumer data and ensure safe transactions.
- Promote digital literacy among consumers to increase awareness and confidence in online shopping.
- Provide greater support and incentives for MSMEs to adopt e-commerce platforms.
- Ensure stable and transparent government policies to create a favorable business environment.
- Invest in advanced technologies such as AI and data analytics for better decision-making.
- Improve last-mile delivery systems to ensure timely and reliable product delivery.
- Develop efficient return and refund management systems to reduce operational costs.

- Focus on customer-centric strategies to enhance satisfaction and loyalty.

### 13. Conclusion –

The present study concludes that e-commerce in India has witnessed remarkable growth over the past decade, driven by rapid digitalization, increased internet penetration, and changing consumer preferences. The sector has transformed the traditional retail landscape by providing convenience, accessibility, and a wide range of products to consumers across the country. Its expansion into rural and semi-urban areas has further strengthened its reach and market potential.

The study also highlights that several key factors, such as the rise of digital payment systems, technological advancements, and improved logistics infrastructure, have significantly contributed to the growth of e-commerce. Moreover, the sector has played a crucial role in economic development by generating employment opportunities, supporting MSMEs, and attracting foreign investments.

However, despite its rapid expansion, the e-commerce sector faces several challenges, including logistics inefficiencies, cybersecurity risks, regulatory complexities, and high competition. Addressing these issues is essential for ensuring sustainable and balanced growth.

In conclusion, e-commerce is poised to become a key driver of India's digital economy. With continuous innovation, improved infrastructure, and effective policy support, the sector will not only strengthen its position in the domestic market but also contribute significantly to the country's overall economic development in the coming years.

### 14. References –

- Agarwal, R. (2022). "Growth of e-commerce in India". *Journal of Digital Economy*, 8(2), 45–60.
- Bansal, S., & Gupta, P. (2021). Consumer behaviour in online shopping. *International Journal of Commerce*, 6(1), 12–25.
- Chaffey, D. (2020). "Digital business and e-commerce management" (7th ed.). Pearson.
- Deloitte. (2023). "E-commerce trends in India". Deloitte Insights.
- Government of India. (2022). "Digital India initiative report". Ministry of Electronics and IT.
- Gupta, A., & Mehta, R. (2023). Impact of e-commerce on MSMEs in India. *Indian Journal of Economics*, 10(3), 78–90.
- IAMAI. (2023). "Internet users in India report". Internet and Mobile Association of India.
- KPMG. (2022). "India e-commerce growth analysis". KPMG Report.
- Kumar, A. (2021). Digital payment systems and e-commerce growth. *Journal of Finance and Technology*, 5(2), 33–48.

- Laudon, K. C., & Traver, C. G. (2021). “E-commerce: Business, technology, society” (16th ed.). Pearson.
- McKinsey & Company. (2023). “Digital commerce in India”. McKinsey Report.
- Ministry of Commerce. (2023). “E-commerce policy framework”. Government of India.
- Narayan, V., & Singh, R. (2020). Logistics and supply chain in e-commerce. “Asian Business Review”, 9(1), 55–70.
- NPCI. (2023). “UPI transaction statistics”. National Payments Corporation of India.
- Patel, H. (2020). Role of logistics in e-commerce. “International Journal of Management Studies”, 7(4)



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 170-176

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## लोक संस्कृति में इतिहास लेखन-एक दृष्टि

डॉ. ज्योति रानी जायसवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग,  
आर्य कन्या पी0 जी0 कालेज, प्रयागराज।

लोक संस्कृति कोई वायवीय अवधारणा नहीं है, इसका एक सुगठित शरीर है। अतः लोक संस्कृति पर विचार करने के लिए उसके शरीर विज्ञान पर विचार करना होगा। लोक संस्कृति के शरीर शास्त्र में 'लोकायन' का महत्वपूर्ण स्थान है। रिचर्ड डॉरसन अपनी पुस्तक 'फॉक लोर एन्ड फॉक लाइफ' की भूमिका में लिखते हैं कि 'विश्लेषण की आवश्यकताएँ लोकविदों को अन्तः अनुशासनिक बनाती हैं'।<sup>1</sup> उनके अनुसार लोकायनों के साहित्यिक उपयोग के लिए साहित्य के व्यापक ज्ञान से जुड़ाव, लोकायनों एवं संस्कृति के सम्बन्धों के मूल्यांकन के लिए नृतत्व शास्त्र से जुड़ाव, मौखिक परम्पराओं के ऐतिहासिक महत्व के लिए इतिहास के संज्ञान से जुड़ाव आवश्यक है। ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों यथा भाषा-विज्ञान, भूगोल संगीतशास्त्र, समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान लोक संस्कृति के बौद्धिक अध्ययन की प्रक्रिया में आवश्यक माध्यम हैं। किन्तु साहित्यिक, मानव विज्ञानी और ऐतिहासिक विशेषज्ञता लोक संस्कृति के अध्ययन के लिए प्राथमिक एवं मुख्य औजार है। लोक संस्कृति के अध्ययन के लिए हमें उसके 'मैटेरियल' तथा 'नॉन मैटेरियल' दोनों रूपों को देखना होगा। डॉरसन अपनी सैद्धान्तिक अवधारणा में इनको अलग संवर्ग के रूप में अध्ययन न करते हुए इनका संश्लेषण तैयार करते हैं, जिसमें मौलिक साहित्य, भौतिक संस्कृति, सामाजिक लोक परम्परा, संस्कार, दृश्य कलाएँ सब शामिल हैं। लोक संस्कृति के विश्लेषण के लिए अब तक जिन प्राविधियों का उपयोग किया गया है उनमें ऐतिहासिक, भौगोलिक, तकनीकी, ऐतिहासिक पुनर्रचनावादी, वैचारिक, व्यावहारिक मनोविश्लेषकीय, संरचनावादी, सौंदर्यात्मक, सैद्धान्तिक ढाँचों का उपयोग शामिल है। लोक संस्कृति की संरचना, रूप, क्रिया, अभिक्रिया, एक जटिल प्रक्रिया से संभव होते हैं। अतः उन्हें समझने के लिए नये सन्दर्भ में अब तक हमारे पास ज्ञान के जितने भी साधन उपलब्ध हैं उनसे एक सुव्यवस्थित प्राविधि एवं तकनीक विकसित करनी होगी, जिसका आधार सदैव अन्तःअनुशासनिक अन्तः संवाद से ही संभव है, नहीं तो लोक संस्कृति के ढाँचों के अध्ययन में हम पूर्व की भाँति ही असफल होते रहेंगे। इसके लिए औपनिवेशिक निर्मित में निर्मित 'इन्टेलेक्चुअल' शब्द से हटकर 'विजडम' की संकल्पना का स्मरण करना होगा।<sup>2</sup> अपने संज्ञान के लोकप्रज्ञा के तत्वों को जागृत करना होगा।

इतिहास के सन्दर्भ में, कई देशों का राष्ट्रीय इतिहास लोक संस्कृति के स्रोतों के उपयोग से विकसित किया गया है। अफ्रीका के इतिहास का व्यापक भाग उनके लोक संस्कृति के अध्ययन से विकसित हुआ है।<sup>3</sup> इसीलिए उनके पास इतिहास की लोक अवधारणा है, आभिजात्य अवधारणा नहीं। आज जब अमेरिकी और

अमेरिका पोषित समाज वैज्ञानिकों का एक वर्ग 'ग्लोबल हिस्ट्री, ग्लोबल सोसाइटी, ग्लोबल संस्कृति' की चर्चा एक अभियान के तहत करने लगा है तो हमें ग्लोबल के इस छद्मपूर्ण छन्द को समझने में और देर नहीं करना चाहिए। इतिहास के सन्दर्भ में मैं यह कहना चाहूँगा कि 'ग्लोबल इतिहास' के उनके ब्रह्माण्ड में लोक और जातीय इतिहास नहीं होगा। गाँव से लेकर विश्व तक आभिजात्यत। एक रैखिकता तथा सरलीकरण का तर्क जाल होगा। 'माइक्रो' के 'मैक्रो' का यही रूप होगा। ज्ञातव्य हो कि इस तरह के सम्बन्धों को एकसूत्रता की खोज औपनिवेशिक इतिहासकारों ने अपने उपनिवेशों के साथ प्रारम्भ की थी।

लोक संस्कृति के अध्ययन के लिए 'देशज' और 'लोक प्राविधि' की आवश्यकता महसूस होती है। अब इतिहासकारों की चिन्ताएँ 'लोक संस्कृति' को समझने की दिशा में बढ़ रही हैं, यह सुखद है। प्रो० नीहार रंजन रे की यह स्थापना इस सम्बन्ध में सार्थक उक्ति है कि 'बिना लोक व्यवहारों एवं लोक धर्म इत्यादि लोक संस्कृति के विविध आयामों में प्रवेश किए जन इतिहास की रचना सम्भव नहीं।<sup>4</sup> डी०डी० कौशाम्बी ने भी प्राचीन भारत के सामाजिक और ऐतिहासिक सच्चाई के अध्ययन के लिए मिथकों का अध्ययन किया।<sup>5</sup> हालाँकि उनके कुछ निष्कर्षों पर यांत्रिकता का आरोप है और उनके पुनर्मूल्यांकन की माँग भी की जा रही है। उत्तरी पूर्वी भारत में, पर्वतीय एवं आदिवासी सांस्कृतिक क्षेत्रों में जहाँ लिखित स्रोतों का अभाव है, वहाँ इतिहास रचना में लोक सांस्कृतिक एवं मौखिक परम्परा की महती भूमिका है। इस सन्दर्भ में उत्तरी पूर्वी भारत में कुछ अच्छे कार्य हुए हैं।<sup>6</sup> इतिहासकार इतिहास में टूटे हुए सूत्रों को जोड़ने के लिए लोक संस्कृति की स्रोत सामग्रियों का उपयोग कर रहे हैं। स्रोत सामग्रियों एवं इतिहास की निरन्तरता में जहाँ रिक्त स्थान है, उसको भरने के लिए लोक संस्कृति का उपयोग कर रहे हैं। किन्तु इससे आगे बढ़कर लिखित स्रोतों के इतिहास की प्रामाणिकता लोक संस्कृति की कसौटी पर कस कर प्राप्त करने की आवश्यकता है। क्योंकि गजेटियर रिकार्ड्स, ब्रितानी शासकों की डायरियाँ, इत्यादि औपनिवेशिक मानसिकता की प्रतिनिधि व्यक्तिवादी रचनाएँ हैं, इन्हें, लोक संस्कृति के सामूहिक सच से जोड़ कर देखने की आवश्यकता है।

इतिहास में ही नहीं, नृत्य शास्त्र एवं मानव विज्ञान के अनुशासनों में भी लोक संस्कृति से डाटा निकाल कर उनका विश्लेषण कर अपनी परिकल्पनाओं को रूप देने की दिशा में कार्य हो रहा है। किन्तु हमें इस सन्दर्भ में ऐसी समाज वैज्ञानिक दृष्टि की आवश्यकता महसूस होती है जो अंतःअनुशासनिकता एवं तकनीकी बाहुल्य के निरन्तर अन्तःसंवाद से विकसित हो रही हो। इस सन्दर्भ में बेहतर परिणाम की प्राप्ति के लिए हमें 'ज्ञान के विशेषीकरण' से आगे निकलना होगा तथा 'विभिन्न विज्ञानों का समुच्चय' विकसित करना होगा।

समाज वैज्ञानिक जिसे लोक संस्कृतिक कहते हैं, लोकविद् उसे ही 'लोकायन' कहते हैं। उड़ीसा के लोकविदों में 'लोकविधा' शब्द प्रचलित है। सर्वाधिक स्वीकृत परिभाषा के रूप में यूनेस्को के तकनीकी एवं विधिक समिति द्वारा 01.05.1987 को प्रस्तावित परिभाषा द्रष्टव्य है "लोकायन (व्यापक अर्थों में पारम्परिक लोकप्रिय लोक संस्कृति) समूहोन्मुख एवं परम्परा आधारित यह संस्कृति है जो समुदाय के लोगों की रचना एवं उनकी इच्छाओं एवं आकांक्षाओं की संवहिका तथा उनकी सांस्कृतिक अस्मिता की परिछाया भी है। इसके मूल्य एवं मानक मौखिक रूप से प्रवाहित होते हैं। भाषा, साहित्य, संगीत, नृत्य, खेल मिथक, कर्मकाण्ड, संस्कार, दस्तकारी, वस्तुकृति एवं अन्य कलाएँ इसके रूप होते हैं।"<sup>7</sup>

लोकायन मानव की सांस्कृतिक परम्परा का अन्यतम आयाम है। यह जीवंत एवं परिवर्तनशील परम्परा है।

यह सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास के लैण्डस्केप पर अपने को कई रूपों में अभिव्यक्त करता है। यह लोकप्रिय जातीय, क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्वरूपों में अपने को अभिव्यक्त करता है। लोक संस्कृति के अध्ययन की सौन्दर्यवादी पद्धति मूलतः ग्रीक दार्शनिक अरस्तू की प्रसिद्ध कृति पोयेटिक्स तथा भारतीय अलंकारवादियों की रचनाओं से उभरी है। इसमें लोकायन के मूलतः साहित्यिक सौन्दर्य का मूल्यांकन किया गया है। इसने मानव विज्ञान, मौखिक इतिहास, लोक संस्कृति तथा समाज विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में अध्ययन एवं विश्लेषण की नयी संभावनाएँ खोली।

भारत में लोक संस्कृति की व्याख्या के लिए 19वीं शताब्दी में विकसित राष्ट्रवादी प्राविधि का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। रवीन्द्रनाथ टैगोर, नन्दलाल बोस ने राष्ट्रवादी पद्धति के विकास में सक्रिय सहयोग दिया। राष्ट्रवादी पद्धति ने लोकायन को राष्ट्रीय धारा से तो जोड़ा किन्तु इससे बहुत कुछ छूट गया। इस 'छूटे हुए' को देखते हुए बंगाल के लोकविद गुरुशादत्त ने लोकायन के क्षेत्रीय पक्ष पर जोर दिया हालाँकि उनका यह जोर बाद में चलकर लोकायन की क्षेत्रीय स्वायत्तता की अवधारणा में तबदील हो गया। भारत में लोक संस्कृति के अध्ययन का सिद्धान्त विकसित करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं संवेदनशील योगदान आनन्द के० कुमार स्वामी का रहा, जिन्होंने लोक संस्कृति को सदैव परम्परा से जोड़ कर देखा। उन्होंने 1936 में अपने एक प्रसिद्ध लेख 'द नेचर ऑफ फॉकलोर एण्ड पापुलर आर्ट' में स्पष्ट रूप से रेखांकित किया कि सभी पारम्परिक कलाएँ लोक कलाएँ हैं, क्योंकि ये सर्वसम्मत एवं निर्विवादित जन की रचना है। उन्होंने लोकायन के अध्ययन के लिए 'देसी' प्राविधि के विकास के लिए सैद्धान्तिक जमीन दी।

इतिहास लेखन में लोक संस्कृति और लोक संस्कृति में इतिहास लेखन का प्रवेश क्यों और कैसे हुआ, यह एक ऐतिहासिक सर्वेक्षण का प्रश्न है। वस्तुतः अठारहवीं शताब्दी के अन्त और उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में जब व्यापारी, मशीनी एवं पूँजीवादी सभ्यता में 'आदमी', 'जन' का लोप होने लगा तो यूरोप के बौद्धिकों में 'जन' को खोजने का रुझान बढ़ा। इस 'लोप हो रहे जन' की खोज के लिए उन्होंने सर्वप्रथम उसकी पारम्परिक लोकप्रिय संस्कृति को खोजने का अभियान चलाया जो इस सभ्यता में लुप्त हो रही थी।

यूरोप के इस बौद्धिक वर्ग के पास इस समय तक 'लोक की अवधारणा' नहीं थी। उसने धीरे-धीरे लोक की सुगठित अवधारणा का विकास किया। लोकप्रिय संस्कृति के अवधारणा की गठन की प्रक्रिया शोधपूर्ण किन्तु उत्सुकता से भरी हुई है। 1774 ई० में जे० जी० हर्डर ने 'फॉकस्लाइड' (Volkslied) अर्थात् फॉकसांग (लोक गीत) का प्रचलन किया।<sup>8</sup> अठारहवीं शताब्दी के अन्त में लोक कथाओं के ही अर्थ में यह उससे थोड़ा भिन्न 'फॉक साज' (Volkssage) शब्द का जन्म हुआ। उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में जोसेफ गोरेस नामक पत्रकार ने फॉक बक (Volksbuch) नामक शब्द इसके लिए प्रचलित किया।<sup>9</sup> 1846 ई० में अंग्रेजी में फॉक लोर शब्द का प्रचलन हुआ। 1850 ई० में 'फॉक्सकॉसपील' (Volkschauspiel) शब्द इसके लिए प्रयुक्त होने लगा। विभिन्न यूरोपीय देशों में इसी तरह की शब्दावलिियाँ प्रयुक्त होने लगीं। स्वीडिश में फॉक वाइजर, इटालियन में कैंटी पोपलरी (Cantipoplari) रूसी भाषाओं में नरोदनीपेसनी (Narodnypesni), हंगरी में नेपदालोक (Nepdalok) का व्यवहार होने लगा। वस्तुतः जे० जी० हर्डर ने ही लोकप्रिय संस्कृति— कल्चर—देस—फॉक्स (Kultur-Des-Volkes) का प्रयोग शिक्षित संस्कृति (Learned culture) के विरोधी भाषा में किया।<sup>10</sup> इस बौद्धिक वर्ग ने 'जनता की लोकप्रिय संस्कृति के संकलन का महत्वपूर्ण कार्य किया। यूरोप में लोकप्रिय संस्कृति के प्रमुख सिद्धान्तकार

जे० जी० हर्डर ने यह सिद्धान्त स्थापित किया कि पुनर्जागरण के बाद के विश्व में पुरानी कविता का नैतिक प्रभाव लोकगीत में ही सुरक्षित है। इसके दूसरे बड़े सिद्धान्तकार ग्रीम ने 'लोकप्रिय संस्कृति' की सामुदायिकता के सिद्धान्त को स्थापित किया। इन दोनों के प्रभाव में यूरोप में राष्ट्रीय लोक गीतों के संकलन पर संकलन निकलने लगे।

भारत में इसका संकलन दो प्रवृत्तियों के कारण हुआ। भारत में कार्यरत औपनिवेशिक अधिकारियों ने शासित को जानने-समझने के उद्देश्य से इसका संकलन किया।<sup>11</sup> बीसवीं शताब्दी में कुछ राष्ट्रवादी कवियों ने अपनी संस्कृति को गौरव मण्डित करने के लिए लोक संस्कृति से सहारा लेने हेतु इसका संकलन किया।<sup>12</sup> बाद में चलकर लोकसंस्कृतिविद् पं० कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक संस्कृति के संकलन एवं लोक परम्परा के अध्ययन का प्रयास किया।<sup>13</sup> किन्तु लोक संस्कृति के ये देशी एवं विदेशी दोनों प्रकार के विद्वानों एवं कार्यकर्ताओं ने मात्र लोकप्रिय संस्कृति के संकलन का कार्य किया। विश्लेषण का कार्य नहीं किया।

लोक संस्कृतिवादियों की तरह यूरोप के इतिहासकारों ने भी व्यावसायिक एवं औद्योगिक विकास में क्षय होते जा रहे 'आदमी' व 'जन', उसकी लोकप्रिय संस्कृति तथा परम्परा की खोज आरम्भ की। स्वीडीश इतिहासकार एरिक गुस्ताव गीजर (Erik Gustav Giezer) ने लोकप्रिय कविताओं को लेकर इतिहास लेखन प्रारम्भ किया।<sup>14</sup> उसने लोकप्रिय संस्कृति को जन इतिहास रचने में महत्वपूर्ण बताया क्योंकि इसे पूरा जन एक आदमी के रूप में गाता है। 'सरकार का इतिहास' रचने की प्रवृत्ति से पृथक होकर 'एरिक गीजर' ने 'जन इतिहास' रचने की दिशा में प्रवृत्त होते हुए 'दि हिस्ट्री ऑफ दि स्वीडिश पीपुल' की रचना की। लोक गीतों एवं लोक संस्कृति को शोध सामग्री के रूप में प्रयोग करते हुए ठीक इसी तरह का शोधकार्य कर चेक इतिहासकार फ्रैंटिस्क पालाकी (Frantisek Pallacky) ने 'हिस्ट्री ऑफ द चेक पीपुल' की रचना की। जुलियस मिकलेट (Jules Michlet) जो स्वयं लोक संस्कृति के संकलन का कार्य करता था, की पुस्तक-हिस्ट्री ऑफ द इंग्लैण्ड-1848 ई० में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक का तीसरा अध्याय अत्यंत प्रसिद्ध हुआ, जो 17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के इंग्लैण्ड को विषय बनाकर लिखा गया था। यह अध्याय लोकप्रिय बैलेडों पर आधारित था, जिसका उसने संकलन किया था।<sup>15</sup>

यूँ भी लोक संस्कृति एक ऐतिहासिक संघटना है और लोक संस्कृति का विज्ञान एक ऐतिहासिक अनुशासन है।<sup>16</sup> प्रसिद्ध सामाजिक इतिहासकार ई० पी० थॉम्पसन ने अपने एक अत्यन्त विद्वत्पूर्ण लेख 'फॉकलोर, एन्थ्रोपोलॉजी एन्ड सोशल हिस्ट्री' में इन तीनों के अन्तः सम्बन्ध एवं अन्तः संवाद की व्याख्या करते हुए यूरोप के इतिहास में इनकी अन्विति के सकारात्मक स्वरूप एवं सीमाएँ स्पष्ट करते हुए भारत में इसकी आवश्यकता पर बल दिया है।<sup>17</sup> आधुनिक भारत के इतिहास के निर्माण एवं पुनर्निर्माण के लिए विभिन्न प्रयास किए गए हैं। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप भारतीय इतिहास लेखन में विभिन्न पद्धतियों, दृष्टिकोण एवं मत विकसित हुए हैं, भारतीय इतिहास लेखन के प्राथमिक प्रयास औपनिवेशिक विद्वानों एवं प्रशासकों लॉर्ड डफरिन, कर्जन और मिन्टो जैसे वायसरायों और भारत सचिव लॉर्ड हैमिल्टन की राजकीय घोषणा पत्रों के रूप में, वी० चिरोल रौलेट (राजद्रोह) समिति की रिपोर्ट, वर्नी लोवेट और मांटैग्यू चेम्सफोर्ड की तर्क-संगत प्रस्तुतियों एवं इसी प्रवृत्ति का विकास करते हुए पर्सिवल स्पीयर ने भारत के इतिहास की रचना की।

आधुनिक भारत के इतिहास के निर्माण एवं पुनर्निर्माण का दूसरा महत्वपूर्ण प्रयास जिस वैचारिक संवर्ग

द्वारा किया गया उसे इतिहास के साहित्य में राष्ट्रवादी इतिहास दर्शन से सम्बोधित किया गया है। इस इतिहास लेखन का विकास बाद के काल में प्रो० विपन चन्द्र ने मुख्य रूप से किया।<sup>18</sup> इस श्रृंखला को अग्रगति देने में के० एन० पनिक्कर, आर० एल० शुक्ल, सुनील सेन का प्रमुख योगदान रहा। इतिहास के इन शोधकर्ताओं ने कई महत्वपूर्ण कार्य किए। इन्होंने औपरिवेशिक भारत के मुख्य अन्तर्विरोध एवं रूपाकार ग्रहण कर रहे राष्ट्रवाद की प्रक्रिया को ध्यान में रखा। मार्क्सवादी इतिहास लेखन में कुछ नया एवं मौलिक कार्य करने वाले प्रो० विपन चन्द्र एवं उनके मत के अन्य इतिहासकारों ने राष्ट्रवाद, साम्प्रदायिकता, उपनिवेशवाद एवं भारत के स्वतंत्रता संग्राम पर कई महत्वपूर्ण कार्य प्रस्तुत किए।

ऐसा नहीं है कि भारतीय इतिहासकारों के मध्य इतिहास के सन्दर्भ में लोक संस्कृति का महत्व न समझा जा रहा हो। प्रो० नीहार रंजन रे<sup>19</sup> जब कहते हैं 'जनता का इतिहास लोक विधाओं एवं लोक धर्म इत्यादि से ही निर्मित किया जा सकता है' तब इतिहासकारों की संवेदनशीलता स्पष्ट होती है। डी० डी० कोशाम्बी<sup>20</sup> ने प्राचीन भारत के सामाजिक और ऐतिहासिक सत्य की खोज के लिए मिथकों का उपयोग कर नया पथ प्रशस्त किया है। आधुनिक भारत के इतिहास के एक प्रमुख विद्वान लेखक प्रोफेसर सुमित सरकार<sup>21</sup> ने अपने अत्यंत नवीन शोधपत्र में भारतीय लेखन की इस विडम्बना को स्वीकार करते हुए लोकप्रिय संस्कृति को इतिहास लेखन की परिधि में लाने पर जोर देते हुए कहा है कि 'मुझे लगता है कि हमारे 19वीं शताब्दी के उल्लेखनीय महानुभावों की विविध सामग्री-धार्मिक पुस्तकें, साहित्यिक कृतियाँ, आत्मकथाएँ, इन्डियन ऑफिस लाइब्रेरी में प्रादेशिक बोली की पुस्तिकाओं के बड़े संकलन का यदि गहराई से अध्ययन किया जाये तो अभी ऐसे खजानों का पता चल सकता है। खासतौर से यदि उन्हें पहले की धार्मिक परम्पराओं और समकालीन लोकप्रिय संस्कृति के तथ्यों के मुकाबले में आमने-सामने लाया जाए।' नीलाद्री भट्टाचार्य ने अपने नवीन शोध पत्र 'लोक-संस्कृति का एजेन्डा' में लोक-संस्कृति का इतिहास लेखन में उपयोग के बारे में विचार करने का प्रयास किया है।

'लोक संस्कृतिवादी' एवं 'इतिहासकारों' के अतिरिक्त भारत में हिन्दी साहित्य के विद्वानों का भी लोक संस्कृति से सम्पर्क रहा है। किन्तु इन्होंने भी या तो मात्र संकलन का कार्य किया या उसके रूप पक्ष को समझने का कार्य।

इतिहास में 'समय और दूरी' का 'काल और घटना' का प्रश्न प्रायः उठाया जाता है। लोक संस्कृति में समय भी है, घटना भी, घटना घटने की प्रक्रिया भी उसमें शामिल लोगों का उच्छ्वास भी (अर्थात् सम्बद्धता का प्रतिशत भी, उस पर प्रतिक्रिया और सुझाव भी। प्रबुद्ध जनों से हमारा आग्रह है कि 'समय' को तिथि न समझें। हमारे नागर बोध के पास समय की अवधारणा से ग्रामीण कृषक लोक में समय की अवधारणा भिन्न है। हमारे नागर बोध के पास 'समय की अवधारणा' आंग्ल माहों एवं तिथियों में विभाजित है तो ग्रामबोध कृषक चेतना के पास अपनी मौलिक समय सारणी है जो मौसम, नक्षत्र रंग इत्यादि से सम्बन्धित है।<sup>22</sup> लोक प्रिय संस्कृति में समय उनके अपने 'माध्यम' में मिल सकता है न कि हमारे 'माध्यम' में। लोक संस्कृति के उपांगों लोक गीतों, लोक कहावतों, मुहावरों में घटना, घटित होने के स्थान, उसमें भाग लेने वाले लोगों का उत्साह, उस घटना की तीव्रता एवं उसके प्रभाव का स्थायित्व इत्यादि प्रश्नों के उत्तर प्रचुर रूप से विद्यमान हैं, शर्त यह कि इन बिखरे चित्रों को कोई जोड़ दे। समय की सूक्ष्म से सूक्ष्मतर परिवर्तनशीलता की गूँज लोक संस्कृति में होती है। वर्तमान में इतिहास लेखन के पास घटना विरोध के लिए तो अनेक स्रोत हैं लेकिन निम्न वर्गीय जनता की प्रतिक्रिया 'लोक

संस्कृति' को छोड़कर और कहाँ मिल सकती है?

इतिहासकार लोकायनों का उपयोग इतिहास के खोये हुए ध्रुवों को जोड़ने के लिए करता है। यह इतिहास के रिक्त स्थानों की पूर्ति भी करता है।<sup>23</sup> भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष जो आधुनिक भारत के इतिहास की एक महत्वपूर्ण संघटना है, उसकी अनेक छवियाँ लोक संस्कृति में मौजूद हैं। इनके अध्ययन की दो प्रक्रियाएँ हो सकती हैं— एक तो अपनी पूर्व निर्मित अवधारणा को लेकर लोक संस्कृति के पास जाया जाए तथा उसकी जन प्रामाणिकता ढूँढ़ी जाये। द्वितीय, लोक संस्कृति के भीतर से ही अवधारणाएँ विकसित की जाएँ तथा उसे पूर्व निर्मित धारणाओं से मिलाया जाए। 1857 ई० के स्वतन्त्रता संग्राम के अध्ययन का प्रयास अनेक शोधपद्धतियों से किया गया है। किन्तु अभी तक हम उसका उर्ध्वाकार रूप ही निर्मित कर पाये हैं। 1857 ई० के स्वतन्त्रता संग्राम का जन इतिहास रचने के लिए ये बड़े सवाल लोक संस्कृति से पूछने पर इनका उत्तर मिल सकता है। 1837 के संग्राम की छवियाँ विभिन्न लोक भाषाओं के लोकायनों में मिलती हैं। अवधी, भोजपुरी, मैथिली के लोक गीतों में इसकी विभिन्न छवियाँ विद्यमान हैं। मुझे तो प्रतीत होता है इन स्रोतों से 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम का समानान्तर एवं वैकल्पिक इतिहास रचने का प्रयास किया जा सकता है। भोजपुरी लोक संस्कृति में 1857 के गदर की व्यापक अनुगूँज विद्यमान है। भोजपुरी क्षेत्र में गदर के महान नायक बाबू कुँवर सिंह से सम्बन्धित अनेक लोक गीत मिलते हैं अनेक कहावतें प्रचलित हैं।

लोक संस्कृति' हमें भारतीय समाज में पुनर्जागरण के प्रश्न को सुलझाने एवं समझाने में सहायता कर सकती है। औपनिवेशिक काल में लोक संस्कृति में नागर संस्कृति के समानान्तर पर उससे थोड़ा भिन्न एवं सर्वथा मौलिक जागरण की छवि लोक गीतों एवं लोक कवियों की रचनाओं में प्राप्त होती है। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के नेतृत्व की कौन-सी छवि जनमानस में बन रही थी? 'जन' से उनका सम्बन्ध किस प्रकार का था और जन का किस तरह का सम्बन्ध उनसे था? इन सारे प्रश्नों का लोक संस्कृति में उत्तर ढूँढ़ने का प्रयास किया जा सकता है। इस प्रकार लोक-संस्कृति में ऐसे अनंत स्थान हैं जिनसे हम भारतीय राष्ट्रवाद के इतिहास की पुनर्रचना कर सकते हैं।

### संदर्भ सूची :

1. डॉरसन एस० रिचर्ड—फॉकलाइफ, एन इन्ट्रोडक्शन (सम्पादित) 1972, शिकागो, यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रेस।
2. आशीष नन्दी ने अपनी पुस्तक 'द इन्टिमेट ऐनेमी—लॉस एन्ड रिकवरी ऑफ सेल्फ अन्डर कॉलोनियलिज्म' 1983 (ओ०यू०पी०) में अत्यंत विस्तार से 'इन्टेलेक्चुअल' एवं 'विजडम' की निर्मिति बतायी है।
3. इस सन्दर्भ में अनेक शोध कार्य हुए हैं। किन्तु अभी हाल ही में सॉल्टर्न खण्ड 7 (ओ० यू० पी०—1992) में संकलित ट्रान्सरेजर का अत्यंत प्रभावोत्पादक शोधकार्य उल्लेखनीय है।
4. नीहार रंजन रे—बंगालीर इतिहास, 1966 कलकत्ता, लेखक समवाय समिति, पृष्ठ 31
5. डी० डी० कौशाम्बी, मिय एण्ड रियलिटि, 1962, पॉपुलर प्रकाशन, बॉम्बे।
6. जे० बी० भट्टाचार्या, हिस्ट्री एण्ड फॉकलोर इन द कॉण्टेक्स्ट ऑफ काछार वैलि, सौमेन सेन द्वारा सम्पादित 'फॉकलोर इन नार्थ इस्ट इण्डिया' नई दिल्ली, 1985, कॉस्मोस।
7. यूनेस्को रिपोर्ट एनेक्सर 1987

8. पीटर बर्क, पॉपुलर कल्चर इन यरली मेडिवल यूरोप, पृष्ठ 9।
9. पीटर बर्क, पॉपुलर कल्चर इन यरली मेडिवल यूरोप, पृष्ठ 9।
10. पीटर बर्क, पॉपुलर कल्चर इन यरली मेडिवल यूरोप, पृष्ठ 9।
11. श्री जी० ए० प्रियर्सन का इन्डियन ऐंटिक्वेरी, इन्हीं प्रवृत्तियों के प्रमाण हैं।
12. पं० राम नरेश त्रिपाठी का 'भोजपुरी लोक गीत' तथा ग्राम साहित्य- 'जनपद पत्रिका', अक्टूबर, 1992, इसी प्रवृत्ति की सूचक है।
13. कृष्णदेव उपाध्याय का लोक संस्कृति पर किया गया कार्य (क) लोक साहित्य की भूमिका-साहित्य भवन 1957। (ख) भोजपुरी लोक संस्कृति-हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, भोजपुरी लोक संगीत-लोक संस्कृति शोध संस्थान, वाराणसी।
14. पीटर बर्क, पॉपुलर कल्चर इन यरली मेडिवल यूरोप, पृ० 15 पृ० 22।
15. पीटर बर्क, पॉपुलर कल्चर इन यरली मेडिवल यूरोप, पृ० 15 पृ० 22।
16. ब्लादिमिर प्रोप, थ्योरी एण्ड हिस्ट्री ऑफ फॉकलोर (अरिदुआ वाई० और रिचर्ड पी० मार्टिन द्वारा अनुदित और अनातोली लिबर मैन द्वारा सम्पादित) मैन्चेस्टर, 1984 मैन्चेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ 31।
17. ई० पी० थॉम्पसन फॉकलोर, एन्थ्रोपोलॉजी एन्ड सोशल हिस्ट्री (इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू, वाल्यूम द्वितीय, नम्बर-2 जनवरी 1977)।
18. विपन चन्द्र का अध्ययन द राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ इकॉनॉमिक नेशनलिज्म इन इंडिया, (पी० पी० एच०-1968)।
19. नीहार रंजन रे 'बगलीर इतिहासेर' बंगला भाषा में कलकत्ता, 1966 संस्करण, लेखक समवाय समिति, पृष्ठ-31
20. देखें, डी० डी० कोशाम्बी का अध्ययन मिथ एन्ड रियलिटी-बॉम्बे, 1962, पॉपुलर प्रकाशन।
21. सुमित सरकार, सामाजिक इतिहास : स्थिति और सम्भावनाएँ, साँचा, मई, 1988। नीताड़ी भट्टाचार्या- लोक संस्कृति का एजेंडा 'सेन्टर फार हिस्टोरिकल स्टडीज' जे० एन० यू० द्वारा आयोजित नव इतिहास पर हुए सेमिनार में प्रस्तुत शोध पत्र।
22. ग्रामीण लोक में क्लासिकी समय की अवधारणा पौराणिक है। जिसके अनुसार-भगवान विष्णु को काल स्वरूप माना गया है। 15 निमेष =1 काष्ठा, 30 काष्ठा की एक कला, तीस कला का एक मुहूर्त, तीस मुहूर्त, का एक दिन रात उतने ही दिन-रात को दो पक्ष युक्त एक मास होता है। 6 महीने का एक अयन। दक्षिणायन और उत्तरायन दो अयन मिलकर एक वर्ष होता है। देवताओं का 12 हजार वर्षों का सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग चार युग होता है।  
लोक में इस पौराणिक समय की अवधारणा का आवश्यकतानुसार उपयोग करते हुए सामान्य लोक ने चैत, माघ, फाल्गुन, जैसे मास-हथिया, भद्रा, स्वाति नक्षत्र निर्मित कर लिए हैं। मौखिक साक्षात्कारों से यह भी स्थापित होता है कि निरक्षर कृषक जनता घटनाओं से, अप्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष तक पहुँचते हुए समय को पकड़ती है। यहाँ समय की सीधी अवधारणा प्राप्त हो जाने की सुविधा नहीं है।
23. डॉ० सौमेन सेन, इन्टर डिस्पलिनरी एप्रोच टू फॉकलोर स्टडीज, ने हु० जर्नल ऑफ सोशल साइन्सेज एन्ड ह्यूमनिटीज (जनवरी-मार्च, 1991)



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 177-183

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध आयाम

जयप्रकाश रौशन, शोधार्थी,

डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक,

हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली (बिहार)

### सार :

यह शोध राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में निहित राष्ट्रीय चेतना के विविध आयामों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। दिनकर हिंदी साहित्य के उन प्रमुख कवियों में सम्मिलित हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज में राष्ट्रवाद, स्वाभिमान और जन-जागरण की भावना को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया। उनका काव्य केवल साहित्यिक सौंदर्य तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें राष्ट्रीय अस्मिता, स्वतंत्रता संघर्ष, सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का व्यापक दृष्टिकोण भी समाहित है।

दिनकर की प्रमुख कृतियों 'रश्मिरथी, हुंकार, कुरुक्षेत्र आदि का विश्लेषण करते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि उनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना किन-किन रूपों में प्रकट होती है। दिनकर ने अपने काव्य में जहाँ एक ओर स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा और विदेशी शासन के प्रति विरोध की भावना को व्यक्त किया, वहीं दूसरी ओर उन्होंने सामाजिक असमानता, शोषण और अन्याय के विरुद्ध भी आवाज उठाई। उनके काव्य में वीर रस के साथ-साथ ओज, उत्साह और क्रांतिकारी चेतना का समन्वय दिखाई देता है, जो जनमानस को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

शोध यह दर्शाता है कि दिनकर की राष्ट्रीय चेतना केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सांस्कृतिक गौरव, ऐतिहासिक परंपराओं और मानवीय मूल्यों के संरक्षण पर भी बल देती है। उन्होंने भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों को पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया और युवाओं में राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध जगाने का कार्य किया।

यह निष्कर्ष निकलता है कि दिनकर का काव्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना का सशक्त दर्पण है, जो आज भी प्रासंगिक है और समाज को प्रेरित करता है। उनके विचार न केवल स्वतंत्रता काल में महत्वपूर्ण थे, बल्कि वर्तमान समय में भी राष्ट्र निर्माण और सामाजिक समरसता के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं।

**कुंजी शब्द :** राष्ट्रीय चेतना, रामधारी सिंह दिनकर, राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक पुनर्जागरण, सामाजिक न्याय, वीर रस, स्वतंत्रता संग्राम।

### प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य के आधुनिक युग में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और

गौरवपूर्ण है। वे उन साहित्यकारों में अग्रणी हैं जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना, स्वाभिमान और जन-जागरण की भावना को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया। दिनकर का साहित्य केवल काव्यात्मक सौंदर्य तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें युगीन यथार्थ, सामाजिक संघर्ष, सांस्कृतिक गौरव और राष्ट्रीय अस्मिता का गहन समन्वय दिखाई देता है। उनका काव्य उस काल का प्रतिनिधित्व करता है जब भारत अंग्रेजी शासन के अधीन था और स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए व्यापक जनांदोलन चल रहे थे। इस संदर्भ में दिनकर की रचनाएँ केवल साहित्यिक कृतियाँ नहीं, बल्कि राष्ट्रीय आंदोलन की वैचारिक और भावनात्मक ऊर्जा का स्रोत भी थीं।

दिनकर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज राजनीतिक दासता के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक विषमताओं से भी जूझ रहा था। एक ओर विदेशी शासन का दमनकारी प्रभाव था, तो दूसरी ओर समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक हीनता की भावना भी विद्यमान थी। ऐसे परिवेश में दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से न केवल स्वतंत्रता की आकांक्षा को स्वर दिया, बल्कि समाज में व्याप्त अन्याय और असमानता के विरुद्ध भी अपनी सशक्त अभिव्यक्ति प्रस्तुत की। उनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना का स्वर केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामाजिक न्याय, समानता और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की व्यापक अवधारणा को समाहित करता है।

राष्ट्रीय चेतना का अर्थ केवल राष्ट्र के प्रति प्रेम या देशभक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक भावना है, जिसमें व्यक्ति अपने देश की स्वतंत्रता, एकता, अखंडता और सांस्कृतिक पहचान के प्रति सजग और प्रतिबद्ध होता है। दिनकर ने इस व्यापक अर्थ में राष्ट्रीय चेतना को अपने काव्य का केंद्रीय तत्व बनाया। उनकी कविताएँ केवल प्रेरणात्मक नहीं हैं, बल्कि उनमें एक सशक्त वैचारिक आधार भी निहित है, जो पाठकों को न केवल भावनात्मक रूप से प्रभावित करता है, बल्कि उन्हें विचार करने और कार्य करने के लिए भी प्रेरित करता है।

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न आयाम स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। इनमें प्रमुख रूप से स्वतंत्रता संग्राम की चेतना, सांस्कृतिक गौरव, सामाजिक न्याय, क्रांतिकारी भावना और मानवतावादी दृष्टिकोण सम्मिलित हैं। हुंकार जैसी कृतियों में उन्होंने अंग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह और संघर्ष की भावना को अत्यंत ओजपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी पंक्तियाँ जनमानस में ऊर्जा और उत्साह का संचार करती हैं तथा लोगों को अन्याय के विरुद्ध खड़े होने के लिए प्रेरित करती हैं। इसी प्रकार कुरुक्षेत्र में उन्होंने युद्ध और शांति के प्रश्नों पर गहन चिंतन करते हुए मानवता और नैतिकता के महत्व को रेखांकित किया है।

दिनकर का काव्य सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी एक सशक्त माध्यम है। उन्होंने भारतीय इतिहास, परंपराओं और मिथकों को अपने काव्य में इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि वे आधुनिक संदर्भ में भी प्रासंगिक बन जाते हैं। रश्मिरथी में कर्ण के चरित्र के माध्यम से उन्होंने त्याग, पराक्रम और आत्मसम्मान जैसे मूल्यों को उजागर किया है। यह केवल एक पौराणिक कथा का पुनर्पाठ नहीं है, बल्कि इसके माध्यम से दिनकर ने समाज में व्याप्त अन्याय और असमानता के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है। इस प्रकार, उनका काव्य अतीत और वर्तमान के बीच एक सेतु का कार्य करता है।

दिनकर के काव्य में सामाजिक न्याय की भावना भी अत्यंत प्रबल है। उन्होंने समाज के वंचित और

शोषित वर्गों की पीड़ा को समझते हुए उनके अधिकारों के लिए आवाज उठाई। उनके काव्य में यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि वे एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं, जहाँ सभी व्यक्तियों को समान अवसर और सम्मान प्राप्त हो। उनका राष्ट्रवाद समावेशी है, जिसमें जाति, वर्ग और लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं है। इस दृष्टि से दिनकर का काव्य केवल राष्ट्र प्रेम का ही नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता और न्याय का भी संदेश देता है।

दिनकर की भाषा और शैली भी उनकी राष्ट्रीय चेतना को प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उनकी भाषा सरल, प्रभावशाली और ओजपूर्ण है, जो सीधे पाठकों के हृदय को स्पर्श करती है। उन्होंने अपने काव्य में वीर रस का अत्यंत प्रभावी उपयोग किया है, जो पाठकों में उत्साह, साहस और संघर्ष की भावना उत्पन्न करता है। उनके शब्दों में एक प्रकार की ऊर्जा और शक्ति होती है, जो पाठकों को निष्क्रियता से बाहर निकालकर सक्रियता की ओर प्रेरित करती है।

यह भी उल्लेखनीय है कि दिनकर की राष्ट्रीय चेतना केवल अतीत के गौरवगान तक सीमित नहीं है, बल्कि वह वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों को भी ध्यान में रखती है। उन्होंने अपने काव्य में यह स्पष्ट किया है कि राष्ट्र की वास्तविक प्रगति केवल राजनीतिक स्वतंत्रता से नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक समानता से भी जुड़ी हुई है। उन्होंने युवाओं को राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित किया और उन्हें अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनने का संदेश दिया।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य दिनकर के काव्य में निहित राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न आयामों का समग्र और व्यवस्थित विश्लेषण करना है। इसके अंतर्गत यह अध्ययन किया जाएगा कि दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से राष्ट्रवाद को किस प्रकार अभिव्यक्त किया, उसमें सामाजिक और सांस्कृतिक तत्वों का क्या योगदान है, तथा वह आज के संदर्भ में कितना प्रासंगिक है। यह शोध इस तथ्य को भी स्पष्ट करने का प्रयास करेगा कि दिनकर का काव्य केवल एक साहित्यिक उपलब्धि नहीं है, बल्कि वह भारतीय समाज के विकास और परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण साधन भी है।

वर्तमान समय में, जब वैश्वीकरण और आधुनिकता के प्रभाव से सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य निरंतर परिवर्तित हो रहे हैं, दिनकर का काव्य हमें अपनी जड़ों से जुड़े रहने और अपने राष्ट्र के प्रति जिम्मेदार बनने की प्रेरणा देता है। उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उनके समय में थे। इस प्रकार, दिनकर का काव्य न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी और प्रेरणादायक है।

यह कहा जा सकता है कि रामधारी सिंह दिनकर का काव्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना का सशक्त और जीवंत प्रतीक है। उनकी रचनाएँ हमें यह सिखाती हैं कि सच्चा राष्ट्रवाद केवल भावनाओं का विषय नहीं है, बल्कि यह कर्तव्य, जिम्मेदारी और समर्पण की भावना से जुड़ा हुआ है। उनके काव्य का अध्ययन हमें न केवल साहित्यिक ज्ञान प्रदान करता है, बल्कि हमें एक जागरूक और उत्तरदायी नागरिक बनने के लिए भी प्रेरित करता है। इस प्रकार, दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध आयामों का अध्ययन न केवल शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह समाज के समग्र विकास के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

## शोध के उद्देश्य :

1. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करना।
2. उनके काव्य में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक तत्वों के माध्यम से राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति का अध्ययन करना।
3. दिनकर की राष्ट्रीय चेतना की वर्तमान समय में प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

## साहित्य समीक्षा :

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विषय पर विभिन्न विद्वानों ने महत्वपूर्ण शोध कार्य किए हैं, जो इस अध्ययन के लिए सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं। इन अध्ययनों में दिनकर की काव्य-दृष्टि, राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक चेतना तथा सामाजिक विचारों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

1. **रामकुमार शर्मा (2014)** ने अपने शोध "दिनकर के काव्य में राष्ट्रवाद" में यह प्रतिपादित किया कि दिनकर का राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें सांस्कृतिक गौरव और ऐतिहासिक चेतना का भी समावेश है। उन्होंने हुंकार और कुरुक्षेत्र जैसी कृतियों का विश्लेषण करते हुए यह दर्शाया कि दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से जनमानस में राष्ट्रीय जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास किया।

2. **सुरेशचंद्र वर्मा (2016)** ने "रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में सामाजिक चेतना" शीर्षक शोध में यह स्पष्ट किया कि दिनकर का काव्य सामाजिक न्याय और समानता की भावना से ओत-प्रोत है। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि दिनकर ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में व्याप्त असमानताओं, शोषण और अन्याय के विरुद्ध सशक्त आवाज उठाई, जो उनके राष्ट्रवाद को व्यापक और समावेशी बनाता है।

3. **अशोक कुमार (2018)** ने "दिनकर की काव्य दृष्टि और सांस्कृतिक पुनर्जागरण" में यह बताया कि दिनकर ने भारतीय संस्कृति, परंपराओं और ऐतिहासिक धरोहर को अपने काव्य में पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया। रश्मि रथी के विश्लेषण के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध किया कि दिनकर का काव्य अतीत के गौरव और वर्तमान की चुनौतियों के बीच संतुलन स्थापित करता है।

4. **राजेंद्र सिंह (2020)** ने "दिनकर के काव्य में वीर रस और राष्ट्रीय भावना" में यह प्रतिपादित किया कि दिनकर के काव्य में वीर रस का प्रभाव राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने का प्रमुख साधन है। उनके अनुसार दिनकर की भाषा और शैली पाठकों में उत्साह, साहस और संघर्ष की भावना उत्पन्न करती है, जो राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है।

5. **नसीम अहमद (2022)** ने "दिनकर और समकालीन राष्ट्रीय चेतना" शीर्षक शोध में यह विश्लेषण किया कि दिनकर के विचार आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि दिनकर का काव्य केवल स्वतंत्रता काल तक सीमित नहीं है, बल्कि वह वर्तमान समाज में भी राष्ट्रवाद और सामाजिक समरसता के लिए प्रेरणास्रोत है।

## शोध-अंतर :

उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि दिनकर के काव्य में राष्ट्रवाद, सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक तत्वों का अलग-अलग विश्लेषण किया गया है, किंतु एक समग्र अध्ययन, जिसमें राष्ट्रीय चेतना के विविध

आयामों को एकीकृत रूप में प्रस्तुत किया जाए, अपेक्षित है। प्रस्तुत शोध इसी शोध-अंतर को पूर्ण करने का प्रयास करता है।

### **शोध पद्धति :**

यह शोध गुणात्मक प्रकृति का है, जिसमें साहित्यिक विश्लेषण की पद्धति का उपयोग किया गया है। अध्ययन के लिए मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों का सहारा लिया गया है, जिनमें रामधारी सिंह दिनकर की प्रमुख कृतियाँ जैसे रश्मि रथी, हुंकार, कुरुक्षेत्र आदि तथा संबंधित आलोचनात्मक पुस्तकें, शोध लेख और जर्नल शामिल हैं।

इस शोध में विषय-वस्तु विश्लेषण के माध्यम से दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न आयामों जैसे राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक चेतना, सामाजिक न्याय और क्रांतिकारी भावना का अध्ययन किया गया है। साथ ही, व्याख्यात्मक दृष्टिकोण अपनाकर यह समझने का प्रयास किया गया है कि दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से राष्ट्र निर्माण की अवधारणा को किस प्रकार प्रस्तुत किया है।

इसके अतिरिक्त, ऐतिहासिक पद्धति का उपयोग करते हुए दिनकर के काव्य को उनके युगीन सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ में समझा गया है। साथ ही, तुलनात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से उनके विचारों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता का मूल्यांकन किया गया है।

इस प्रकार, विभिन्न पद्धतियों के समन्वय से यह शोध दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना का समग्र और व्यवस्थित विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

### **परिणाम :**

यह शोध के अंतर्गत रामधारी सिंह दिनकर के काव्य का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनके साहित्य में राष्ट्रीय चेतना एक बहुआयामी और सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुई है। दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से भारतीय समाज में राष्ट्रवाद की भावना को जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। उनकी रचनाओं में स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा, विदेशी शासन के प्रति विरोध तथा जनमानस को संगठित करने की चेतना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। हुंकार जैसे काव्य संग्रह में उन्होंने क्रांतिकारी स्वर अपनाते हुए जनता को अन्याय और दमन के विरुद्ध उठ खड़े होने के लिए प्रेरित किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उनका काव्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि राष्ट्रीय आंदोलन का एक सशक्त माध्यम भी था।

अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि दिनकर की राष्ट्रीय चेतना केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें सामाजिक न्याय और समानता का व्यापक दृष्टिकोण भी समाहित है। उन्होंने अपने काव्य में समाज के शोषित, वंचित और उपेक्षित वर्गों की पीड़ा को स्वर दिया तथा एक समतामूलक समाज की स्थापना पर बल दिया। रश्मि रथी में कर्ण के चरित्र के माध्यम से उन्होंने सामाजिक असमानता और जातिगत भेदभाव के विरुद्ध अपनी संवेदना प्रकट की, जो उनके राष्ट्रवाद को अधिक मानवीय और समावेशी बनाता है।

इसके अतिरिक्त, दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक चेतना का भी विशेष स्थान है। उन्होंने भारतीय इतिहास, परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों को अपने साहित्य में पुनर्जीवित करते हुए राष्ट्रीय गौरव की भावना को सुदृढ़ किया। कुरुक्षेत्र में उन्होंने धर्म, नैतिकता और मानवता के प्रश्नों पर विचार करते हुए यह दर्शाया कि सच्चा राष्ट्रवाद केवल युद्ध या शक्ति प्रदर्शन में नहीं, बल्कि नैतिक मूल्यों और शांति की स्थापना में निहित है। इस प्रकार, उनका काव्य अतीत की सांस्कृतिक विरासत और वर्तमान की चुनौतियों के बीच संतुलन स्थापित करता है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि दिनकर की भाषा और शैली उनकी राष्ट्रीय चेतना को प्रभावी बनाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उनके काव्य में ओज, वीर रस और उत्साह का समन्वय है, जो पाठकों में साहस, आत्मविश्वास और संघर्ष की भावना उत्पन्न करता है। उनकी अभिव्यक्ति शैली सरल होते हुए भी अत्यंत प्रभावशाली है, जिससे उनके विचार सीधे जनमानस तक पहुँचते हैं और व्यापक प्रभाव छोड़ते हैं।

यह निष्कर्ष सामने आता है कि दिनकर का काव्य आज भी अत्यंत प्रासंगिक है। वर्तमान समय में, जब समाज विभिन्न प्रकार की चुनौतियों जैसे सामाजिक असमानता, सांस्कृतिक विघटन और राष्ट्रीय एकता के संकट का सामना कर रहा है, दिनकर के विचार और उनका काव्य हमें एक सशक्त दिशा प्रदान करते हैं। उनका साहित्य यह संदेश देता है कि सच्ची राष्ट्रीय चेतना केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों पर आधारित होती है। इस प्रकार, दिनकर का काव्य न केवल अपने समय का प्रतिनिधित्व करता है, बल्कि आज के समाज के लिए भी एक प्रेरणास्रोत और मार्गदर्शक के रूप में स्थापित होता है।

### **निष्कर्ष :**

शोध के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर का काव्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना का एक सशक्त और व्यापक प्रतिपादक है। उनके साहित्य में राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि उसमें सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक गौरव, नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं का समन्वय भी दिखाई देता है। दिनकर ने अपने काव्य के माध्यम से उस युगीन समाज की परिस्थितियों को अभिव्यक्त किया, जिसमें एक ओर स्वतंत्रता संग्राम की तीव्रता थी, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानता और शोषण की समस्याएँ भी विद्यमान थीं।

दिनकर की विशेषता यह है कि उन्होंने राष्ट्रीय चेतना को एक व्यापक और समावेशी दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने काव्य में समाज के सभी वर्गों विशेषकर शोषित और वंचित वर्ग की पीड़ा को स्वर दिया और एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना की, जहाँ समानता, न्याय और सम्मान की स्थापना हो। रश्मिरथी और कुरुक्षेत्र जैसी कृतियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि उनका राष्ट्रवाद केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि विचारशील और मूल्यपरक है।

इसके अतिरिक्त, दिनकर ने भारतीय संस्कृति और परंपराओं को अपने काव्य में पुनर्जीवित करते हुए राष्ट्रीय गौरव की भावना को सुदृढ़ किया। उन्होंने अतीत के आदर्शों को वर्तमान के संदर्भ में प्रस्तुत कर समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया। उनकी भाषा, शैली और ओजपूर्ण अभिव्यक्ति ने जनमानस को प्रभावित किया और उन्हें राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनाया।

निष्कर्ष के तहत यह कहा जा सकता है कि दिनकर का काव्य न केवल अपने समय में राष्ट्रीय जागरण का माध्यम था, बल्कि आज भी उसकी प्रासंगिकता बनी हुई है। वर्तमान समाज में भी उनके विचार सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक एकता और राष्ट्र निर्माण के लिए प्रेरणास्रोत के रूप में कार्य करते हैं। इस प्रकार, दिनकर का काव्य भारतीय राष्ट्रीय चेतना का जीवंत प्रतीक है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए भी मार्गदर्शन प्रदान करता रहेगा।

### **सुझाव :**

1. **राष्ट्रीय चेतना के प्रसार हेतु साहित्य का उपयोग :**

दिनकर के काव्य को शिक्षा प्रणाली में अधिक व्यापक रूप से शामिल किया जाना चाहिए, ताकि विद्यार्थियों में राष्ट्रप्रेम और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना विकसित हो सके।

**2. युवा वर्ग में जागरूकता का विकास :**

दिनकर के विचारों के माध्यम से युवाओं को राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

**3. सामाजिक समानता को बढ़ावा देना :**

दिनकर के काव्य में निहित सामाजिक न्याय और समानता के संदेश को अपनाकर समाज में भेदभाव और असमानता को कम करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

**4. सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण :**

भारतीय संस्कृति और परंपराओं के प्रति सम्मान और गौरव की भावना को सुदृढ़ करने के लिए दिनकर के साहित्य का अध्ययन और प्रचार-प्रसार आवश्यक है।

**5. राष्ट्रीय एकता और समरसता को सुदृढ़ करना :**

दिनकर के काव्य में व्यक्त एकता और समरसता के विचारों को समाज में लागू कर विभिन्न वर्गों और समुदायों के बीच सहयोग और सद्भाव को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**

1. शर्मा, रामकुमार. (2014). दिनकर के काव्य में राष्ट्रवाद. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
2. वर्मा, सुरेशचंद्र. (2016). रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में सामाजिक चेतना. वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
3. कुमार, अशोक. (2018). दिनकर की काव्य दृष्टि और सांस्कृतिक पुनर्जागरण. पटना : हिंदी ग्रंथ अकादमी।
4. सिंह, राजेंद्र. (2020). दिनकर के काव्य में वीर रस और राष्ट्रीय भावना. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
5. अहमद, नसीम. (2022). दिनकर और समकालीन राष्ट्रीय चेतना. लखनऊ : साहित्य भवन।
6. मिश्रा, देवीप्रसाद. (2015). दिनकर : व्यक्तित्व और कृतित्व. नई दिल्ली : साहित्य अकादमी।
7. तिवारी, कृष्णदेव. (2017). आधुनिक हिंदी कविता और राष्ट्रवाद. भोपाल : मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
8. यादव, रामविलास. (2013). दिनकर का साहित्य और समाज. पटना : बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
9. चौधरी, महेंद्र. (2019). दिनकर के काव्य में सांस्कृतिक चेतना. जयपुर : पंचशील प्रकाशन।
10. गुप्ता, सुरेश. (2012). हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय भावना. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
11. त्रिपाठी, अश्विनी. (2021). दिनकर और भारतीय संस्कृति. वाराणसी : भारतीय प्रकाशन।
12. श्रीवास्तव, विनोद. (2016). आधुनिक हिंदी काव्य का विकास. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
13. पांडेय, नरेश. (2018). दिनकर के काव्य का आलोचनात्मक अध्ययन. लखनऊ : उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
14. द्विवेदी, हरिशंकर. (2014). हिंदी साहित्य और राष्ट्रीयता. नई दिल्ली : ज्ञानपीठ प्रकाशन।
15. पाठक, शिवकुमार. (2020). नारी, समाज और राष्ट्रवाद हिंदी साहित्य में. पटना : साहित्य संगम प्रकाशन।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 184-190

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# प्रेमचंद युगीन समाज में नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार : साहित्यिक विश्लेषण

मनोज कुमार यादव, शोधार्थी,

डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक, हिन्दी विभाग

हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली (बिहार)

**सार :**

यह शोध पत्र प्रेमचंद के साहित्य में नारी की स्थिति, उनके उत्पीड़न तथा सामाजिक सुधार की आवश्यकता का विश्लेषण करता है। प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में उस समय के भारतीय समाज की यथार्थ स्थिति को अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाओं में नारी को एक शोषित, उपेक्षित तथा सामाजिक बंधनों में जकड़ी हुई इकाई के रूप में दर्शाया गया है। निर्मला, सेवासदन तथा गोदान जैसे उपन्यासों में बाल-विवाह, दहेज प्रथा, विधवा-जीवन और आर्थिक निर्भरता जैसी समस्याएँ स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती हैं।

प्रेमचंद ने नारी उत्पीड़न के विभिन्न रूपों को उजागर करते हुए समाज में सुधार की आवश्यकता पर बल दिया है। उनके साहित्य में नारी केवल पीड़ित ही नहीं, बल्कि संघर्षशील और आत्मसम्मान से परिपूर्ण भी दिखाई देती है। वे शिक्षा, समानता और स्वतंत्रता के माध्यम से नारी सशक्तिकरण का संदेश देते हैं।

यह शोध इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि प्रेमचंद का साहित्य केवल अपने समय का चित्रण नहीं है, बल्कि आज के समाज में भी उसकी प्रासंगिकता बनी हुई है। वर्तमान संदर्भ में भी नारी से जुड़ी कई समस्याएँ विद्यमान हैं, जिससे प्रेमचंद की विचारधारा और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। अतः यह शोध निष्कर्ष निकालता है कि प्रेमचंद का साहित्य सामाजिक परिवर्तन और नारी मुक्ति के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक है।

**कुंजी शब्द :** नारी उत्पीड़न, सामाजिक सुधार, प्रेमचंद साहित्य, नारी सशक्तिकरण, पितृसत्तात्मक समाज, दहेज प्रथा, स्त्री स्वतंत्रता।

**प्रस्तावना :**

भारतीय साहित्य में समाज का यथार्थ चित्रण करने वाले रचनाकारों में मुंशी प्रेमचंद का नाम अत्यंत सम्मान के साथ लिया जाता है। प्रेमचंद ने अपने साहित्य के माध्यम से न केवल सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण किया, बल्कि विशेष रूप से नारी जीवन की जटिलताओं, उनके संघर्षों और उन पर हो रहे अत्याचारों को भी अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया। उनका युग भारतीय समाज के

संक्रमण का काल था, जहाँ एक ओर परंपरागत मान्यताएँ और रूढ़ियाँ गहराई से जमी हुई थीं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक सुधार और जागरूकता की नई लहर भी उठ रही थी। इस संदर्भ में प्रेमचंद का साहित्य नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार के बीच एक सेतु के रूप में कार्य करता है।

प्रेमचंद युग, जो लगभग उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध से लेकर बीसवीं सदी के प्रारंभ तक फैला हुआ है, भारतीय समाज के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कालखंड था। इस समय भारत ब्रिटिश उपनिवेशवाद के अधीन था, जिसके कारण सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर पर अनेक प्रकार के परिवर्तन हो रहे थे। एक ओर आधुनिक शिक्षा का प्रसार हो रहा था, वहीं दूसरी ओर समाज में अनेक कुरीतियाँ जैसे बाल विवाह, दहेज प्रथा, सती प्रथा (हालाँकि इसका औपचारिक अंत हो चुका था, पर मानसिकता शेष थी), पर्दा प्रथा और स्त्री शिक्षा का अभाव विद्यमान थे। इन सभी कुरीतियों का सबसे अधिक प्रभाव महिलाओं पर पड़ता था, जिससे उनका जीवन अत्यंत कष्टदायक और सीमित हो जाता था।

नारी की स्थिति उस समय समाज में अत्यंत दयनीय थी। उन्हें परिवार और समाज दोनों में समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। स्त्रियाँ प्रायः पुरुषों पर आश्रित रहती थीं और उन्हें अपने जीवन के निर्णय लेने की स्वतंत्रता नहीं होती थी। विवाह को ही उनके जीवन का अंतिम लक्ष्य माना जाता था, और इसके अतिरिक्त उनके अस्तित्व को विशेष महत्व नहीं दिया जाता था। बाल विवाह के कारण लड़कियाँ बहुत कम उम्र में ही वैवाहिक जीवन में प्रवेश कर जाती थीं, जिससे उनके शारीरिक और मानसिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता था। दहेज प्रथा के कारण अनेक परिवार आर्थिक संकट में पड़ जाते थे, और कई बार इसका परिणाम स्त्रियों के उत्पीड़न के रूप में सामने आता था।

ऐसे सामाजिक परिदृश्य में प्रेमचंद ने अपने साहित्य के माध्यम से नारी जीवन की वास्तविकताओं को उजागर किया। उन्होंने नारी को केवल एक कमजोर और असहाय पात्र के रूप में नहीं, बल्कि एक संवेदनशील, संघर्षशील और आत्मसम्मान से युक्त व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया। उनके उपन्यास और कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि वे नारी की पीड़ा को गहराई से समझते थे और उसके समाधान के प्रति गंभीर थे। निर्मला में दहेज प्रथा और बाल विवाह की त्रासदी को अत्यंत मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है, जहाँ एक युवती को उम्रदराज पुरुष से विवाह करने के लिए मजबूर किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उसका जीवन दुखों से भर जाता है। सेवासदन में वेश्यावृत्ति और स्त्री की सामाजिक स्थिति का चित्रण करते हुए यह दिखाया गया है कि कैसे परिस्थितियाँ एक स्त्री को इस दलदल में धकेल देती हैं। वहीं गोदान में धनिया जैसे पात्र के माध्यम से ग्रामीण नारी की शक्ति, संघर्ष और आत्मसम्मान को दर्शाया गया है।

प्रेमचंद का साहित्य केवल नारी उत्पीड़न का चित्रण ही नहीं करता, बल्कि सामाजिक सुधार की आवश्यकता को भी रेखांकित करता है। वे मानते थे कि समाज की प्रगति तभी संभव है जब महिलाओं को समान अधिकार और अवसर प्रदान किए जाएँ। उनके साहित्य में शिक्षा को नारी सशक्तिकरण का सबसे महत्वपूर्ण साधन बताया गया है। वे इस बात पर बल देते हैं कि यदि स्त्रियाँ शिक्षित होंगी, तो वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होंगी और समाज में अपनी उचित भूमिका निभा सकेंगी। इसके अतिरिक्त, उन्होंने विवाह संबंधी कुरीतियों, दहेज प्रथा और स्त्री के प्रति भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण का विरोध किया और समाज को इनसे मुक्त होने का संदेश दिया।

इस शोध का उद्देश्य प्रेमचंद के साहित्य में नारी उत्पीड़न के विभिन्न रूपों का विश्लेषण करना तथा यह समझना है कि उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से सामाजिक सुधार की दिशा में क्या योगदान दिया। यह अध्ययन इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि प्रेमचंद की नारी संबंधी दृष्टि कितनी प्रगतिशील थी और किस प्रकार वह आज भी प्रासंगिक बनी हुई है। वर्तमान समय में, यद्यपि समाज में काफी परिवर्तन आया है और महिलाओं को पहले की अपेक्षा अधिक अधिकार और अवसर प्राप्त हुए हैं, फिर भी कई समस्याएँ जैसे लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा और आर्थिक असमानता आज भी विद्यमान हैं। इस दृष्टि से प्रेमचंद का साहित्य आज भी हमें प्रेरणा देता है और सामाजिक सुधार की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

प्रेमचंद की विशेषता यह थी कि उन्होंने अपने साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन नहीं बनाया, बल्कि उसे समाज के उत्थान का माध्यम बनाया। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज के कमजोर और उपेक्षित वर्गों की आवाज को सामने लाने का प्रयास किया। नारी के संदर्भ में भी उन्होंने यही दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने स्त्रियों के दुख-दर्द को न केवल चित्रित किया, बल्कि उनके आत्मबल, संघर्ष और संभावनाओं को भी उजागर किया। उनके साहित्य में नारी केवल सहानुभूति की पात्र नहीं है, बल्कि वह परिवर्तन की वाहक भी है।

यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत है। यह शोध इसी दिशा में एक प्रयास है, जिसमें प्रेमचंद के साहित्य के माध्यम से उस समय के समाज की वास्तविकताओं को समझने और उनसे मिलने वाले संदेशों को वर्तमान संदर्भ में परखने का प्रयास किया गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने नारी के प्रति समाज की सोच को बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उस समय थे।

इस प्रकार, प्रस्तुत शोध न केवल प्रेमचंद के साहित्य में नारी की स्थिति का विश्लेषण करता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि साहित्य समाज में परिवर्तन लाने का एक सशक्त माध्यम हो सकता है। प्रेमचंद की रचनाएँ इस सत्य का जीवंत प्रमाण हैं और वे आज भी हमें एक न्यायपूर्ण, समान और संवेदनशील समाज की स्थापना के लिए प्रेरित करती हैं।

## उद्देश्य :

### 1. नारी उत्पीड़न के स्वरूपों का विश्लेषण करना :

प्रेमचंद के साहित्य में दर्शाए गए नारी उत्पीड़न के विभिन्न रूपों जैसे दहेज प्रथा, बाल विवाह, आर्थिक निर्भरता और सामाजिक भेदभाव का अध्ययन करना है। इससे यह समझने में मदद मिलती है कि उस समय समाज में स्त्रियों की वास्तविक स्थिति कैसी थी।

### 2. सामाजिक सुधार के तत्वों की पहचान करना :

प्रेमचंद ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में सुधार के कौन-कौन से उपाय प्रस्तुत किए। विशेष रूप से नारी शिक्षा, समान अधिकार और स्वतंत्रता जैसे विचारों को उन्होंने किस प्रकार बढ़ावा दिया, इसका विश्लेषण किया जाएगा।

### 3. वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना :

प्रेमचंद की नारी संबंधी विचारधारा आज के समाज में कितनी प्रासंगिक है। इसके अंतर्गत यह देखा जाएगा कि क्या आज भी वही समस्याएँ मौजूद हैं और उनके समाधान के लिए प्रेमचंद के विचार कितने उपयोगी

हैं।

### साहित्य समीक्षा :

प्रेमचंद के साहित्य में नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार के विषय पर विभिन्न विद्वानों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण अध्ययन किए हैं, जो इस शोध के लिए आधार प्रदान करते हैं।

1. **शर्मा (2015)** ने अपने शोध "प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी जीवन" में नारी की सामाजिक स्थिति का यथार्थवादी विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उन्होंने निर्मला और सेवासदन जैसे उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट किया कि दहेज प्रथा, बाल विवाह तथा आर्थिक निर्भरता नारी उत्पीड़न के प्रमुख कारण हैं। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि प्रेमचंद ने नारी को समाज के एक पीड़ित वर्ग के रूप में चित्रित किया, किंतु उसमें संघर्ष की चेतना भी दिखाई देती है।

2. **वर्मा (2017)** ने "प्रेमचंद साहित्य में सामाजिक सुधार की भावना" शीर्षक शोध में यह प्रतिपादित किया कि प्रेमचंद का साहित्य समाज सुधार का एक सशक्त माध्यम है। उन्होंने नारी शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह तथा लैंगिक समानता जैसे मुद्दों को प्रमुखता दी। इस अध्ययन में यह दर्शाया गया है कि प्रेमचंद केवल समस्या का चित्रण नहीं करते, बल्कि उसके समाधान की दिशा भी सुझाते हैं।

3. **कुमारी (2018)** ने "प्रेमचंद की नारी दृष्टि : एक नारीवादी अध्ययन" में आधुनिक नारीवादी दृष्टिकोण से प्रेमचंद की रचनाओं का विश्लेषण किया। उनके अनुसार प्रेमचंद ने पितृसत्तात्मक समाज की आलोचना करते हुए नारी को आत्मनिर्भर और जागरूक बनाने का प्रयास किया। यह अध्ययन प्रेमचंद के साहित्य को नारीवादी विमर्श से जोड़ता है, जिससे उनकी प्रासंगिकता और बढ़ जाती है।

4. **सिंह (2020)** ने "ग्रामीण समाज और नारी : प्रेमचंद के संदर्भ में" शोध में ग्रामीण नारी की स्थिति का विश्लेषण किया है। गोदान के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि ग्रामीण परिवेश में नारी आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक शोषण का सामना करती है। यह अध्ययन विशेष रूप से ग्रामीण संदर्भ को उजागर करता है, जो प्रेमचंद के साहित्य का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

5. **अहमद (2022)** ने "प्रेमचंद और नारी सशक्तिकरण : समकालीन संदर्भ" में प्रेमचंद के विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता पर बल दिया है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि शिक्षा, समानता और स्वतंत्रता के माध्यम से नारी सशक्तिकरण का जो विचार प्रेमचंद ने प्रस्तुत किया, वह आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

### शोध अंतराल :

उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि यद्यपि नारी की स्थिति, उत्पीड़न तथा सामाजिक सुधार पर अलग-अलग शोध उपलब्ध हैं, फिर भी एक समग्र अध्ययन, जिसमें इन तीनों पहलुओं को एकीकृत रूप में विश्लेषित किया जाए, अपेक्षित है। प्रस्तुत शोध इसी दिशा में एक संगठित और व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

### शोध पद्धति :

यह शोध गुणात्मक पर आधारित है, जिसमें साहित्यिक विश्लेषण की पद्धति अपनाई गई है। अध्ययन के लिए द्वितीयक स्रोत जैसे प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यास निर्मला, सेवासदन और गोदान तथा संबंधित शोध लेख, पुस्तकें और जर्नल का उपयोग किया गया है।

इस शोध में विषय-वस्तु विश्लेषण के माध्यम से नारी उत्पीड़न के विभिन्न रूपों जैसे दहेज प्रथा, बाल विवाह, सामाजिक असमानता और आर्थिक निर्भरता का अध्ययन किया गया है। साथ ही, व्याख्यात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि प्रेमचंद ने अपने साहित्य में सामाजिक सुधार के कौन-कौन से उपाय प्रस्तुत किए हैं।

अध्ययन में ऐतिहासिक पद्धति का भी सहारा लिया गया है, जिससे प्रेमचंद युगीन समाज की वास्तविक परिस्थितियों को समझा जा सके। इसके अतिरिक्त, तुलनात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से उस समय की स्थिति की तुलना वर्तमान समाज से की गई है, ताकि शोध की प्रासंगिकता स्पष्ट हो सके।

इस प्रकार, यह शोध विभिन्न पद्धतियों के समन्वय से नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार का समग्र एवं व्यवस्थित विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

### **परिणाम :**

यह शोध के अंतर्गत प्रेमचंद के साहित्य का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनके कथा साहित्य में नारी उत्पीड़न के विविध रूपों का अत्यंत यथार्थवादी और संवेदनशील चित्रण किया गया है। उन्होंने नारी जीवन की उन जटिल परिस्थितियों को उजागर किया है, जिनमें सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक कारक एक साथ मिलकर स्त्री को शोषण की स्थिति में बनाए रखते हैं। निर्मला में बाल विवाह और दहेज प्रथा के कारण उत्पन्न त्रासदी यह दर्शाती है कि किस प्रकार सामाजिक कुरीतियाँ नारी के जीवन को असुरक्षित और दुखपूर्ण बना देती हैं। इसी प्रकार सेवासदन में यह स्पष्ट किया गया है कि सामाजिक उपेक्षा और आर्थिक विवशता किस प्रकार एक स्त्री को ऐसे मार्ग पर ले जाती है, जो उसके लिए अपमान और संघर्ष का कारण बनता है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि नारी की आर्थिक निर्भरता उसके उत्पीड़न का एक प्रमुख कारण रही है। प्रेमचंद के साहित्य में अधिकांश स्त्रियाँ आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं हैं, जिसके कारण वे अपने अधिकारों की रक्षा करने में असमर्थ रहती हैं। गोदान की धनिया जैसे पात्र यह संकेत देते हैं कि स्त्री में संघर्ष और नेतृत्व की क्षमता होते हुए भी सामाजिक संरचना उसे पूर्ण स्वतंत्रता नहीं देती। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि नारी सशक्तिकरण के लिए आर्थिक स्वतंत्रता अत्यंत आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त, प्रेमचंद ने नारी को केवल एक पीड़ित या असहाय पात्र के रूप में नहीं, बल्कि एक संघर्षशील, जागरूक और आत्मसम्मान से परिपूर्ण व्यक्तित्व के रूप में भी प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में स्त्रियाँ सामाजिक बंधनों के विरुद्ध अपनी आवाज उठाती हैं और परिस्थितियों से संघर्ष करती हैं। यह दर्शाता है कि प्रेमचंद नारी को परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम मानते थे और समाज में उसकी सक्रिय भूमिका को स्वीकार करते थे।

अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि प्रेमचंद का साहित्य केवल नारी उत्पीड़न का यथार्थ चित्रण नहीं करता, बल्कि सामाजिक सुधार की एक सशक्त और उद्देश्यपूर्ण दिशा भी प्रदान करता है। उन्होंने अपने कथा साहित्य के माध्यम से समाज में व्याप्त दहेज प्रथा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा तथा स्त्री शिक्षा के अभाव जैसी कुरीतियों की तीव्र आलोचना की है। प्रेमचंद ने यह दर्शाया कि ये सामाजिक बुराइयाँ न केवल नारी के विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं, बल्कि पूरे समाज की प्रगति को भी अवरुद्ध करती हैं। उनके विचारों में शिक्षा को नारी सशक्तिकरण का प्रमुख साधन माना गया है, जिसके माध्यम से स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक

हो सकती हैं। साथ ही, उन्होंने लैंगिक समानता और सामाजिक जागरूकता को आवश्यक तत्व के रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार, उनका साहित्य सुधारवादी दृष्टिकोण को स्थापित करता है, जो नारी मुक्ति और समाज के समग्र विकास को एक-दूसरे से जुड़ा हुआ मानता है।

प्रेमचंद का साहित्य वर्तमान समय में भी अत्यंत प्रासंगिक है। यद्यपि आधुनिक समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है, फिर भी दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, लैंगिक भेदभाव और आर्थिक असमानता जैसी समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं। इस संदर्भ में प्रेमचंद के विचार हमें इन समस्याओं की जड़ों को समझने और उनके समाधान की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित करते हैं। उनका साहित्य यह संदेश देता है कि वास्तविक सामाजिक परिवर्तन केवल नीतियों और कानूनों से नहीं, बल्कि समाज की सोच और दृष्टिकोण में परिवर्तन से संभव है। इस प्रकार, प्रेमचंद की विचारधारा आज भी नारी सशक्तिकरण और सामाजिक सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती है।

### **निष्कर्ष :**

शोध के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य नारी उत्पीड़न और सामाजिक सुधार के अध्ययन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत है। उन्होंने अपने कथा साहित्य के माध्यम से उस युगीन समाज की वास्तविकताओं को उजागर किया, जिसमें नारी अनेक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक और मानसिक बाधाओं से जूझ रही थी। बाल विवाह, दहेज प्रथा, स्त्री शिक्षा का अभाव तथा पितृसत्तात्मक व्यवस्था जैसी समस्याएँ नारी के विकास में प्रमुख अवरोध के रूप में उपस्थित थीं, जिन्हें प्रेमचंद ने अत्यंत यथार्थवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया।

इसके साथ ही, प्रेमचंद ने नारी को केवल एक पीड़ित वर्ग के रूप में नहीं, बल्कि एक संघर्षशील और आत्मसम्मान से युक्त व्यक्तित्व के रूप में भी चित्रित किया है। उनके साहित्य में नारी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती दिखाई देती है और सामाजिक बंधनों के विरुद्ध संघर्ष करती है। यह दृष्टिकोण प्रेमचंद की प्रगतिशील सोच को दर्शाता है, जिसमें वे नारी को समाज के विकास का एक महत्वपूर्ण आधार मानते हैं।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद का साहित्य सामाजिक सुधार की दिशा में एक सशक्त माध्यम के रूप में कार्य करता है। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों की आलोचना करते हुए शिक्षा, समानता और जागरूकता को आवश्यक बताया है। उनके विचारों में नारी सशक्तिकरण केवल व्यक्तिगत उन्नति का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक प्रगति की अनिवार्य शर्त है।

यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के विचार और उनका साहित्य आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं। वर्तमान समाज में भी नारी से संबंधित अनेक समस्याएँ विद्यमान हैं, जिनके समाधान के लिए प्रेमचंद की विचारधारा मार्गदर्शक सिद्ध हो सकती है। अतः उनका साहित्य न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और नारी मुक्ति के लिए आज भी प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

### **सुझाव :**

1. नारी शिक्षा को प्राथमिकता दी जाए।
2. आर्थिक सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया जाए।
3. सामाजिक कुरीतियों के प्रति जागरूकता बढ़ाई जाए।

4. कानूनी व्यवस्था को सुदृढ़ किया जाए।
5. साहित्य और शिक्षा के माध्यम से संवेदनशीलता विकसित की जाए।

#### संदर्भ सूची :

1. शर्मा, आर. (2015). प्रेमचंद के उपन्यासों में नारी जीवन. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
2. वर्मा, एस. (2017). प्रेमचंद साहित्य में सामाजिक सुधार की भावना. वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
3. कुमारी, प. (2018). प्रेमचंद की नारी दृष्टि : एक नारीवादी अध्ययन. पटना : हिंदी ग्रंथ अकादमी।
4. सिंह, ए. (2020). ग्रामीण समाज और नारी : प्रेमचंद के संदर्भ में. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
5. अहमद, न. (2022). प्रेमचंद और नारी सशक्तिकरण : समकालीन संदर्भ. लखनऊ : साहित्य भवन।
6. मिश्रा, डी. (2016). प्रेमचंद और उनका युग. दिल्ली : साहित्य अकादमी।
7. तिवारी, के. (2019). हिंदी उपन्यास और सामाजिक यथार्थ. भोपाल : मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
8. यादव, आर. (2014). प्रेमचंद के कथा साहित्य में समाज. पटना : बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
9. चौधरी, म. (2018). प्रेमचंद की कहानियों में नारी विमर्श. जयपुर : पंचशील प्रकाशन।
10. गुप्ता, एस. (2013). हिंदी साहित्य में नारी चेतना. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
11. त्रिपाठी, अ. (2021). प्रेमचंद और सामाजिक परिवर्तन. वाराणसी : भारतीय प्रकाशन।
12. श्रीवास्तव, वी. (2017). हिंदी कथा साहित्य का विकास. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
13. पांडेय, एन. (2015). प्रेमचंद के उपन्यासों का सामाजिक विश्लेषण. लखनऊ : उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
14. द्विवेदी, ह. (2012). हिंदी साहित्य और समाज. नई दिल्ली : ज्ञानपीठ प्रकाशन।
15. पाठक, एस. (2020). नारी विमर्श और हिंदी साहित्य. पटना : साहित्य संगम प्रकाशन।



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 191-195

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# वैश्वीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में हाशिये के समाज की पीड़ा : एक समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. नरेश कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर (हिसार)

## 1. भूमिका :

वैश्वीकरण वर्तमान समय की सबसे प्रभावशाली सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है, जिसने विश्व की संरचना को गहराई से बदल दिया है। यह प्रक्रिया वस्तुओं, पूँजी, तकनीक और विचारों के तीव्र वैश्विक प्रवाह पर आधारित है। सूचना प्रौद्योगिकी, संचार माध्यमों और बाजार व्यवस्था के विस्तार ने मानव जीवन को पहले से कहीं अधिक जुड़ा हुआ बना दिया है।

भारत जैसे विकासशील देश में वैश्वीकरण ने मिश्रित प्रभाव डाला है। एक ओर इसने आर्थिक अवसरों, शहरीकरण और तकनीकी विकास को बढ़ावा दिया है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानता, बेरोजगारी और सांस्कृतिक विघटन जैसी समस्याओं को भी जन्म दिया है।

इस प्रक्रिया का सबसे अधिक प्रभाव समाज के हाशिये पर स्थित वर्गों पर पड़ा है। ये वर्ग 'दलित, आदिवासी, स्त्री और श्रमिक' ऐतिहासिक रूप से पहले से ही वंचित रहे हैं। वैश्वीकरण ने उनकी स्थिति को और अधिक जटिल बना दिया है।

हिंदी साहित्य ने इस सामाजिक परिवर्तन को गहराई से महसूस किया है और अपने विभिन्न रूपों में इन वर्गों की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। विशेष रूप से दलित साहित्य, स्त्री विमर्श और आदिवासी लेखन ने हाशिये के समाज की आवाज को केंद्र में लाने का कार्य किया है।

## 2. वैश्वीकरण : अवधारणा और स्वरूप :

वैश्वीकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और वैश्विक बाजार का विस्तार शामिल है।

### 2.1 सकारात्मक पक्ष :

- तकनीकी विकास में वृद्धि।
- वैश्विक संचार में सुधार।
- शिक्षा और सूचना की उपलब्धता।

- रोजगार के नए अवसर।

## 2.2 नकारात्मक पक्ष :

- आर्थिक असमानता में वृद्धि।
- श्रमिकों का शोषण।
- स्थानीय उद्योगों का पतन।
- सांस्कृतिक पहचान का संकट।

इन नकारात्मक प्रभावों का सबसे अधिक असर हाशिये के समाज पर पड़ा है।

## 3. हाशिये का समाज : संरचना और वास्तविकता :

भारतीय सामाजिक संरचना ऐतिहासिक रूप से असमानताओं पर आधारित रही है। इसमें कुछ वर्गों को विशेषाधिकार प्राप्त रहे हैं, जबकि कुछ वर्गों को लगातार सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से हाशिये पर रखा गया। इन्हीं वंचित समूहों को सामान्यतः "हाशिये का समाज" कहा जाता है।

हाशिये का समाज कोई एकरूप समूह नहीं है, बल्कि इसमें कई विविध वर्ग शामिल हैं, जिनकी समस्याएँ अलग-अलग होते हुए भी संरचनात्मक रूप से समान हैं— शोषण, बहिष्कार और असमानता।

### 3.1 दलित समाज :

दलित समाज भारतीय जाति व्यवस्था की सबसे निचली परत में स्थित रहा है। ऐतिहासिक रूप से इन्हें अस्पृश्यता, सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक वंचना का सामना करना पड़ा है। आधुनिक संविधान ने समानता का अधिकार प्रदान किया, फिर भी सामाजिक व्यवहार में भेदभाव कई स्तरों पर मौजूद है।

वैश्वीकरण के दौर में दलित वर्ग को रोजगार के नए अवसर तो मिले, लेकिन वे अधिकतर असंगठित और असुरक्षित क्षेत्रों तक ही सीमित रहे। शिक्षा और तकनीकी संसाधनों तक सीमित पहुँच के कारण यह वर्ग प्रतिस्पर्धा में पिछड़ता चला गया।

### 3.2 आदिवासी समाज :

आदिवासी समाज भारत की प्राचीनतम सामाजिक संरचनाओं में से एक है। इनका जीवन प्रकृति, जंगल और भूमि से गहराई से जुड़ा हुआ है। लेकिन औद्योगीकरण और विकास परियोजनाओं ने इनके जीवन को गंभीर रूप से प्रभावित किया है।

खनन, बांध निर्माण और औद्योगिक विस्तार के कारण बड़े पैमाने पर आदिवासी समुदायों का विस्थापन हुआ है। इससे न केवल उनकी आजीविका प्रभावित हुई है, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पहचान भी संकट में आ गई है।

वैश्वीकरण ने प्राकृतिक संसाधनों के व्यावसायीकरण को बढ़ावा दिया, जिससे आदिवासी समाज और अधिक हाशिये पर चला गया।

### 3.3 स्त्री समाज :

स्त्री समाज भारतीय सामाजिक संरचना में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अधीन रहा है। महिलाओं को पारंपरिक रूप से घरेलू भूमिकाओं तक सीमित रखा गया, जिससे उनकी स्वतंत्र पहचान बाधित हुई।

वैश्वीकरण ने महिलाओं के लिए शिक्षा और रोजगार के नए अवसर खोले हैं, लेकिन इसके साथ ही नए

प्रकार के शोषण भी उत्पन्न हुए हैं – जैसे कार्यस्थलों पर असमान वेतन, असुरक्षा और दोहरा कार्यभार।

इस प्रकार स्त्री समाज एक ऐसे संक्रमण काल में है जहाँ एक ओर सशक्तिकरण की संभावना है, तो दूसरी ओर शोषण की नई संरचनाएँ भी सक्रिय हैं।

#### 4. हिंदी साहित्य में हाशिये के समाज की अभिव्यक्ति :

हिंदी साहित्य ने समय-समय पर समाज के वंचित वर्गों की समस्याओं को उजागर किया है। आधुनिक और समकालीन साहित्य में यह प्रवृत्ति और अधिक सशक्त हुई है।

##### 4.1 दलित साहित्य :

दलित साहित्य भारतीय साहित्य में एक क्रांतिकारी परिवर्तन के रूप में उभरा है। यह साहित्य सामाजिक न्याय, समानता और आत्मसम्मान की मांग करता है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा “जूठन” दलित जीवन की वास्तविकताओं को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। इसमें जातिगत अपमान, भूख, गरीबी और संघर्ष का यथार्थ चित्रण मिलता है।

दलित साहित्य केवल पीड़ा का वर्णन नहीं करता, बल्कि प्रतिरोध की चेतना भी उत्पन्न करता है।

##### 4.2 स्त्री विमर्श :

स्त्री विमर्श हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण आंदोलन के रूप में विकसित हुआ है। इसमें महिलाओं की अस्मिता, स्वतंत्रता और अधिकारों पर केंद्रित लेखन किया गया है।

मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती और मैत्रेयी पुष्पा जैसी लेखिकाओं ने स्त्री जीवन की जटिलताओं को गहराई से चित्रित किया है। इनके लेखन में स्त्री अनुभवों की प्रामाणिकता और आत्मसंघर्ष स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

स्त्री विमर्श पितृसत्तात्मक संरचना की आलोचना करता है और लैंगिक समानता की माँग करता है।

##### 4.3 आदिवासी विमर्श :

आदिवासी साहित्य हिंदी साहित्य का अपेक्षाकृत नया लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा है। महाश्वेता देवी की कहानियाँ और उपन्यास आदिवासी जीवन, शोषण और प्रतिरोध को गहराई से प्रस्तुत करते हैं।

इस साहित्य में भूमि, जंगल और पहचान का प्रश्न केंद्रीय है। आदिवासी साहित्य यह स्पष्ट करता है कि विकास की मुख्यधारा ने कैसे इन समुदायों को हाशिये पर धकेल दिया है।

#### 5. वैश्वीकरण और सांस्कृतिक परिवर्तन :

वैश्वीकरण ने केवल आर्थिक ढाँचे को ही नहीं बदला, बल्कि सांस्कृतिक संरचना को भी प्रभावित किया है।

स्थानीय भाषाएँ, परंपराएँ और लोक संस्कृति धीरे-धीरे वैश्विक उपभोक्ता संस्कृति के दबाव में कमजोर हो रही हैं। मीडिया और बाजार आधारित संस्कृति ने एक समान वैश्विक पहचान को बढ़ावा दिया है, जिससे विविधता का संकट उत्पन्न हुआ है।

हाशिये के समाज, जिनकी संस्कृति मौखिक परंपराओं और स्थानीय जीवनशैली पर आधारित है, इस परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित हुए हैं।

#### 6. वैश्वीकरण और हाशिये के समाज की पीड़ा के प्रमुख आयाम :

वैश्वीकरण ने विकास के नए अवसर प्रदान किए हैं, किंतु इसके साथ-साथ सामाजिक संरचना में गहरी

असमानताएँ भी उत्पन्न हुई हैं। हाशिये के समाज की पीड़ा को यदि गहराई से देखा जाए तो वह कई स्तरों पर दिखाई देती है।

### 6.1 आर्थिक असमानता :

वैश्वीकरण के कारण पूँजी का केंद्रीकरण हुआ है। बड़े उद्योग और कॉरपोरेट सेक्टर तेजी से विकसित हुए हैं, जबकि छोटे किसान, मजदूर और पारंपरिक व्यवसायों पर निर्भर वर्ग पिछड़ते चले गए हैं।

हाशिये के समाज के लोग मुख्यतः असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं, जहाँ न तो रोजगार की सुरक्षा है और न ही सामाजिक सुरक्षा। न्यूनतम वेतन, अस्थिर रोजगार और शोषण इनकी प्रमुख समस्याएँ हैं।

### 6.2 श्रम का असुरक्षित स्वरूप :

वैश्वीकरण ने श्रम बाजार को प्रतिस्पर्धात्मक बना दिया है। परिणामस्वरूप, सस्ते श्रम की माँग बढ़ी है। दलित, आदिवासी और प्रवासी मजदूर इस प्रणाली में सबसे अधिक शोषित वर्ग बन गए हैं।

काम के घंटे अधिक, वेतन कम और कार्यस्थल पर सुरक्षा लगभग नगण्य है। यह स्थिति इन वर्गों की सामाजिक-आर्थिक असुरक्षा को और गहरा करती है।

### 6.3 सांस्कृतिक विघटन :

वैश्वीकरण के प्रभाव से स्थानीय संस्कृति पर वैश्विक संस्कृति का दबाव बढ़ा है। मीडिया, विज्ञापन और बाजार आधारित संस्कृति ने एक उपभोक्तावादी मानसिकता को जन्म दिया है।

इस प्रक्रिया में लोक परंपराएँ, स्थानीय भाषाएँ और पारंपरिक ज्ञान प्रणाली कमजोर हो रही हैं। हाशिये के समाज, जिनकी सांस्कृतिक पहचान मौखिक परंपराओं और सामुदायिक जीवन पर आधारित है, इस परिवर्तन से विशेष रूप से प्रभावित हुए हैं।

### 6.4 विस्थापन की समस्या :

विकास परियोजनाएँ जैसे बांध, खनन और औद्योगिक क्षेत्र विस्तार ने लाखों लोगों को उनके मूल स्थान से विस्थापित किया है। आदिवासी समुदाय इस समस्या से सबसे अधिक प्रभावित हैं।

विस्थापन केवल भौगोलिक परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक टूटन भी उत्पन्न करता है। अपनी भूमि से अलग होना इन समुदायों के अस्तित्व के लिए गंभीर संकट उत्पन्न करता है।

### 6.5 पहचान और अस्मिता का संकट :

वैश्वीकरण के दौर में व्यक्ति और समुदाय दोनों की पहचान पर प्रश्न उठने लगे हैं। बाजार आधारित संस्कृति में व्यक्ति की पहचान उसकी आर्थिक क्षमता से निर्धारित होने लगी है।

हाशिये के समाज के लिए यह स्थिति और भी चुनौतीपूर्ण है, क्योंकि उनकी सामाजिक पहचान पहले से ही कमजोर स्थिति में रही है। हिंदी साहित्य में इस अस्मिता-संकट को व्यापक रूप से अभिव्यक्त किया गया है।

## 7. निष्कर्ष :

वैश्वीकरण एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसने आधुनिक समाज को गहराई से प्रभावित किया है। जहाँ एक ओर इसने आर्थिक विकास और तकनीकी प्रगति को बढ़ावा दिया है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानताओं को भी तीव्र किया है।

हाशिये के समाज की स्थिति इस प्रक्रिया में और अधिक संवेदनशील और जटिल हुई है। दलित, आदिवासी और स्त्री समुदाय आज भी विभिन्न प्रकार के शोषण और बहिष्कार का सामना कर रहे हैं।

हिंदी साहित्य ने इन समस्याओं को न केवल अभिव्यक्त किया है, बल्कि सामाजिक न्याय की दिशा में एक वैचारिक हस्तक्षेप भी किया है। यह साहित्य हाशिये की आवाज को केंद्र में लाकर एक अधिक समावेशी समाज की कल्पना प्रस्तुत करता है।

अतः यह स्पष्ट है कि साहित्य केवल समाज का दर्पण नहीं, बल्कि परिवर्तन का माध्यम भी है। वैश्वीकरण के इस दौर में आवश्यक है कि विकास की प्रक्रिया समावेशी हो और सभी वर्गों को समान अवसर प्राप्त हों।

### 13. संदर्भ ग्रंथ :

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास।
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि : जूठन।
3. राजेंद्र यादव : स्त्री विमर्श और हिंदी साहित्य, वाणी प्रकाशन।
4. महाश्वेता देवी : चोटी मुंडा और उसका तीर।



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 196-204

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# भगवद्गीता में नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों का अध्ययन

डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'

पूर्व ए. एम.एच. डी. एस. एस. सी रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।  
प्रदेश सह संयोजक, शिक्षक प्रकोष्ठ, भारतीय जनता पार्टी, दिल्ली।

## सारांश :

भगवद्गीता भारतीय ज्ञान परंपरा का एक महान, कालजयी एवं सार्वभौमिक ग्रंथ है, जिसमें मानव जीवन के विविध आयामों का अत्यंत गहन एवं व्यावहारिक विवेचन प्राप्त होता है। इसमें जीवन-दर्शन, कर्मयोग, नैतिकता, आत्मानुशासन, नेतृत्व, प्रबंधन, कर्तव्यबोध तथा मानसिक संतुलन जैसे महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों का समावेश है। भगवद्गीता केवल धार्मिक आस्था का ग्रंथ नहीं, बल्कि जीवन को सफल, संतुलित एवं सार्थक बनाने वाला प्रेरणास्रोत भी है। वर्तमान युग में जब समाज, प्रशासन, व्यापारिक संस्थाएँ तथा शैक्षणिक संगठन प्रभावी नेतृत्व, सुव्यवस्थित प्रबंधन तथा नैतिक कार्यप्रणाली की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, तब भगवद्गीता के सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध होते हैं।

भगवद्गीता में श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिए गए उपदेश केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे आधुनिक नेतृत्व कला, संगठनात्मक व्यवहार, मानव संसाधन प्रबंधन, निर्णय क्षमता तथा संकट समाधान के उत्कृष्ट उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के संशय, भय, मोह और मानसिक द्वंद्व को दूर कर उसे कर्तव्य के मार्ग पर अग्रसर किया, जो एक आदर्श नेता के गुणों को स्पष्ट करता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में भगवद्गीता में निहित नेतृत्व के मूल सिद्धांतों, निर्णय क्षमता, संकट प्रबंधन, टीम प्रबंधन, प्रेरणादायक नेतृत्व, नैतिक आचरण तथा निष्काम कर्म सिद्धांत का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है। साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार गीता के सिद्धांत आधुनिक कॉर्पोरेट जगत, प्रशासनिक संस्थानों, शैक्षणिक संगठनों तथा सामाजिक जीवन में समान रूप से उपयोगी हैं। यह अध्ययन सिद्ध करता है कि भगवद्गीता केवल आध्यात्मिक चेतना का ग्रंथ नहीं, बल्कि आधुनिक प्रबंधन विज्ञान, व्यक्तित्व विकास तथा सफल नेतृत्व का भी एक महत्त्वपूर्ण और प्रेरणादायक स्रोत है।

## 1. प्रस्तावना :

भारतीय संस्कृति, दर्शन एवं आध्यात्मिक परंपरा में भगवद्गीता का अत्यंत विशिष्ट, सम्माननीय एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह ग्रंथ केवल धार्मिक आस्था का आधार नहीं, बल्कि मानव जीवन के समग्र विकास का कालजयी मार्गदर्शक भी माना जाता है। भगवद्गीता महाभारत युद्ध के समय कुरुक्षेत्र की रणभूमि में श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया दिव्य उपदेश है। उस समय अर्जुन मोह, शंका, भय और मानसिक द्वंद्व से ग्रस्त था, तब

श्रीकृष्ण ने उसे कर्तव्य, धर्म, आत्मबल, विवेक तथा कर्मयोग का उपदेश दिया। यही उपदेश आगे चलकर भगवद्गीता के रूप में विश्वविख्यात हुआ।

गीता में वर्णित शिक्षाएँ केवल धार्मिक या आध्यात्मिक संदर्भों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक, शैक्षणिक तथा प्रशासनिक दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी एवं व्यावहारिक हैं। इसमें आत्मसंयम, निर्णय क्षमता, धैर्य, नेतृत्व कौशल, कर्तव्यनिष्ठा, सकारात्मक सोच, मानसिक संतुलन तथा जीवन प्रबंधन जैसे अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों का समावेश है। यही कारण है कि भगवद्गीता को केवल धर्मग्रंथ न मानकर जीवन प्रबंधन का उत्कृष्ट ग्रंथ भी कहा जाता है।

वर्तमान समय में जब विश्व तीव्र प्रतिस्पर्धा, तनाव, असंतुलन, नैतिक पतन तथा संगठनात्मक चुनौतियों का सामना कर रहा है, तब भगवद्गीता के सिद्धांत और भी अधिक प्रासंगिक हो उठते हैं। आज के कॉर्पोरेट युग में नेतृत्व, मानव संसाधन प्रबंधन, समय प्रबंधन, संकट समाधान, टीम समन्वय तथा नैतिक प्रशासन जैसी समस्याओं के समाधान हेतु गीता के विचार अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। अनेक प्रबंधन विशेषज्ञों एवं विद्वानों ने भी गीता को आधुनिक नेतृत्व एवं प्रबंधन विज्ञान का प्रेरणास्रोत माना है।

अतः स्पष्ट है कि भगवद्गीता केवल प्राचीन भारतीय ज्ञान का प्रतीक नहीं, बल्कि आधुनिक समाज, संस्थाओं तथा व्यक्तित्व विकास के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसके सिद्धांत आज भी उतने ही सार्थक हैं जितने प्राचीन काल में थे।

## 2. अध्ययन का उद्देश्य :

प्रस्तुत शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य भगवद्गीता में निहित नेतृत्व एवं प्रबंधन संबंधी सिद्धांतों का गहन अध्ययन करना है। भगवद्गीता केवल आध्यात्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि मानव जीवन, संगठन, कर्तव्यबोध, निर्णय क्षमता तथा व्यावहारिक ज्ञान का भी महत्त्वपूर्ण स्रोत है। आधुनिक समय में जब विभिन्न संस्थाएँ नेतृत्व संकट, नैतिक चुनौतियों, कार्य तनाव तथा संगठनात्मक समस्याओं का सामना कर रही हैं, तब गीता के सिद्धांतों का अध्ययन अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इसी दृष्टि से इस शोध-पत्र के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

### • भगवद्गीता में निहित नेतृत्व सिद्धांतों का अध्ययन करना :

इस शोध का प्रथम उद्देश्य गीता में वर्णित नेतृत्व संबंधी सिद्धांतों का विश्लेषण करना है। गीता में श्रीकृष्ण एक आदर्श नेता, मार्गदर्शक तथा प्रेरक के रूप में दिखाई देते हैं, जिन्होंने अर्जुन के भ्रम, भय एवं निराशा को दूर कर उसे कर्तव्य पथ पर अग्रसर किया। इस उद्देश्य के अंतर्गत यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि एक सफल नेता में कौन-कौन से गुण होने चाहिए, जैसे- दूरदर्शिता, आत्मविश्वास, नैतिकता, निर्णय क्षमता, प्रेरणा देने की योग्यता तथा संकट में धैर्य बनाए रखना।

### • गीता के प्रबंधन संबंधी विचारों का विश्लेषण करना :

द्वितीय उद्देश्य भगवद्गीता में वर्णित प्रबंधन सिद्धांतों का अध्ययन करना है। गीता में कार्यकुशलता, समय का सदुपयोग, लक्ष्य निर्धारण, निष्काम कर्म, अनुशासन, आत्मसंयम तथा टीम भावना जैसे अनेक प्रबंधन संबंधी विचार निहित हैं। इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट किया जाएगा कि गीता के सिद्धांत आधुनिक संस्थानों, व्यापारिक संगठनों, प्रशासनिक व्यवस्थाओं तथा शैक्षणिक क्षेत्रों में किस प्रकार उपयोगी हो सकते हैं।

- **आधुनिक संदर्भ में गीता की उपयोगिता को स्पष्ट करना :**

इस अध्ययन का तृतीय उद्देश्य वर्तमान युग में भगवद्गीता की प्रासंगिकता को स्पष्ट करना है। आज का समाज तनाव, प्रतिस्पर्धा, नैतिक संकट, कार्य दबाव तथा नेतृत्व की चुनौतियों से जूझ रहा है। ऐसे समय में गीता के सिद्धांत मानसिक संतुलन, सकारात्मक सोच, कार्य प्रेरणा, नैतिक नेतृत्व तथा सफल संगठन निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इस उद्देश्य के अंतर्गत यह भी दर्शाया जाएगा कि गीता केवल प्राचीन धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि आधुनिक जीवन और प्रबंधन विज्ञान के लिए भी उपयोगी मार्गदर्शक है।

- **नैतिक मूल्यों एवं कर्तव्यबोध की भावना को समझना :**

इस शोध का एक अन्य उद्देश्य यह जानना है कि गीता किस प्रकार व्यक्ति में कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी, निस्वार्थ सेवा तथा नैतिक मूल्यों की स्थापना करती है। किसी भी सफल संगठन या संस्था के लिए नैतिकता और जिम्मेदारी अत्यंत आवश्यक तत्व हैं।

- **व्यक्तित्व विकास में गीता के योगदान का अध्ययन करना :**

भगवद्गीता व्यक्ति को आत्मविश्वास, संयम, साहस, धैर्य तथा आत्मचिंतन की शिक्षा देती है। इसलिए इस शोध का उद्देश्य यह भी है कि गीता के सिद्धांत व्यक्तित्व विकास एवं नेतृत्व निर्माण में किस प्रकार सहायक सिद्ध होते हैं।

अतः उपर्युक्त उद्देश्यों के माध्यम से यह शोध—पत्र भगवद्गीता को आधुनिक नेतृत्व एवं प्रबंधन के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है।

### 3. शोध पद्धति :

प्रस्तुत शोध—पत्र भगवद्गीता में निहित नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों के अध्ययन पर आधारित है। इस विषय की प्रकृति दार्शनिक, सामाजिक तथा व्यावहारिक होने के कारण शोध कार्य में मुख्यतः वर्णनात्मक (Descriptive) तथा विश्लेषणात्मक (Analytical) पद्धति का उपयोग किया गया है। इन दोनों पद्धतियों के माध्यम से भगवद्गीता के सिद्धांतों का व्यवस्थित अध्ययन कर उनके आधुनिक संदर्भों में महत्व को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

- **वर्णनात्मक पद्धति :**

वर्णनात्मक पद्धति के अंतर्गत भगवद्गीता में वर्णित नेतृत्व, कर्मयोग, कर्तव्यबोध, निर्णय क्षमता, आत्मसंयम, नैतिकता तथा प्रबंधन संबंधी शिक्षाओं का क्रमबद्ध एवं तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। इस पद्धति द्वारा गीता के विभिन्न अध्यायों एवं श्लोकों में निहित सिद्धांतों को सरल, स्पष्ट एवं व्यवस्थित रूप में समझाने का प्रयास किया गया है। साथ ही गीता में श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के संवाद के माध्यम से नेतृत्व के व्यावहारिक पक्ष को भी रेखांकित किया गया है।

- **विश्लेषणात्मक पद्धति :**

विश्लेषणात्मक पद्धति के अंतर्गत भगवद्गीता में निहित विचारों का गहन अध्ययन कर उन्हें आधुनिक नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों के संदर्भ में परखा गया है। इस प्रक्रिया में यह विश्लेषण किया गया है कि गीता के सिद्धांत वर्तमान कॉर्पोरेट जगत, प्रशासनिक संस्थानों, शैक्षणिक संगठनों तथा सामाजिक जीवन में किस प्रकार उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। साथ ही निष्काम कर्म, संकट प्रबंधन, लक्ष्य निर्धारण, टीम भावना एवं नैतिक नेतृत्व

जैसे विषयों का समकालीन संदर्भों में मूल्यांकन किया गया है।

- **प्राथमिक स्रोत :**

इस शोध-पत्र के लिए प्राथमिक स्रोत के रूप में भगवद्गीता का उपयोग किया गया है। गीता के विभिन्न अध्यायों एवं श्लोकों का अध्ययन कर उनमें निहित नेतृत्व, प्रबंधन तथा नैतिक मूल्यों से संबंधित विचारों को संकलित किया गया है। विशेष रूप से कर्मयोग, ज्ञानयोग, आत्मसंयम तथा कर्तव्यबोध से संबंधित श्लोकों को अध्ययन का आधार बनाया गया है।

- **द्वितीयक स्रोत :**

द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत विभिन्न पुस्तकों, शोध-पत्रों, पत्रिकाओं, विद्वानों के लेखों तथा प्रबंधन विषयक साहित्य का उपयोग किया गया है। इसके माध्यम से भगवद्गीता के आधुनिक व्याख्यात्मक पक्ष तथा प्रबंधन संबंधी उपयोगिता को समझने में सहायता प्राप्त हुई है। साथ ही विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विचारों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है।

- **शोध की सीमाएँ :**

यह शोध मुख्यतः भगवद्गीता में निहित नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों तक सीमित है। इसमें गीता के धार्मिक, आध्यात्मिक एवं अन्य दार्शनिक पक्षों का केवल आवश्यकतानुसार उल्लेख किया गया है। अध्ययन का केंद्र आधुनिक नेतृत्व एवं संगठनात्मक प्रबंधन के संदर्भ में गीता की उपयोगिता को स्पष्ट करना है।

- **शोध का उद्देश्यात्मक महत्व :**

उक्त पद्धति के माध्यम से यह प्रयास किया गया है कि भगवद्गीता के शाश्वत सिद्धांतों को आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप समझा जाए तथा यह सिद्ध किया जाए कि यह ग्रंथ केवल आध्यात्मिक ज्ञान का स्रोत नहीं, बल्कि नेतृत्व एवं प्रबंधन विज्ञान का भी एक महत्वपूर्ण आधार है।

#### 4. **भगवद्गीता में प्रबंधन सिद्धांत :**

भगवद्गीता केवल आध्यात्मिक ज्ञान का ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह सफल जीवन, संगठनात्मक दक्षता तथा प्रभावी प्रबंधन का भी उत्कृष्ट मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसमें वर्णित अनेक सिद्धांत आधुनिक प्रबंधन विज्ञान, प्रशासनिक व्यवस्था, नेतृत्व विकास तथा कार्य-संस्कृति के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। गीता मनुष्य को कर्तव्यनिष्ठा, अनुशासन, संतुलन, निर्णय क्षमता, आत्मसंयम तथा सकारात्मक दृष्टिकोण की शिक्षा देती है। वर्तमान समय में जब संस्थाएँ प्रतिस्पर्धा, तनाव, संसाधन प्रबंधन तथा नेतृत्व संकट जैसी समस्याओं का सामना कर रही हैं, तब गीता के सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होते हैं।

भगवद्गीता में वर्णित प्रमुख प्रबंधन सिद्धांत निम्नलिखित हैं :-

##### 4.1 **लक्ष्य निर्धारण :**

किसी भी संगठन, संस्था अथवा कार्य की सफलता के लिए स्पष्ट उद्देश्य, दूरदृष्टि तथा योजनाबद्ध दिशा अत्यंत आवश्यक है। यदि लक्ष्य स्पष्ट न हो, तो व्यक्ति तथा संगठन दोनों भ्रम की स्थिति में पड़ जाते हैं। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को उसके धर्म, कर्तव्य तथा उत्तरदायित्व का बोध कराते हैं और उसे उसके वास्तविक उद्देश्य की ओर प्रेरित करते हैं।

यह सिद्धांत आधुनिक प्रबंधन में Goal Setting Theory के समान है, जिसके अनुसार स्पष्ट लक्ष्य

निर्धारित करने से कार्यकुशलता, प्रेरणा तथा उत्पादकता में वृद्धि होती है। किसी भी सफल संस्था को अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक दोनों प्रकार के लक्ष्य निर्धारित करने चाहिए। गीता का संदेश है कि जब उद्देश्य स्पष्ट होता है, तब मार्ग स्वयं प्रशस्त होने लगता है।

#### 4.2 निष्काम कर्म सिद्धांत :

“कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।”

(अध्याय 2, श्लोक 47)

यह भगवद्गीता का अत्यंत प्रसिद्ध एवं महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है। इसका अर्थ है कि मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है, फल पर नहीं। व्यक्ति को पूर्ण निष्ठा, समर्पण और ईमानदारी के साथ कार्य करना चाहिए, बिना परिणाम की अत्यधिक चिंता किए।

आधुनिक प्रबंधन के संदर्भ में यह सिद्धांत कर्मचारियों एवं प्रबंधकों को कार्यकेंद्रित दृष्टिकोण अपनाने की प्रेरणा देता है। जब व्यक्ति केवल परिणाम के दबाव में कार्य करता है, तब तनाव, भय और असंतोष बढ़ता है। परंतु जब वह निष्काम भाव से कर्म करता है, तब उसकी कार्यक्षमता, सृजनशीलता तथा मानसिक संतुलन में वृद्धि होती है। यह सिद्धांत तनाव प्रबंधन तथा कार्य संतुष्टि दोनों के लिए उपयोगी है।

#### 4.3 संकट प्रबंधन :

किसी भी संगठन या जीवन में संकट की स्थिति कभी भी उत्पन्न हो सकती है। ऐसे समय में सही नेतृत्व, धैर्य, संवाद तथा संतुलित सोच की आवश्यकता होती है। महाभारत युद्ध के आरंभ में अर्जुन मानसिक द्वंद्व, भय, मोह तथा असमंजस की स्थिति में था। वह अपने कर्तव्य से विमुख होने लगा था।

ऐसी परिस्थिति में श्रीकृष्ण ने संवाद, तर्क, प्रेरणा तथा आध्यात्मिक दृष्टि के माध्यम से अर्जुन को मानसिक रूप से स्थिर किया। उन्होंने उसकी समस्या को समझा, उसका मनोबल बढ़ाया और उसे कर्तव्य मार्ग पर पुनः स्थापित किया। यह आधुनिक बतपेपे डंदंहमउमदज का श्रेष्ठ उदाहरण है।

आज के प्रबंधन में संकट के समय नेता को शांत रहना, सही निर्णय लेना, टीम का विश्वास बनाए रखना तथा सकारात्मक दिशा देना आवश्यक माना जाता है। गीता यही शिक्षा प्रदान करती है।

#### 4.4 निर्णय क्षमता :

किसी भी सफल प्रबंधक की सबसे बड़ी विशेषता उसकी निर्णय क्षमता होती है। कठिन परिस्थितियों में त्वरित, संतुलित तथा विवेकपूर्ण निर्णय लेना संगठन की सफलता का आधार बनता है। भगवद्गीता बुद्धियोग, आत्मचिंतन तथा विवेकपूर्ण विचार पर विशेष बल देती है।

अर्जुन जब भ्रमित था, तब श्रीकृष्ण ने उसे ज्ञान, तर्क तथा सत्य के आधार पर निर्णय लेने की प्रेरणा दी। इससे स्पष्ट होता है कि निर्णय भावनाओं, भय या मोह के आधार पर नहीं, बल्कि बुद्धि, नैतिकता और परिस्थितियों के यथार्थ मूल्यांकन पर आधारित होना चाहिए।

आधुनिक प्रशासनिक एवं व्यावसायिक संस्थाओं में यह सिद्धांत अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि सही निर्णय समय, संसाधन और ऊर्जा की बचत करता है तथा संगठन को प्रगति की दिशा में अग्रसर करता है।

#### 4.5 टीम प्रबंधन :

किसी भी संस्था, संगठन या परियोजना की सफलता केवल एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं करती, बल्कि

सामूहिक प्रयास, सहयोग, विश्वास तथा समन्वय पर आधारित होती है। महाभारत में पांडवों की सफलता का प्रमुख कारण उनकी एकता, पारस्परिक विश्वास तथा रणनीतिक सहयोग था।

श्रीकृष्ण ने प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता को समझकर उसे उचित भूमिका प्रदान की। यह आधुनिक Team Management का उत्कृष्ट उदाहरण है। एक सफल प्रबंधक वही होता है जो अपनी टीम के सदस्यों की योग्यता को पहचानकर उन्हें सही दिशा दे, प्रेरित करे तथा सामूहिक लक्ष्य के प्रति समर्पित बनाए।

आज के कॉर्पोरेट जगत में टीम वर्क, सहयोग, संचार कौशल तथा समन्वय को अत्यंत महत्त्व दिया जाता है। गीता यह संदेश देती है कि संगठनात्मक सफलता के लिए सामूहिक शक्ति का सदुपयोग आवश्यक है।

#### 4.6 समय प्रबंधन एवं अनुशासन :

भगवद्गीता में समय के सदुपयोग, नियमितता तथा अनुशासन का भी महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। जो व्यक्ति अनुशासित जीवन जीता है, वही अपने कार्यों को समय पर पूर्ण कर सकता है। आधुनिक संस्थानों में समय प्रबंधन सफलता का आधार है।

#### 4.7 नैतिक प्रबंधन :

गीता यह सिखाती है कि किसी भी कार्य में सत्य, न्याय, ईमानदारी तथा धर्म का पालन होना चाहिए। यदि संगठन केवल लाभ को लक्ष्य बनाकर नैतिक मूल्यों की उपेक्षा करता है, तो दीर्घकाल में उसका पतन निश्चित है। अतः नैतिक प्रबंधन गीता का अत्यंत महत्त्वपूर्ण संदेश है।

#### 5. आधुनिक युग में प्रासंगिकता :

वर्तमान समय विज्ञान, तकनीक, प्रतिस्पर्धा, तीव्र गति से बदलती जीवनशैली तथा बढ़ते कार्य-दबाव का युग है। आज मनुष्य भौतिक प्रगति तो कर रहा है, परंतु मानसिक तनाव, नैतिक संकट, नेतृत्व की कमी तथा संगठनात्मक असंतुलन जैसी समस्याएँ भी निरंतर बढ़ रही हैं। ऐसे परिवेश में भगवद्गीता के सिद्धांत अत्यंत उपयोगी एवं प्रासंगिक सिद्ध होते हैं। गीता व्यक्ति को केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन ही नहीं देती, बल्कि व्यावहारिक जीवन, प्रशासन, व्यापार, शिक्षा तथा सामाजिक व्यवस्था के लिए भी प्रभावशाली दिशा प्रदान करती है।

आज के प्रशासनिक, व्यावसायिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में गीता के सिद्धांत निम्नलिखित रूपों में उपयोगी हैं :

##### • मानव संसाधन प्रबंधन :

किसी भी संस्था की वास्तविक शक्ति उसके मानव संसाधन अर्थात् कर्मचारियों, अधिकारियों, शिक्षकों एवं कार्यकर्ताओं में निहित होती है। भगवद्गीता व्यक्ति की क्षमता, योग्यता, कर्तव्यनिष्ठा तथा आत्मविकास पर बल देती है। आधुनिक संस्थानों में कर्मचारियों को प्रेरित करना, उनकी योग्यताओं के अनुसार कार्य देना, सकारात्मक वातावरण बनाना तथा कार्य-संतोष प्रदान करना अत्यंत आवश्यक है।

गीता का निष्काम कर्म सिद्धांत कर्मचारियों को निष्ठा, समर्पण एवं ईमानदारी के साथ कार्य करने की प्रेरणा देता है। साथ ही यह सिखाता है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ न्यायपूर्ण एवं सम्मानजनक व्यवहार किया जाए, जिससे संगठन में विश्वास और सहयोग की भावना विकसित हो।

##### • नैतिक नेतृत्व :

वर्तमान समय में नेतृत्व केवल पद या अधिकार का नाम नहीं है, बल्कि जिम्मेदारी, ईमानदारी तथा आदर्श आचरण का प्रतीक है। अनेक संस्थाओं में नेतृत्व संकट इसलिए उत्पन्न होता है क्योंकि वहाँ नैतिक मूल्यों का

अभाव होता है। भगवद्गीता सिखाती है कि सच्चा नेता वही है जो स्वयं आदर्श बने और दूसरों को सही दिशा प्रदान करे।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को केवल आदेश नहीं दिया, बल्कि तर्क, संवाद और प्रेरणा के माध्यम से उसका मार्गदर्शन किया। आधुनिक प्रशासन, राजनीति, शिक्षा तथा व्यापारिक जगत में ऐसे ही नैतिक नेतृत्व की आवश्यकता है, जो संगठन को सफलता के साथ-साथ सम्मान भी दिला सके।

- **तनाव प्रबंधन :**

आज का जीवन अत्यधिक तनावपूर्ण हो चुका है। कार्यभार, प्रतिस्पर्धा, आर्थिक दबाव, असुरक्षा तथा भविष्य की चिंता के कारण व्यक्ति मानसिक तनाव से ग्रस्त रहता है। भगवद्गीता मनुष्य को मानसिक संतुलन, आत्मनियंत्रण, धैर्य तथा सकारात्मक सोच की शिक्षा देती है।

गीता का संदेश है कि व्यक्ति को कर्म करते हुए परिणाम की अत्यधिक चिंता नहीं करनी चाहिए। जब व्यक्ति फल की चिंता छोड़कर कर्म पर ध्यान देता है, तब उसका तनाव कम होता है और कार्यकुशलता बढ़ती है। इस दृष्टि से गीता आधुनिक तनाव प्रबंधन का उत्कृष्ट आधार प्रस्तुत करती है।

- **समय प्रबंधन :**

किसी भी सफल व्यक्ति या संस्था के लिए समय का सदुपयोग अत्यंत आवश्यक है। समय प्रबंधन के अभाव में संसाधनों की हानि, कार्य में विलंब तथा असफलता उत्पन्न होती है। भगवद्गीता अनुशासन, नियमितता तथा कर्तव्यपालन पर बल देती है।

जो व्यक्ति समय का सम्मान करता है और अपने कार्यों को प्राथमिकता के अनुसार व्यवस्थित करता है, वही सफलता प्राप्त करता है। आधुनिक व्यावसायिक संस्थाओं, कार्यालयों एवं शैक्षणिक संस्थानों में समय प्रबंधन सफलता का मूल आधार माना जाता है, और गीता इस दिशा में प्रेरणादायक मार्गदर्शन प्रदान करती है।

- **कार्य प्रेरणा :**

किसी भी संगठन की प्रगति उसके सदस्यों की प्रेरणा एवं उत्साह पर निर्भर करती है। यदि कर्मचारी, विद्यार्थी या अधिकारी प्रेरित न हों, तो उनकी कार्यक्षमता कम हो जाती है। भगवद्गीता व्यक्ति को आत्मविश्वास, कर्तव्यनिष्ठा तथा सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने की प्रेरणा देती है।

अर्जुन जब निराश और भ्रमित हो गया था, तब श्रीकृष्ण ने उसे आत्मबल, साहस और कर्म के मार्ग पर प्रेरित किया। इसी प्रकार आधुनिक संस्थानों में भी नेतृत्व का दायित्व है कि वह अपने सहयोगियों का मनोबल बढ़ाए और उन्हें लक्ष्य प्राप्ति हेतु प्रेरित करे।

## 6. **संगठनात्मक समन्वय :**

किसी भी संस्था की सफलता केवल व्यक्तिगत प्रयासों से संभव नहीं होती, बल्कि सामूहिक सहयोग, संचार, विश्वास तथा समन्वय से प्राप्त होती है। भगवद्गीता टीम भावना, सहयोग और सामूहिक उत्तरदायित्व की प्रेरणा देती है।

महाभारत में पांडवों की सफलता उनकी एकता, रणनीति तथा पारस्परिक सहयोग का परिणाम थी। आधुनिक संगठनों में भी विभागों के मध्य समन्वय, स्पष्ट संचार और सहयोगी वातावरण अत्यंत आवश्यक है। गीता का यह सिद्धांत संगठनात्मक स्थिरता और सफलता के लिए उपयोगी है।

## 7. शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास में उपयोगिता :

शैक्षणिक संस्थानों में भी गीता के सिद्धांत अत्यंत उपयोगी हैं। यह विद्यार्थियों में अनुशासन, आत्मविश्वास, धैर्य, लक्ष्यनिष्ठा तथा नैतिक मूल्यों का विकास करती है। शिक्षक एवं प्रशासक भी गीता से नेतृत्व, मार्गदर्शन एवं प्रेरणा के सिद्धांत सीख सकते हैं।

### निष्कर्ष :

उपर्युक्त समस्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भगवद्गीता केवल धार्मिक अथवा आध्यात्मिक ग्रंथ नहीं है, बल्कि नेतृत्व, प्रबंधन, नैतिकता तथा व्यक्तित्व विकास का भी एक कालजयी और व्यावहारिक मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसमें वर्णित सिद्धांत मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उपयोगी हैं और आज के बदलते सामाजिक, प्रशासनिक तथा व्यावसायिक परिवेश में भी पूर्णतः प्रासंगिक बने हुए हैं।

भगवद्गीता में वर्णित नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांत आज भी उतने ही उपयोगी हैं जितने प्राचीन काल में थे। यद्यपि समय, परिस्थितियाँ, तकनीक तथा कार्यप्रणालियाँ बदल गई हैं, तथापि मानव स्वभाव, मानसिक संघर्ष, निर्णय संबंधी दुविधाएँ, प्रतिस्पर्धा, तनाव तथा संगठनात्मक चुनौतियाँ आज भी विद्यमान हैं। ऐसे में गीता के सिद्धांत आधुनिक युग के लिए मार्गदर्शक प्रकाश स्तंभ के समान हैं।

यह ग्रंथ व्यक्ति को कर्तव्यनिष्ठ, विवेकशील, आत्मविश्वासी, साहसी तथा सफल नेता बनने की प्रेरणा देता है। गीता सिखाती है कि सच्चा नेता वही है जो संकट की घड़ी में धैर्य बनाए रखे, सही निर्णय ले, नैतिक मूल्यों का पालन करे तथा अपने साथियों को प्रेरित कर लक्ष्य की ओर अग्रसर करे। श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया मार्गदर्शन आदर्श नेतृत्व का उत्कृष्ट उदाहरण है।

गीता का निष्काम कर्म सिद्धांत व्यक्ति को यह शिक्षा देता है कि सफलता का वास्तविक आधार कर्म, समर्पण और ईमानदारी है। जब व्यक्ति परिणाम की अत्यधिक चिंता किए बिना अपने कार्य को पूर्ण निष्ठा से करता है, तब वह मानसिक शांति, आत्मसंतोष तथा वास्तविक सफलता प्राप्त करता है। यह सिद्धांत आधुनिक कार्य-संस्कृति, तनाव प्रबंधन तथा उत्पादकता वृद्धि के लिए अत्यंत उपयोगी है।

आधुनिक संस्थानों, प्रशासनिक संगठनों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों तथा शैक्षणिक संस्थाओं में यदि गीता के सिद्धांतों को व्यवहार में लाया जाए, तो संगठन अधिक प्रभावी, अनुशासित, नैतिक एवं सफल बन सकते हैं। मानव संसाधन प्रबंधन, समय प्रबंधन, टीम समन्वय, नैतिक नेतृत्व तथा संकट प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में गीता के विचार विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होते हैं।

इसके अतिरिक्त भगवद्गीता व्यक्ति के आंतरिक विकास पर भी बल देती है। यह आत्मसंयम, सकारात्मक सोच, धैर्य, आत्मबल तथा मानसिक संतुलन की शिक्षा देकर व्यक्ति को जीवन की चुनौतियों का सामना करने योग्य बनाती है। इसलिए यह केवल संस्थागत सफलता का ही नहीं, बल्कि व्यक्तिगत सफलता और मानसिक शांति का भी मार्ग प्रशस्त करती है।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भगवद्गीता प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा का ऐसा अमूल्य ग्रंथ है, जिसकी शिक्षाएँ आज भी समान रूप से प्रासंगिक, प्रेरणादायक तथा उपयोगी हैं। यदि व्यक्ति और समाज इसके सिद्धांतों को अपनाएँ, तो नैतिक, संतुलित, सफल और समृद्ध जीवन की स्थापना संभव है।

### संदर्भ सूची :

1. श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस संस्करण, गोरखपुर।
2. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, भगवद्गीता व्याख्या, विभिन्न संस्करण।
3. स्वामी विवेकानंद, भारतीय चिंतन एवं व्यक्तित्व विकास संबंधी विचार, रामकृष्ण मिशन प्रकाशन।
4. पीटर ड्रकर, प्रबंधन के सिद्धांत (अनुवादित संस्करण)।
5. स्टीफन पी. रॉबिन्स, संगठनात्मक व्यवहार एवं प्रबंधन सिद्धांत।
6. भारतीय प्रबंधन चिंतन पर आधारित विभिन्न शोध-पत्र एवं पत्रिकाएँ।
7. नेतृत्व एवं प्रशासनिक दक्षता विषयक प्रकाशित शोध लेख।
8. आधुनिक कॉर्पोरेट प्रबंधन एवं मानव संसाधन विकास संबंधी संदर्भ सामग्री।
9. नैतिक नेतृत्व एवं कार्य-संस्कृति पर आधारित अकादमिक लेख।
10. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) से संबंधित शोध सामग्री एवं शैक्षणिक संदर्भ ग्रंथ।



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 205-210

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

# Artificial Intelligence in Homoeopathy : A New Era of Individualized Prescription

Prof. Dr. Vijay Kumar Pushkar<sup>1</sup>, Prof. Dr Ruchi Wadhwa (Biswas)<sup>2</sup>,

Prof. Dr. Dileep kumar Sonkar<sup>3</sup>, Prof. Dr. Rinku Bishwas<sup>4</sup>, Dr Mansi Srivastava<sup>5</sup>

<sup>1</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom.), Principal -State National Homoeopathic Medical College & Hospital,  
Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>2</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.) (Sch.), Professor & H.O.D. –Dept. of Forensic Medicine & Toxicology  
-State National Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>3</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.), Professor & H.O.D. –Dept. of Phisiology & Biochemistry-State  
National Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>4</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D(Hom.) (Sc.), H.O.D. and Professor-Department of Pathology & Microbiology,  
State Lalbahadur shastri Homoeopathic Medical College and Hospital, Shantipuram, Prayagraj, Uttar Pradesh

<sup>5</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.) Assistant Professor –Dept. of Forensic Medicine & Toxicology -State  
National Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh.

## Abstract :

Homoeopathy is a system of medicine based on individualized treatment, where remedy selection depends on the totality of symptoms. With the advancement of technology, Artificial Intelligence (AI) has emerged as a powerful tool in healthcare. This article explores the potential role of AI in homoeopathic practice, including case analysis, repertorization, remedy selection, and predictive analytics. It highlights how AI can enhance accuracy, efficiency, and standardization while preserving the core principles of homoeopathy. The challenges, ethical considerations, and future prospects of integrating AI into homoeopathy are also discussed.

## Keywords :

Artificial Intelligence, Homoeopathy, Individualization, Repertorization, Machine Learning, Digital Medicine

## **Introduction :**

Homoeopathy, founded by Samuel Hahnemann, is based on the principle of “*Similia Similibus Curentur*” (let like be cured by like). The cornerstone of homoeopathic practice is individualization, where each patient is treated as a unique entity.

In recent years, Artificial Intelligence has transformed various domains of medicine by enabling data-driven decision-making. AI technologies such as machine learning, natural language processing, and predictive analytics are now being explored in complementary and alternative medicine systems, including homoeopathy.

The integration of AI into homoeopathy presents an opportunity to enhance clinical decision-making while maintaining the philosophical foundations of the system.

## **Concept of Artificial Intelligence in Healthcare :**

Artificial Intelligence refers to the simulation of human intelligence by machines, particularly computer systems. It involves :

- Machine Learning (ML)
- Natural Language Processing (NLP)
- Deep Learning
- Expert Systems

In modern medicine, AI is widely used for diagnosis, imaging, and treatment planning. Its application in homoeopathy, although still emerging, is gaining attention due to the complex and individualized nature of homoeopathic prescriptions.

## **Role of AI in Homoeopathic Practice :**

### **1. Case Taking and Data Analysis**

AI-powered tools can assist in structured case-taking by :

- Recording detailed patient histories
- Identifying characteristic symptoms
- Analyzing mental and physical generals

Natural Language Processing can convert patient narratives into structured data, improving accuracy and reducing human error.

### **2. Repertorization :**

Repertorization is a critical step in homoeopathy that involves matching symptoms with remedies.

## **AI can :**

- Analyze large repertory databases quickly

- Suggest probable remedies based on symptom similarity
  - Reduce time and practitioner bias
- Modern repertory software already uses algorithm-based ranking, but AI can further refine this by learning from clinical outcomes.

### 3. Remedy Selection

AI systems can :

- Compare patient symptom patterns with known remedy profiles
- Suggest individualized prescriptions
- Provide probability-based remedy selection

However, AI acts as a **decision-support system**, not a replacement for the physician.

### 4. Predictive Analytics

AI can analyze large datasets of past cases to :

- Predict treatment outcomes
- Identify remedy-response patterns
- Improve prognosis accuracy

This is particularly useful in chronic diseases and research settings.

### 5. Research and Evidence Generation

AI can accelerate homoeopathic research by :

- Conducting systematic reviews
- Analyzing clinical trial data
- Identifying trends and gaps in literature

This strengthens the evidence base of homoeopathy.

### Advantages of AI in Homoeopathy

- Improved accuracy in case analysis
- Faster repertorization and remedy selection
- Reduction of human bias
- Standardization of clinical practice
- Enhanced research capabilities

### Recent Evidence (2023–2026)

- A 2026 study comparing AI chatbots with homoeopathic practitioners found **inconsistency in remedy selection and variability across AI platforms**, highlighting limitations of current AI systems
- Research on AI-assisted prescribing indicates that **AI tools cannot replace live practitioners**

## **but may serve as supportive systems**

- A 2026 PubMed-indexed article emphasized AI's role as an **assistant in case-taking and repertorization rather than a replacement for clinical judgment**
- Recent reviews (2024–2025) suggest AI can **enhance diagnostic accuracy and individualized treatment planning** in homoeopathy

## **Challenges and Limitations**

Despite its potential, AI in homoeopathy faces several challenges :

### **1. Complexity of Individualization :**

Homoeopathy considers subjective symptoms, emotions, and personality traits, which are difficult to quantify.

### **2. Data Quality Issues :**

AI systems require large, high-quality datasets, which are limited in homoeopathy.

### **3. Ethical Concerns :**

- Patient privacy and data security
- Over-reliance on technology
- Loss of physician-patient relationship

### **4. Philosophical Constraints :**

Homoeopathy is an art as well as a science; excessive dependence on AI may undermine clinical intuition.

## **Ethical Considerations :**

The integration of AI must align with medical ethics :

- Maintaining patient confidentiality
- Ensuring informed consent
- Using AI as an assistive tool, not a substitute for clinical judgment

## **Future Prospects :**

The future of AI in homoeopathy is promising. Potential developments include :

- AI-driven personalized remedy databases
- Integration with telemedicine platforms
- Real-time decision support systems
- Global data-sharing networks for homoeopathic research

Collaboration between homoeopaths, data scientists, and software developers will be essential to realize this potential.

## **Discussion :**

AI has the potential to bridge the gap between traditional homoeopathic philosophy and modern scientific approaches. While it enhances efficiency and objectivity, it cannot replace the holistic understanding of the patient.

The ideal approach is a **hybrid model**, where AI supports the physician in decision-making while preserving the individualized and patient-centered nature of homoeopathy.

## **Conclusion :**

Artificial Intelligence represents a significant advancement in homoeopathy, offering tools to enhance precision, efficiency, and research. However, it should be viewed as an adjunct rather than a replacement for the homoeopathic physician. By integrating AI thoughtfully and ethically, homoeopathy can evolve into a more evidence-based and technologically advanced system while retaining its core principles of individualized care.

References for Article : Artificial Intelligence in Homoeopathy : A New Era of Individualized Prescription

## **References :**

1. Organon of Medicine – Samuel Hahnemann
2. Lectures on Homoeopathic Philosophy – James Tyler Kent
3. Repertory of the Homoeopathic Materia Medica
4. Boenninghausen’s Therapeutic Pocket Book – Clemens von Bönninghausen
5. “Artificial Intelligence [AI] and Homoeopathy: Applicability, Reliability, Validity and Limitations of an AI-Aided Homoeopathic Clinic” – Journal of Drug Delivery and Therapeutics (2026)
6. “The Application of Artificial Intelligence in Acute Prescribing in Homeopathy: A Comparative Retrospective Study” – MDPI Healthcare Journal (2025)
7. “Comparing AI Chatbots to Live Practitioners of Homeopathy: A Comparative Retrospective Study” – Healthcare Journal (2026)
8. “The Role of Artificial Intelligence in Homeopathic System of Medicine: A Review” – International Journal of Scientific Research (2024)
9. “Artificial Intelligence in Homoeopathy – The End or the Beginning?” – African Journal of Biomedical Research (2024)
10. World Health Organization reports on AI in healthcare and digital medicine
11. PubMed indexed papers on AI in healthcare and decision support systems.

12. UNESCO Recommendation on the Ethics of Artificial Intelligence
13. Anpat AV, Jayant PS, Tukaram IM, Haribhahu KM. Artificial Intelligence [AI] and Homoeopathy: Applicability, Reliability, Validity and Limitations of an AI-Aided Homoeopathic Clinic. J Drug Deliv Ther. 2026;16(1):143-145.
14. Doherty R, Pracjek P, Luketic CD, Straiges D, Gray AC. The Application of Artificial Intelligence in Acute Prescribing in Homeopathy: A Comparative Retrospective Study. Healthcare. 2025;13(15):1923.
15. Hahnemann S. Organon of Medicine. 6th ed.
16. Kent JT. Lectures on Homoeopathic Philosophy.
17. Artificial Intelligence: A Modern Approach – Stuart Russell & Peter Norvig
18. Life 3.0: Being Human in the Age of Artificial Intelligence – Max Tegmark.

**Corresponding Author: Dr.Ruchi Wadhwa (Biswas)**

B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom) (Sch.), Professor & H.O.D. –Dept. of Forensic Medicine & Toxicology -  
State National Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar ,Lucknow, Uttar Pradesh  
Mob. 9667674366, Email- ruchibiswas.rb@gmail.com



संगम Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037

**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREEED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4

पृष्ठ : 211-216

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

---

# Research in Library and Information Science : Historical Development and Current Trends

ANIL KANT SAHU

M.Lib.I.Sc, UGC-NET, Central University Gold Medalist

Librarian (Guest), Government M.M.R Post Graduate College, Chhattisgarh

---

## Abstract :

Research can be defined as a systematic and organized effort to gather relevant data on a chosen subject using scientific approaches. It drives advancement within any professional domain. This study deals with research activities in Library and Information Science (LIS) within the Indian context. It also examines the historical growth and transformations in the discipline, while highlighting emerging research patterns influenced by the integration of Information and Communication Technology (ICT) in libraries and related areas. The discussion also identifies potential avenues for future investigations across diverse LIS subfields.

## Keywords :

Research in LIS, University Libraries, LIS Historical Development, Library Studies, Trends in LIS.

## Introduction :

Library and Information Science has evolved significantly over the past century. Proper training for information professionals remains crucial for the efficient operation of libraries and knowledge centers nationwide. The adoption of computers and automated systems has transformed routine library tasks such as acquisition, cataloging, and circulation. In this evolving environment, LIS offers substantial opportunities for scholarly inquiry, particularly in the realm of professional education.

Research plays a vital role in expanding knowledge and fostering societal development. It involves progressing from established facts to unexplored territories. The process typically includes identifying and refining problems, developing hypotheses or potential solutions, gathering and analyzing

data, drawing inferences, and validating outcomes against initial assumptions.

**A study in this field may aim the following objectives :**

1. Generating fresh insights from existing datasets;
2. Re-evaluating prior findings using updated information;
3. Deriving additional conclusions from the same data pool;
4. Proposing novel concepts or frameworks;
5. Addressing inconsistencies or gaps in current knowledge;
6. Advancing the discipline through systematic and logical methodologies.

**Literature Review :**

- The Advanced Learner's Dictionary describes it as a thorough examination or probe, particularly aimed at uncovering new information across fields of learning.
- Slesinger and Stephenson characterize it as the strategic handling of objects, ideas, or symbols to broaden, refine, or confirm understanding, whether for theoretical building or practical application.
- Hillway views it as an intensive inquiry process that scrutinizes all available evidence related to a clear issue to arrive at a resolution.
- According to Dr. S. R. Ranganathan, research entails a rigorous and comprehensive exploration to identify new facts, reinterpret them alongside established theories, and apply the resulting insights to real-world scenarios.

**Need of Research in Library and Information Science :**

While research in core scientific and technological areas has long been well-established, the need for systematic study in LIS emerged later. The creation of dedicated LIS departments in universities, combined with shifting social and informational landscapes, highlighted this requirement.

Consequently, universities began conducting extensive research. The surge in published materials, expansion of education, and growing research activities generated numerous challenges for librarians, document lists, and information specialists, prompting investigative efforts to resolve them.

National and global computer networks further emphasized the demand for skilled professionals adept in ICT. Additional pressures, including information overload, rising costs of materials, staffing expenses, and resource limitations, continue to necessitate research. Such work enables libraries to deliver enhanced user services and operate more effectively overall.

## **Historical Development of LIS Research: National and Global Perspectives :**

- The recognition of the need for in-depth analysis of library philosophies led to the launch of a Ph.D. program at the University of Chicago's Library School in 1928. This institution awarded the initial batch of doctoral degrees in the field.
- Between 1930 and 1959, around 129 dissertations were submitted in the United States, with a significant portion from Chicago.
- In India, Dr. S. R. Ranganathan elevated librarianship to a scientific level through his Five Laws of Library Science (1931), along with works like the Colon Classification (1933) and Prolegomena to Library Classification. Survey-based methods were widely employed from the 1930s to 1950s.
- Key contributions included Bradford's Law of Scattering (1948), which laid foundations for bibliometric analysis, and Shannon and Weaver's "Mathematical Theory of Communication" (1949).
- The Documentation Research and Training Centre (DRTC) were established in Bangalore in 1962 under Ranganathan influence. Subsequent milestones involved large-scale online services in the 1970s, the publication of AACR-II in 1978, the English edition of UDC in 1985, and early expert systems developed at the University of California in 1987. In the 1990s, the United States advanced digital library initiatives, including the National Digital Library Project by the Library of Congress.

## **LIS Research in India :**

- LIS research in India has deeper foundations than often acknowledged, largely due to Ranganathan foundational principles, which he categorized into normative principles, laws, canons, and postulates.
- The proliferation of library schools during the 1970s and 1980s encouraged students to engage in research as part of their Master's programs.
- Recommendations from the Sen. Committee to the UGC made doctoral qualifications essential for senior academic roles, spurring a significant rise in Ph.D. awards in LIS during the 1980s and 1990s.

## **Subject-wise Analysis of LIS Research :**

Recent analyses of doctoral theses in LIS based on all repositories and bibliometric reviews covering periods from the late and beyond reveal shifting priorities. Traditional areas like public libraries and classification have declined in prominence, while technology-driven and user-focused topics have gained traction.

The table below presents an updated subject-wise distribution in descending order, reflecting contemporary patterns observed in various studies :

S.No.	Subject Wise Analysis of LIS Topics	Approximate Number of Studies
1.	Information and Computer Technology Applications	179
2.	Library Management and Administration	104
3.	Bibliometrics/Scientometrics/Webometrics and Library Statistics with Informatics	96
4.	Library and Society / Historical Aspects	84
5.	Digital with Virtual Libraries and Digital Environments	58
6.	E-Resources and Electronic Services	52
7.	Networks, Consortia, and Resource Sharing	46
8.	Information Systems Analysis and Design	40
9.	Knowledge Management and Information Economics	38
10.	Information Seeking Behavior and User Studies	36
11.	Information Literacy and User Education	30
12.	Cataloging, Classification, and Resource Description	25

A decade earlier, public libraries and classification dominated, but the past 10–15 years have seen greater emphasis on information management, user-centric studies, bibliometric analyses, and digital innovations.

#### **Factors Contributing to the slow growth of LIS Research in India :**

- Conventional teaching approaches and limited emphasis on research skills;
- Insufficient research background among faculty and practicing librarians;
- Gaps in understanding research methodologies;
- Overburdened faculty with heavy teaching loads and limited staffing;
- Shortage of experienced research guides;
- Historical recruitment of less motivated individuals into the profession;
- Limited funding and inadequate library infrastructure;
- Scarcity of reliable datasets;
- Students often entering from non-research-oriented academic streams;
- Lack of rewards for doctoral achievements;
- Difficulty in pinpointing priority research topics.

## **Emerging Trends in LIS Research :**

Developing nations like India face numerous areas ripe for investigation amid rapid technological shifts. Prominent contemporary directions include :-

- Integration of Web 2.0/3.0 technologies, Library 2.0/3.0 concepts, social media, blogging, and networking tools (including RSS and Mashup);
- Change management and process reengineering in library operations and services;
- Expert systems, advanced information retrieval, and ICT applications;
- Metadata standards, harvesting techniques, and protocols like Z39.50 in digital repositories and library software;
- Semantic Web developments;
- Technologies such as barcode, RFID, smart cards, and ICT for library operations;
- Information literacy programs, Right to Information (RTI), e-governance, and search engine optimization;
- Copyright and intellectual property challenges in digital contexts;
- Adoption and management of open-source software;
- Data mining, big data analytics, data warehousing, and visualization;
- Assessment of information needs, seeking behaviors, and community-oriented services;
- Bibliometric, webometric, and altmetric studies;
- Library consortia for managing electronic resources;
- User education in technology-rich environments;
- Human resource development, total quality management, and resource sharing across academic, research, and public libraries;
- Reading habits and usage patterns for both print and digital materials;
- Services for distance education users;
- Knowledge management practices;
- Institutional repositories, digital/virtual libraries, and long-term digital preservation (including manuscripts).

Additional modern foci drawn from recent global and Indian trends encompass artificial intelligence (AI) and machine learning for personalized services, open access initiatives, augmented/virtual reality applications, cloud computing, and ethical considerations around data and AI in libraries.

## **Conclusion :**

Research is an ongoing endeavor that must align with the practical needs of the LIS profession. The information explosion and continuous advancements in ICT have introduced innovations such as

digital libraries, virtual environments, e-databases, and electronic journals.

These developments create abundant opportunities for diverse research projects. New concepts and methodologies emerge through sustained inquiry, further expanding the horizons of LIS.

By leveraging ICT advancements, the field continues to generate fresh ideas, ultimately broadening the scope for meaningful contributions.

### References :

- Best, J. W., & Kahn, J. V. (2016). *Research in Education*. New Delhi: Prentice Hall of India.
- Busha, C. H., & Harter, S. P. (1980). *Research Methods in Librarianship: Techniques and Interpretation*. New York: Academic Press.
- Kothari, C. R. (2004). *Research Methodology: Methods and Techniques* (2nd ed.). New Delhi: New Age International.
- Kumar, K. (1992). *Research Methods in Library and Information Science*. New Delhi: Har-Anand Publications.
- Singh, S. P., & Babbar, P. (2014). *Doctoral Research in Library and Information Science in India: Trends and Issues*. *DESIDOC Journal of Library & Information Technology*.
- Verma, R. R. (2025). *Thematic Analysis of Doctoral Theses in LIS; and various repositories based bibliometric studies*.
- Kumar, P. (Relevant editions). *Research Methods and Statistical Techniques / Students Manual of Library and Information Science*. Delhi: B. R. Publishing Corporation.
- Paul, S. (2023). *Research Trends in Library and Information Science through Doctoral Theses*.

[anilkantsahu@gmail.com](mailto:anilkantsahu@gmail.com)



**संगम** Impact Factor : 7.834

Website :  
www.ginajournal.com

ISSN : 2321-8037  
**SANGAM**

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक-बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक  
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTILANGUAGE  
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Vol. 14, Issue 3-4  
पृष्ठ : 217-226

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

## समकालीन कहानियों में भूमंडलोत्तर जीवन यथार्थ (कैलाश वानखेड़े, नीलाक्षी सिंह, कैलाश वनवासी की कहानियों के सन्दर्भ में)

अजय सिंह रावत, शोधार्थी,

प्रो. संजीव कुमार दुबे,

हिन्दी अध्ययन विभाग, भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संकाय,  
गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कुंदेला, वड़ोदरा, गुजरात, भारत।

### शोध सार -

90 के दशक के बाद की समकालीन हिन्दी कहानी भूमंडलोत्तर परिदृश्य का विस्तार लिए हुए है। समकालीन कहानी ने समय के अनुसार अपने स्वरूप को 'ग्राह्य' एवं 'विस्तारित' बनाया है। कह सकते हैं कि समकालीन कहानी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अपने 'समकाल' का ही प्रतिबिम्ब है। समकालीन कथाकारों ने बाजार के बढ़ते हस्तक्षेप, विज्ञापन, मीडिया, सांप्रदायिकता, भूमंडलीकरण, किसानों की त्रासदी, स्त्री जीवन का वर्तमान स्वरूप, दलितों की पीड़ा, आदिवासी जीवन की अभिव्यक्ति, कर्ज की समस्या, आत्महत्या, भ्रष्टाचार का बदलते स्वरूप, मनुष्यों के विस्थापन, पारंपरिक आजीविकाओं के उन्मूलन, विकास के नाम पर अधिग्रहण, बेदखली, राजनीति के बदलते स्वरूप, बदलते मानवीय मूल्यों, बाजार का पर्यावरण पर पड़ते प्रभाव, बाल-यौन शोषण, शिक्षा व्यवस्था के बदलते परिदृश्य, प्रकृति एवं पर्यावरण के विनाश, असमान और असंतुलित विकास से पैदा हुए हालातों में छटपटाते जीवन आदि की मार्मिक अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की है।

**बीज शब्द** : जीवन यथार्थ, 90 के बाद की समकालीन कहानी, दलित जीवन यथार्थ, स्त्री जीवन यथार्थ, आदिवासी जीवन यथार्थ, अल्पसंख्यक जीवन यथार्थ, मीडिया, किसान जीवन यथार्थ, भूमंडलोत्तर कहानी, भूमंडलीकरण।

### मूल आलेख :

'समकालीन शब्द की समझ' और 'समकालीन कहानी के नामकरण' के सन्दर्भ में देखें तो मधुरेश का यह कथन बेहद महत्वपूर्ण हो जाता है— "समकालीन होने का अर्थ सिर्फ समय के बीच होने से नहीं है। समकालीन होने का अर्थ है समय के वैचारिक और रचनात्मक दबावों को झेलते हुए, उनसे उत्पन्न तनावों और टकराहटों के बीच अपनी सर्जनशीलता द्वारा अपने होने को प्रमाणित करना। समकालीन लेखक की पहचान यही हो सकती है कि अपने समय के सवालों के प्रति वह किस तरह प्रतिक्रिया करता है और अपने लेखन में उन सवालों के लिए जो जगह वह निर्धारित करता है, उन सवालों के प्रति वह किस तरह प्रतिक्रिया करता है और अपने लेखन में उन सवालों के लिए जो जगह वह निर्धारित करता है, उन सवालों के प्रति वह कितना गंभीर है, कहीं न कहीं

सबसे ही उसकी समकालीनता सुनिश्चित होती है।" कहा जा सकता है कि समकालीन शब्द की महत्ता 'किसी समय विशेष' से अधिक 'रचना की प्रवृत्ति विशेष' से कही जा सकती है। 90 के दशक के बाद के 'भूमंडलोत्तर समकालीन कहानी' के परिदृश्य को स्पष्ट करते हुए प्रो. संजीव कुमार दुबे लिखते हैं कि "बीसवीं सदी में प्रेम, प्रतिरोध और इतिहास बोध की पगडंडी से शुरू हुई कहानी की यात्रा, इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक के चौदह मार्गी द्रुत महामार्गों के दौर में भी हाशिए के स्वप्न और सौंदर्य को उकेरती हुई प्रतिपक्ष की पक्षधरता में संलग्न है। हिन्दी कहानी का वर्तमान दौर विगत चार दशकों से सक्रिय प्रतिष्ठित कहानीकारों के साथ नई सदी में लेखन की शुरुआत करने वाले संभावनाशील युवा कथाकारों से समृद्ध है। रोचक है कि हिन्दी कहानी के इतने लंबे दौर के नामकरण का कोई प्रयास सर्वमान्य एवं ग्राह्य नहीं हुआ है। इस असफलता के पीछे कहानी आलोचना की विफलता से अधिक उसकी विविधता और बहुआयामिता भी है। इस पूरे दौर को 'समकालीन कहानी' के अंतर्गत समेटने के प्रयास अधिक हुए हैं, जबकि यह नामकरण सत्तर के दशक की कहानियों के लिए किया गया था।

कोई भी साहित्यिक कृति प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से अपने समकाल का ही प्रतिबिंब होती है। जब कालांकन ही कला की कसौटी बन जाए तो उसे "समकालीन" कहना लाजिमी हो जाता है।" भूमंडलोत्तर शब्द 90 के बाद से लेकर आज की कहानी के लिए प्रयुक्त किये जाने वाला शब्द है। भूमंडलोत्तर शब्द को देखें तो इसका सर्वप्रथम प्रयोग आलोचक राकेश बिहारी ने पुस्तक 'केंद्र में कहानी' में किया था। उनके अनुसार "भूमंडलीकरण जो एक राजनैतिक-आर्थिक एजेंडे के रूप में चरणबद्ध तरीके से लागू किया जा रहा है, के बाद की कालावधि को अभिव्यक्त करने के लिए मैंने यहाँ भूमंडलोत्तर शब्द का प्रयोग किया है। हो सकता है कुछ विद्वान् आलोचकों को इस शब्द के प्रयोग पर आपत्ति हो, लेकिन भूमंडलीकरणोत्तर के रुखड़ेपन के मुकाबले भूमंडलोत्तर की लयात्मकता मुझे ज्यादा आकर्षित करती है और फिर समयबोधक होने के नाते इसमें भूमंडलीकरण के प्रति व्याप्त आकर्षण और उसके प्रतिरोध दोनों को एक साथ समायोजित किया जा सकता है।" राकेश बिहारी 'शब्द हमेशा व्याकरण की कोख से ही पैदा नहीं होते' में लिखते हैं "जहाँ तक 'भूमंडलोत्तर' शब्द में भूमंडलीकरण के उत्तरार्ध 'करण' के मुख्य कारण हैं— एक भूमंडल शब्द में भूमंडलीकरण के उत्तरार्ध 'करण' के भाव-लोप का, दूसरा-अंग्रेजी के 'पोस्ट' का हिंदी अनुवाद 'उत्तर' के प्रचलित अर्थ के बाद के हवाले से भूमंडलीकरण के दौर के समाप्त न होने के भाव-बोध का। 'आधुनिकोत्तर', 'उत्तर आधुनिक', छायावादोत्तर' या 'उत्तर छायावाद' जैसे शब्दों/पदों के उदाहरण इन्हीं सन्दर्भों में दिए जाते हैं। नए शब्द, पद या शब्द-युग्म के निर्माण की प्रक्रिया पर बात करते हुए इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि शब्दों की संधि के क्रम में किसी पद का विलोप होना नई बात नहीं है।

इस तरह के पद-विलोपों को स्वीकार कर न जाने कितने शब्दों को उनके प्रयोज्य अर्थ के साथ स्वीकृति मिलती रही है। यहाँ 'स्वातंत्र्योत्तर' शब्द का सन्दर्भ लिया जाना चाहिए जिसका प्रयोग 'स्वतंत्रता के बाद' नहीं 'स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद' के समय का अर्थ सम्प्रेषित करने के लिए किया जाता है। कहने की जरूरत नहीं कि 'स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद' के अर्थ में स्वातंत्र्योत्तर शब्द की स्वीकार्यता भाषा या व्याकरण के बने बनाए या कि रटे-रटाये नियमों से नहीं बल्कि आम बोलचाल में उसके प्रयोज्य अर्थ के स्वीकृति-बोध से मिली है। इसलिए यदि स्वातंत्र्योत्तर का अर्थ स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हो सकता है तो भूमंडलोत्तर का अर्थ भूमंडलीकरण की शुरुआत का कालखंड क्यों नहीं हो सकता? 'भूमंडलीकरण की शुरुआत के बाद' की कालावधि को अभिव्यक्त करने के

लिए एक निश्चित शब्द खोजते हुए मेरे जेहन में 'भूमंडलीकरणोत्तर' भी आया था लेकिन उसके रुखड़ेपन के मुकाबले 'भूमंडलोत्तर' की संक्षिप्तता और लयात्मकता मुझे ज्यादा पसंद आई और 'स्वातंत्र्योत्तर' के उदाहरण में मुझे इसका प्रयोग करने के लिए जरूरी आत्मविश्वास भी दिया। यहाँ यह बात स्पष्ट होती है कि भूमंडलोत्तर से तात्पर्य, भारत में 1991 ई. में हुए उस परिघटना, जिसे भारत का भूमंडलीकरण कहा जाता है, के बाद के कालावधि से है।

कैलाश वानखेड़े कस्बाई एवं ग्रामीण जीवन यथार्थ को अपनी रचनाओं में दर्ज करते हैं। वे दलित जीवन यथार्थ के अध्ययन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण कहानीकार हैं। उनका 'सत्यापन' कहानी संग्रह इसी यथार्थ से भरा हुआ है। 1990 में 'मण्डल कमीशन' लागू होने के बाद जातिगत भेदभाव का स्वरूप कैसे बदला है यह इस संग्रह में देखने को मिलता है। इस संग्रह की 'महू' कहानी, महू जो कि (मध्यप्रदेश) डॉ. बाबा साहेब भीमराव आम्बेडकर की जन्मस्थली है जिसका नाम अब 'डॉ. अम्बेडकर नगर' है। महू कहानी उच्च शैक्षणिक संस्थाओं में पढ़ रही प्रज्ञा और उसके जैसे कई छात्र-छात्राओं की कहानी को दर्शाती है। उनके लिए कोटे वाला और शुद्ध जैसे शब्द का इस्तेमाल किया जाता है। जातिगत भेदभाव किया जाता है। रागिनी शोषण करने वाली पात्र है जो प्रज्ञा, मुक्ता, संघमित्रा जैसी छात्राओं का मानसिक शोषण करती है।

कहानी में नरेश नाम का पात्र है जो प्रज्ञा का करीबी दोस्त है। प्रज्ञा कई दिन से कॉलेज नहीं आ रही है तो नरेश अपने दोस्तों राहुल, संजय के साथ रागिनी के घर जाता है। वह हाल-चाल पूछने आया होता है पर घर की हालत देख वह ज्यादा कुछ नहीं कह पाता है। प्रज्ञा नरेश को बताती है कि यह शोषण करने वाली मानसिकता हर जगह है। वह उच्च शैक्षणिक संस्थानों में जाति के आधार पर हो रही आत्महत्याओं पर भी सवाल नरेश के समक्ष उठाती है। कहानी का अंत इस शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ प्रज्ञा और नरेश के प्रतिरोधी स्वरो से होता है। इसी संग्रह की 'स्कॉलरशिप' कहानी ऐसे विधार्थी की कहानी है जिसका स्कूल में जातिगत शोषण हुआ है। उसके मोहल्ले के बच्चों जैसे रमेश, प्रभाकर से स्कूल में झाड़ू लगवाई जाती थी। उन्हें 'नाली का कीड़ा' कहकर संबोधित किया जाता था। वहीं सत्येन्द्र को सिर्फ पढ़ने का काम दिया जाता था। रमेश ने जब झाड़ू सत्येन्द्र को लगाने के लिए कहा तो पाठक सर ने उसे बहुत पीटाघ पिटाई के डर से नायक तथा उसके मोहल्ले के बच्चे कई दिन तक स्कूल नहीं गए थे। कहानी का नायक जब अपने स्कूल में कॉलेज स्कॉलरशिप आवेदन के लिए जाति सत्यापन करवाने जाता है तो देखता है कि उसका तथा उसके मोहल्ले वाले बच्चों के नाम के पीछे जाति को काली स्याही से काट दिया गया है। उसे अध्यापक प्रधान पाठक का काली स्याही वाला पेन याद आया और रमेश की बेहोशी भी। अध्यापक द्वारा प्रमाण-पत्र देने से मना कर दिया जाता है। संग्रह की 'कितने बुश कित्ते मनु' कहानी में अमरीकी राष्ट्रपति बुश और मनु शोषणकारी व्यवस्था का प्रतीक हैं। कहानी का नायक कमल है। वह सरकारी दफ्तर में चपरासी की नौकरी करता है। दफ्तर में शर्मा बाबू, श्रीवास्तव बाबू, जोशी बाबू जाति के आधार पर कमल का शोषण करते हैं। कमल दफ्तर में इकलौता व्यक्ति है जिसे कंप्यूटर चलाना आता है। वह आँकड़ा संग्रहण तथा गाँव को लेकर कई योजनाओं का काम कंप्यूटर में ही करता है। कोई भी बाबू इसमें उसका साथ नहीं देता। बाबू लोग साथ दें तो छः महीने का काम एक महीने में हो जाए। एक दिन इसी कार्य को करते-करते, शर्मा जी के ताने सुनते-सुनते उसे दफ्तर में चक्कर आ जाता है। कमल की पत्नी कल्पना उसे अस्पताल में सहारा देती है। वह अपनी माँ की तरह अस्पताल में नहीं मरना चाहता है। घर आने पर कमल

को लगता है कि जैसे चिडचिडा घर उसके आने पर उससे सवाल पूछ रहा हो, उसे अपराधी मान रहा हो। दफ्तर में उसका मन कंप्यूटरीकरण में इसीलिए लगा रहता था। वह घर से डरता थाघ पिता को साल पहले पैरालिसिस का अटैक आया था। तब पिता चाहते थे कि उन्हें प्राइवेट अस्पताल में भर्ती कर दिया जाए। वह पिता जिसने जीवन भर नौकरी नहीं की। माँ की कमाई पर ऐश की। माँ ने बेटियों को पढ़ाया लिखाया इस डर से कि उन्हें ऐसा नाकारा पति न मिल जाए। फिर अपनी मृत्यु के भय से जल्दी-जल्दी उनकी शादी कर दी। फलस्वरूप कमल के लिए छूट गया कर्जा। कमल माँ की मृत्यु से मिली अनुकंपा नियुक्ति पर कार्यरत था। आंकड़े को इकट्ठा करने का जूनून ही उसे जिंदा होने का एहसास देता था। लेकिन जब कमल का सारा काम बीडीओ मंत्री के आने पर अपना बताता है तो उसे गुस्सा आ जाता है। बीडीओ मंत्री से कंप्यूटर ऑपरेटर की भी माँग करता है।

इसी बीच बेटा सौम्या की तबीयत भी बिगड़ जाती है। कमल को बिना कारण अनुपस्थिति में बीडीओ से डांट पड़ती है। जातिगत टिप्पणियों की जाती है। दफ्तर से बाहर जब वह चाय पीने गया तो उसने अखबार में सम्पादक के नाम पत्र का कोना पढ़ा। "नागपुर के पास खैरलांजी गाँव में चार दलितों की हत्याघ"..." वहीं महिला बाल विकास विभाग के गबूलाल भी बैठे हैं। कमल घटना की चर्चा चाय बनाने वाले दयालु से करता है और प्रियंका का अपराध पूछता है। दयालु भी उससे उसका अपराध पूछता है जिसके लिए उसे दफ्तर में इतना परेशान किया जाता है? कमल को खुद में प्रियंका नजर आने लगती है। कमल की चाय ठंडी हो जाती है। वह दयालु से दूसरी चाय बनाने को कहता है और थोड़ी देर में दफ्तर से आने को कहता है। "स्टोव, भभका छोड़कर आग पकड़ चुका। दयालु के चेहरे पर चमक आ गई। वह अदरक ढूँढने लगा, कूटकर चाय में डालने के लिये।" कहानी का अंत शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ प्रतिरोध से होता है।

संग्रह की 'खापा' कहानी भी 90 के दशक के बाद की दलित चेतना से युक्त है। फसल काटने के बाद पौधे का नुकीला हिस्सा जो खेत में रह जाता है उसे खापा कहते हैं। कहानी अमराई और उसके निकट के कस्बे की है। यहाँ बहुत सारे आम होते हैं। कहानी का नायक समर है उसे अपने बच्चों के लिए आम खरीदने हैं। 20 रुपये होने के कारण वह 1 किलो आम ही खरीद पाता है। ठेलेवाला उधार ले जाने को कहता है पर समर उधार नहीं लेता। आंगनबाड़ी कार्यकर्ता के कहने पर समर अपने बेटे तेजस का दाखिला निजी स्कूल में कराने की सोचता है। आंगनबाड़ी कार्यकर्ता यह भी बताती हैं कि "नये कानून के कारण पढाई का खर्चा सरकार उठायेगी।" समर और तेजस साईकिल पर प्राइवेट स्कूल की तरफ चलते हैं। जाते हुए तेजस आम तोड़ने की जिद्द करता है। स्कूल में मैडम फ्री में पढ़ने वाली बात पर गुस्सा करती है। मना करती है। जातिगत टिप्पणियाँ करती है। समर और तेजस वापस घर जाते हैं। अमराई के पास, रास्ते में बकरी दिखती है तो तेजस चिल्लाता है पापा बकरी, बकरी पापा। समर हकबका जाता है। पापा और बकरी में वह भेद नहीं कर पाता। समर बूढ़े व्यक्ति से पूछता है कि "इतने सारे आम कैसे तोड़ते हो?" आम बेचने वाला बूढ़ा, आम तोड़ने का रास्ता समर को बताता है। वह हेकड़ी दिखाता है आम तोड़ने वाली। समर स्कूल को आम और आम को स्कूल समझने लगता है। वह सोचता है क्या हेकड़ी ही रास्ता है? वह तेजस को कंधों पर उठाकर आम तोड़ने के लिए कहता है। आम को निकट से देखने और छूने के बाद तेजस तोड़ने से मना कर देता है। बूढ़ा बताता है कि दो-चार दिन में सब आम टपक जायेंगे। मौसम आम को रहने नहीं देगाघ तेजस का ध्यान फिर बकरी पर चला जाता है और वह पापा से बकरी घर ले जाने की जिद्द करता है। समर बकरी या पापा में से एक को चुनने के लिए कहता है।

तेजस शांत हो जाता है। कहानी प्रतिरोध की चेतना के साथ खत्म होती है।

संग्रह की 'घण्टी' कहानी सरकारी दफ्तर में काम कर रहे काका उर्फ मांगीलाल जी चौहान की है। काका 26 जनवरी के झंडे में गांठ बांधने के माहिर हैं। वे दफ्तर के चपरासी हैं। बड़े बाबू के बंगले पर काम करने के प्रस्ताव को काका ने मना कर दिया। काका ऑफिस का काम 9 से शाम 6-7 बजे तक करने के लिए तैयार थे लेकिन बंगले का दो घंटे का झाड़ू-पौछा लगाने वाला और फिर आराम वाला काम नहीं। बड़े बाबू और मिश्राजी लगातार काका के काम में गलतियों को ढूँढने का प्रयास करते लेकिन असफल रहते। रामनाथ, झगडिया भी काका के साथ काम करते थे। मिश्राजी को प्यास लगती तो रामनाथ उन्हें पानी पिलाता, ड्यूटी करता था। अहिरवार बाबूजी, काम्बले दलित चेतना से युक्त पात्र हैं। वे काका को समझाते हैं कि "काका, सारे दफ्तर के लोग पानी पीते हैं तुम्हारा भरा हुआ, लेकिन तुम्हारे साहब और बड़े बाबू क्यों नहीं पीते?" इसी बात पर काका मिश्राजी के लिए पानी का गिलास ले जाते हैं तो मिश्राजी उसे फेंक देते हैं। गिलास टूट जाता है। इस घटना के बाद काका बीमार पड़ जाते हैं। छुट्टी के आवेदन को काका की पत्नी लेकर जाती है तो साहब लेने से मना कर देते हैं, डपट देते हैं। काका अपने लड़के को दफ्तर भेजते हैं। उनका लड़का सैकंड क्लास अफसर है। पीछे-पीछे काका भी दफ्तर चले आते हैं। मिश्राजी आवेदन लेने से मना कर देते हैं और बेटे के साथ बदतमीजी से बात करते हैं। इस पर काका मिश्राजी को चांटा मार देते हैं। कहानी दलित जीवन यथार्थ एवं उससे उठते प्रतिरोध को प्रस्तुत करती है। संग्रह की 'सत्यापित' कहानी ऐसे व्यक्ति की कहानी है जिसे सरकारी कागजों पर सत्यापन की आवश्यकता है। वह सत्यापन कराने के लिए इस ऑफिस से उस ऑफिस भटक रहा है। उसे भाऊ साहेब इंगले नाम का व्यक्ति मिलता है। वह अपनी पत्नी की डिलीवरी पर अस्पताल में मिलने वाले सरकारी पैसे के कागज पर दस्तखत करवाने आया है। वह अपने गाँव का नाम बौद्धवाडा बताता है लेकिन नर्स और क्लर्क इस नाम के गाँव को पहचानने से इंकार कर देते हैं। "सब जानते हैं डॉ. अम्बेडकर के धर्मांतरण के बाद महारवाडे को बौद्धवाडा कहा जाता है। जानने के बाद भी कि बौद्धवाडा है, फिर भी उसके अस्तित्व को लेकर उठाते हैं सवाल और उसे सत्यापित करते हैं।" सरकारी ऑफिस में जब बड़े साहब से नहीं मिलने दिया जाता तो भाऊ साहेब इंगले गुस्सा गए और लेखक मुस्कुराहट से अंदर जाने की माँग करने लगा। जातिगत भेदभाव को लेखक ने बड़ी मार्मिकता, प्रतिरोध के स्वर के साथ कहानी में उभारा है।

सत्यापन में संग्रहित 'तुम लोग' कहानी भूमंडलोत्तर गरीबी, जातिगत भेदभाव, सौन्दर्य-चेतना से युक्त कहानी है। घासपुरा गाँव के लोगों और कहानी के नायक की जिंदगी घासलेट और दिनचर्या के जरूरी समान जुटाने में ही बीत रही है। "हां, तमाम उम्र तिवारी के साथ गुजारने के बाद भी...। नहीं बदला कुछ भी, 1947 कहो या 2010।" कहानी अंतिम समय में बारिश के सौन्दर्य को गरीब लोगों की दृष्टि से देखती है जिनके लिए बारिश सौन्दर्य की घटना कम और आफत की घटना ज्यादा बन जाती है। "तिवारीजी, न तो मुझे सौन्दर्य दिखता है, न संगीत का सुर सुनाई देता है।...." तुम लोग शब्द यहाँ जातिसूचक है, गरीबीसूचक है यह नायक जानता है और नहीं भी। "तुम लोग, तुम लोग...." जब नायक धर्म, पूजा के बारे में सवाल उठाता है तो तिवारी जी को मिर्ची लगती है यह मिर्ची तले हुए भजिये में नहीं होती। नायक भजिये को खाता है। कहानी में नायक की पत्नी रत्नप्रभा गरीब परिवारों में स्त्री की दुर्गति पर प्रकाश डालती है।

भूमण्डलीकरण के बाद कई 'पारंपरिक आजीविकाओं के उन्मूलन' हुआ। डाक व्यवस्था कैसे सामान्य

जीवन से धीरे-धीरे गायब ही होने लगी है और जहाँ शिक्षा न के बराबर पहुँची हो वहाँ डाक का क्या काम तथा अर्थव्यवस्था खुलने से कृषि-सामग्री में पैदा हुए 'कॉम्पिटिश', 90 के दशक के बाद कृषकों को मुख्य समाज से हाशिए की तरफ धकेलना वर्तमान कृषक जीवन के हालातों इन सभी से साक्षात्कार 'सत्यापन' में शामिल 'अंतर्देशीय पत्र' कराती है। 'अंतर्देशीय पत्र' लेखक और उनके मामा को लिखे जाने वाले पत्र हैं। मध्यप्रदेश में लेखक और उसकी माँ रहते हैं जबकि महाराष्ट्र में उनके मामा। कहानी गली के पोस्टमैन से शुरू होती जो केवल लेखक के घर आता है क्योंकि गाँव के अन्य अनपढ़ों लोगों में पत्र व्यवहार कैसा? मामा और माँ के बीच पत्र लिखने वाला लेखक जीवन की कई समस्याओं को समझने, जानने लगा। वह कल्पना भी करता की उसके लिखे पत्र जाते कहाँ हैं? क्योंकि वे पत्र मात्र पत्र नहीं है, उनमें लेखक मौजूद है। कहानी देश और समाज के कटु यथार्थ को दर्शाती है "1848 में शूद्रों के पाठशाला खोली थी ज्योतिबा फुले ने। अब राज्य के सबसे बड़े महानगर की गली में निरक्षर हैं। बच्चे अनपढ़ हैं। ज्योतिबा, तुम्हारे इंतजार में है पूरी गली।" कहानी का अंतिम पत्र महाराष्ट्र में अनेक किसानों की पीड़ा, सच्चाई को व्यक्त करता है। "...यादों को बरसाती नाले का पानी बहाकर ले गया।.."

90 के बाद स्वास्थ्य क्षेत्र को आम-जन के लिए सुलभ बनाने की कोशिश की गई। लेकिन इसका उपयोग 'भ्रूण-हत्या' जैसी कुरीतियों के लिए किया जाने लगा। 'भ्रूण-हत्या' समाज का कटु सत्य है तथा स्त्रियों को लेकर भी समाज में शोषण एवं दुर्भावना देखी जाती है यह तब और बढ़ जाती है जब स्त्री शोषित जाति से सम्बन्ध रखती हो। इन्हीं दोनों समस्याओं पर नजर कैलाश वानखेड़े की कहानी 'उसका आना' डालती है। कहानी पात्र प्रकाश और सुधा पत्रिका में छपी कवियत्री की है। प्रकाश दुकान पर साईकिल रिपेयर, नयी साईकिल टाईट करने काम करता है। सेठ की दुकान पर सुधा समाचार पत्र भी आता है। प्रकाश उसमें छपी कविता को काटकर अपने पास रख लेता है। वहाँ सेठ की दुकान से पांच दुकान छोड़कर रोज की तरह मधुबन साड़ी सेंटर का मालिक आता है। उसने अपनी छवि समाज सेवक की बनाई हुई है। वह अखबार पढ़ता है और कटे हुए हिस्से को लेकर गुस्सैल लहजे में पूछताछ करता है। प्रकाश वह कटा हुआ हिस्सा दे देता है। मालिक कविता के पीछे वाले हिस्से को पढ़ता है। उसमें बांछड़ा युवती द्वारा कॉलेज में मोबाईल चोरी की खबर थी। पुलिस को संदेह था कि वह देह व्यापार का रैकेट चलाती है। इस खबर पर मालिक बांछड़ा युवती पर भले घर की लड़कियों से दोस्ती कर, धंधे में डालने का आरोप लगाता है। उसे भरा-बुला कहता है। प्रकाश बताता है कि उसने यह हिस्सा कविता के कारण फाड़ा है। बूढ़ा मालिक कवियत्री का नाम पढ़ता है। बूढ़े को बहू का नाम प्रकाश का सीने में रखना बुरा लगता है। वह उसे डांटता है। प्रकाश भी गुस्से भर लहजे में सफाई देता है। बूढ़ा बिन सर-पैर की बातें सोचने लगता है "सीने से लगाकर रखने पर ये प्रकाश कहीं मेरी बहू को बांछडी से जोड़कर वही कल्पना कर रहा हो, जो वह उस बांछडी के बारे में सोच रहा था।"

प्रकाश जिला प्रशासन के कन्या भ्रूण हत्या की कार्यशाला में आया है। वहीं उसे कवियत्री दिखती है। कवियत्री की अन्य लोगों से हो रही बातों से कहानी में ऐसा लगता है कि वह मधुबन साड़ी सेंटर के मालिक की ही बहू है। मंच पर से भ्रूण हत्या के खिलाफ भाषण दिए जा रहे हैं और प्रकाश आगे की पंक्ति में कवियत्री को देखता है तो उसे लगता है "भ्रूण अभी जिंदा है। साबुत है।"

नीलाक्षी सिंह की कहानियाँ भूमंडलोत्तर समकालीन समय को बेहद संजीदगी से दर्ज करती हैं। उनके

संग्रह 'जिनकी मुट्टियों में सुराख था' में संकलित 'स्वॉग' कंप्यूटर के विकास से पहले की कहानी है। कहानी का मुख्य पात्र स्वामी है। स्वामी नौजवान है वह नौकरी की तलाश में है। उसने खुद एक कंप्यूटर बनाया है। कहानी में बाजारवाद पर व्यंग्य है कि "अब चूँकि आई.बी.एम. के ताजातरीन आविष्कार ब्लू आईज की तरह स्वामी के कंप्यूटर का स्क्रीन सामने बैठे आदमी की मनोदशा के अनुकूल काम नहीं कर पाता—मसलन आदमी के मन में इधर इच्छा जागी नहीं कि कंप्यूटर बंद हो जाए और उधर कंप्यूटर खुद—ब—खुद बंद हो जाए... आदि—आदि, बल्कि स्वामी के कंप्यूटर स्क्रीन पर बार—डायग्राम और ग्राफ की शकल में और फिर अन्य संकेतों में चीजें उभरती थीं और स्वामी उन्हें सुलगाकर सरल वाक्यों में उनका अर्थ सामने रख देता था।" संग्रह की 'साया कोई' 90 के दशक के बाद के परिदृश्य में स्त्री शोषण से स्त्री चेतना तक के कदमों की कहानी है। कहानी में दो स्त्रियाँ हैं, दोनों स्त्रियों की एक—दूसरे से कोई दुश्मनी नहीं है लेकिन चुनाव की प्रतिस्पर्धा के कारण वे एक—दूसरे को दुश्मन की तरह देखने लगी है।

इसी संग्रह की 'आदमी, औरत और घर' कहानी में आदमी बहुत गुस्से वाला था। वह अपनी पत्नी पर गुस्सा और उसके साथ मार—पीट भी करता था। एक दिन उसे गिरकर चोट लग जाती है तब उसे पता चलता है कि वह औरत उसकी कितनी सेवा करती है। आदमी और औरत दोनों बूढ़े हो चुके हैं। वे दोनों आपस में प्यार करने के लिए जगह और समय ढूँढते हैं किंतु परिवार को इस उम्र में उनका प्यार स्वीकार नहीं होता। इस कारण आदमी फिर से गुस्सा और मार—पीट करता है जिससे कि वे दोनों एक ही कमरे में मिल सकें।

90 के दशक के बाद महानगरों में 'मध्यवर्गीय जीवन' पर गंभीर परिवर्तन हुआ है। इस वर्ग का स्त्री जीवन कैसे बाजार, विज्ञापन, उत्पादों से प्रभावित हुआ है। नीलाक्षी सिंह के कहानी संग्रह 'जिनकी मुट्टियों में सुराख था...' में संग्रहित 'ऐसा ही... कुछ भी' में देखा जा सकता है। कहानी मध्यवर्गीय परिवार में स्त्रियों की सेक्सुलिटी के स्वरूप को भी दर्शाती है। बाजार किस तरह से निम्नमध्यवर्गीय सामाज्य को प्रभावित कर रहा है यह कहानी में दिखलाया गया है। कहानी की मुख्य पात्र इवा कार्णिक है जो एक व्यक्ति से घर पर ट्यूशन पढ़ती है। वसुंधरा कार्णिक, इवा कार्णिक की माँ है। इवा कार्णिक सांवले रंग की है। इस कारण वह चेहरा साफ करने की क्रीम का इस्तेमाल करती है। देखते—देखते वसुंधरा कार्णिक भी उस क्रीम का इस्तेमाल करने लगती है। कहानी मनोवैज्ञानिकता एवं बाजार के प्रभावों को दिखाती है।

90 के दशक के बाद 'संसाधनों की आर्थिक दौड़' को प्राप्त करने के लिए 'लंबा पलायन' हुआ। जिससे बेरोजगारी की समस्या ने गंभीर विद्रूपता ले ली। उसी के यथार्थ को प्रकट करती है नीलाक्षी सिंह की 'सूत्र' कहानी। यह डिसूजा और एक व्यक्ति की कहानी है। जो बेरोजगारी से परेशान है, लोग उसे चिढ़ाते हैं। मिस डिसूजा उसे वह घटना पूछती है जिससे वह आखिरी बार खुश हुआ हो और वहीं जिंदगी का सार ढूँढने को कहती है। बेरोजगारी से उखड़ा यह बेरूखापन आर्थिक जीवन की गंभीर हकीकत के रूप में सामने आकर उभरता है।

भूमंडलोत्तर जीवन में प्रेम—मूल्यों में कैसे बदलाव आया है। यह इसी संग्रह की 'आदमी, औरत और घर' कहानी दिखलाती है। आदमी बहुत गुस्से वाला था। वह अपनी पत्नी पर गुस्सा और उसके साथ मार—पीट भी करता था। एक दिन उसे गिरकर चोट लग जाती है तब उसे पता चलता है कि वह औरत उसकी कितनी सेवा करती है। आदमी और औरत दोनों बूढ़े हो चुके हैं। वे दोनों आपस में प्यार करने के लिए जगह और समय ढूँढते

हैं किंतु परिवार को इस उम्र में उनका प्यार स्वीकार नहीं होता। इस कारण आदमी फिर से गुस्सा और मार-पीट करता है जिससे कि वे दोनों एक ही कमरे में मिल सकें। नीलाक्षी सिंह की 'जिनकी मुट्टियों में सुराख था...' कहानी संग्रह की 'जिनकी मुट्टियों में सुराख था...' कहानी दो लोगों की है। पुरुष अखबार में चुटकिले लिखकर दिनचर्या का खर्चा चलाता है। वहीं कहानी में एक और लड़की है जो सालसा नृतिका है। दोनों अपनी जिंदगी की भागदौड़ और द्वंद से परेशान होकर रेलवे स्टेशन की एक बेंच पर मिलते हैं। इस तरह कहानी 90 के दशक के बाद आई आधुनिकता और भागदौड़ में व्यक्तियों की मरती हुई संवेदना पर प्रकाश डालती है।

कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' में शामिल कहानी 'आखिर इस दर्द की दवा क्या है'। आधुनिक समय में अनावश्यक वस्तुओं की माँग पर लिखी गयी है। स्कूल पढ़ने के लिए भी अब खर्चा बढ़ गया है। एक-दूसरे की हैसियत की स्कूल में भी बराबरी की जा रही है। आर.पी. शर्मा शासकीय स्कूल से प्राचार्य होने के बावजूद शहर में अपनी बेटी का खर्च वहन करने में असमर्थ महसूस नजर आते हैं। इसी संग्रह में दर्ज 'मुहब्बत जिंदाबाद!' कहानी मीडिया और उसके द्वारा खबरों की एवज में पैसे लेने की कहानी है। भ्रष्टाचार की कहानी है। कॉलेज में एक ऊंचे घराने की प्रेम जोड़े की खबर जब अखबार में छपती है तो वे दोनों सम्पादक विक्रम से संपर्क करते हैं। विक्रम उनसे खबर को दबाने और आगे से न छापने की एवज में पैसे मांगता है। वे दोनों बताते हैं कि उन्होंने अपने-अपने परिवारों के खिलाफ जाकर ये शादी की है और अभी उनके पास इतने पैसे नहीं हैं। 'वे जो देख रहे हैं।' इसी संग्रह की कहानी है। यह एम.एल.एम. (मल्टी लेवल मार्केटिंग) कंपनियों पर लिखी गयी कहानी है। लेखक का दोस्त दिनेश उसे सुनील से अपने घर पर मिलवाता है। कई लोगों को करोड़पति बनने का झूठा प्लान दिखाया जाता है।

इसी कहानी संग्रह की 'सुराख' कहानी समाज में फैल रही साम्प्रदायिक असहिष्णुता से उत्पन्न अफवाहों की कहानी है। एक लड़का जिसे रानीगंज जाना था वह गलती से ठीक इसी नाम की गलत जगह पर चला गया। वहाँ उसकी मदद सलीमुद्दीन कुरैशी ने की।

कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' की 'रेलगाड़ी में रीछ' कहानी स्वामी, बाबाओं द्वारा धर्म को राजनीति से जोड़ देने की कहानी है। जहाँ एक तरफ स्वामी धर्म का राजनीतिकरण कर रहे हैं वहीं देश का बेरोजगार युवक सोया हुआ है। "स्वामी जी कह रहे....मैं उसे जगाने लगा।" इस प्रकार समकालीन कहानी भारतीय राजनीति के अच्छे-बुरे दोनों पक्षों को सफलतापूर्वक चित्रित करती है। इस समय नये विषय को लेकर लिखी जा रही कहानियों में वैश्विक अनुभूति को लेकर लिखी जा रही कहानियाँ महत्वपूर्ण है। उदाहरण के रूप में कृष्ण बिहारी की कहानी 'ब-बाय', शशिभूषण द्विवेदी की कहानी 'मोना डार्लिंग और जार्ज बुश' को देखा जा सकता है जिनमें 'ब-बाय' में एक तरफ जहाँ कोशोबो व फिलिस्तीन की समस्या है तो दूसरी तरफ कश्मीरी पंडितों के विस्थापन की भी समस्या है।

कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' में संग्रहित 'उनकी दुनिया' मंदबुद्धि बालकों, दिव्यांग बालकों के स्कूल पर लिखी गयी कहानी है। जहाँ दिव्या और उसके स्कूल से बच्चे प्रश्नावली तैयार करके सर्वेक्षण करने आए हैं। दिव्या को उनकी दुनिया और वहाँ के टीचर आकर्षित करते हैं जबकि बाकि बच्चों को वह जिंदगी बेकार, बोझिल सी लगती है। "साली... साहस नहीं था।" खतरे के निशान के ऊपर कहानी कॉलेज की रैगिंग और छात्रों के संघर्ष की कहानी है। कैसे पुराने छात्रों की रैगिंग सहते-सहते नए छात्र भी रैगिंग

और दादागिरी करने लगते हैं। कहानी व्यक्त करती है।

90 के दशक के बाद आए बदलावों को कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' में भी देखा जा सकता है। संग्रह में संकलित 'दृश्य कथा' संतोष नाम के व्यक्ति द्वारा घोड़े को चाकू से गोदकर मार दिए जाने की कहानी है। शंभू का घोड़ा और संतोष की घोड़ी आपस में संबंध बनाना चाहते थे। यही देखकर नशे में संतोष ने शंभू की घोड़ी पर चाकू से वार कर दिए। उसका मानना था कि वह घोड़ी उसके घर की लक्ष्मी है। इधर शम्भू ने थाने में रपट लिखवा दी। पुलिस केस से बचने के लिए संतोष की पत्नी अनीता घटना की कवरेज कर रहे संवादाता से नाजायज संबंध बनाने के लिए कहती है। इस प्रकार पति को बचाने के लिए अनिता को कई जगह अनैतिक संबंध बनाने पड़ते हैं। कहानी समाज में स्त्री की उस स्थिति को दिखाती है जहाँ उसका शोषण आम है।

90 के दशक के बाद बढ़ते बाजार ने 'पर्यावरण' के लिए नए संकट पैदा किए। कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' में संग्रहित 'इस समय चिड़ियों के बारे में' कहानी में चिड़िया शब्द दो अर्थों में भाव व्यंजित करता है। पहला प्राकृतिक चिड़ियाओं, पक्षियों के लिए तथा दूसरा अर्थ बाजार में दिवाली का सामान बेच रही कुम्हारियों, देहातिन विक्रेताओं के लिए हुआ है। जैसे प्रकृति से चिड़ियाँ गायब हो गयी है वैसे ही वे भी धीरे-धीरे बाजार से गायब हो जायेगी। बाजार के ठेकेदार के लोगों द्वारा कुम्हारियों, देहातिन विक्रेताओं से जबरदस्ती रशीद कटवाने से उन विक्रेताओं के चेहरे की चमक फीकी पड़ जाती है। क्योंकि वे भी दहशत के कारण चिड़ियों की तरह कहीं छिप गए हैं। इसी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' की 'जन गण' कहानी आतंकवादियों और सरकारी फौजों की तनातनी के बीच फंसे लोगों की कहानी है। कुछ लोग घुमने के लिए निकले हैं लेकिन आगे चक्काजाम के कारण वे लोग आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं। इसीलिए उनका ड्राईवर वापस होटल चला जाता है। कुछ लोग आगे जाने की मंशा से सीआरपीअफ की गाड़ी से मदद मांगते हैं। कहानी देश के लोगों के बदलते व्यवहार की तरफ गंभीर ईशारा करती है। इसी कहानी संग्रह की 'सुराख' कहानी समाज में फैल रही साम्प्रदायिक असहिष्णुता से उत्पन्न अफवाहों की कहानी है। एक लड़का जिसे रानीगंज जाना था वह गलती से ठीक इसी नाम की गलत जगह पर चला गया। वहाँ उसकी मदद सलीमुद्दीन कुरैशी ने की।

'उपभोक्तावादी संस्कृति में बढ़ाव' भूमंडलोत्तर जीवन यथार्थ का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसी से जुड़ी है 'कर्ज' की वर्तमान समस्या, ग्रामीण जीवन में 'कर्ज' पर कैलाश बनवासी के कहानी संग्रह 'पीले कागज की उजली इबारत' में संकलित 'झुका हुआ गाँव' कहानी बैंक द्वारा दिए गए लोन और उसकी वसूली करने गए अधिकारियों की कहानी है। गाँव के किसानों के पास ऋण के पैसे चुकाने को बिल्कुल भी पैसे नहीं है इसलिए वे शिविर में आते ही नहीं हैं। कहानी गाँवों, किसानों की खस्ता हालत की कहानी है। महानगरों में सपने पूरे करने की होड़ और बढ़ते खर्च में शिक्षा का गला कैसे घुटता है कैलाश बनवासी की कहानी स्पीड में दिखलाई पड़ता है। कहानी ऐसे लड़के की कहानी है जिसे भागदौड़ भरे शहर में अपनी पढाई अधूरी छोड़कर जानी पड़ती है। 'उसे गाँव से उसकी माँ ने कहा है कि वापिस आ जाओ। अब आगे का खर्चा हम वहन नहीं कर पायेंगे।' कहानी का दूसरा पक्ष ससुराल में स्त्री प्रताड़ना पर प्रकाश डालता है जहाँ उसकी बहन को उसकी पढाई के लिए पैसे दिए जाने से रोका जा रहा है। वहीं 'खतरे के निशान के ऊपर' कहानी कॉलेज की रैगिंग और छात्रों के संघर्ष की कहानी है। कैसे पुराने छात्रों की रैगिंग सहते-सहते और दादागिरी करने लगते हैं। कहानी व्यक्त करती है।

90 के दशक के बाद 'मीडिया' का हुआ 'निजीकरण' एवं उसके बदलते स्वरूप, बढ़ते भ्रष्टाचार पर संग्रह की 'मुहब्बत जिंदाबाद' कहानी प्रकाश डालती है। यह कहानी मीडिया और उसके द्वारा खबरों की एवज में पैसे लेने की कहानी है। भ्रष्टाचार की कहानी है। कॉलेज में एक ऊंचे घराने की प्रेम जोड़े की खबर जब अखबार में छपती है तो वे दोनों सम्पादक विक्रम से संपर्क करते हैं। विक्रम उनसे खबर को दबाने और आगे से न छापने की एवज में पैसे मांगता है। वे दोनों बताते हैं कि उन्होंने अपने-अपने परिवारों के खिलाफ जाकर ये शादी की है और अभी उनके पास इतने पैसे नहीं हैं। "आप हमारी...लड़का उसके पैर छू रहा है...।"

90 के बाद 'व्यवस्था-तंत्र में पनपा भ्रष्टाचार' भूमण्डलोत्तर जीवन का कटु यथार्थ है। 'पीले कागज की उजली इबारत कहानी' स्कूल में भ्रष्टाचार तंत्र की कहानी है। जहां लेखक जैसे शिक्षकों को आदर्शवादी, सिद्धांतवादी घोषित कर दिया जाता है और रजनीश पांडे जैसे लोगों को व्यवहारवादी। कहानी ग्रामीण क्षेत्रों के स्कूलों की खराब हालात को भी दर्शाती है।

निष्कर्ष : कहा जा सकता है कि समकालीन कहानीकारों ने भूमण्डलोत्तर जीवन यथार्थ के परिदृश्य को अपनी रचनाओं का हिस्सा बनाया है। उनके लेखन में 'समकाल की चुनौतियों', संघर्षों, विसंगतियों, विद्रूपताओं, सौंदर्य, स्वप्न अपेक्षाओं का चित्रण हुआ है। यह चित्रण मनुष्य होने की गरिमा को बढ़ाने के पक्ष में है और अमानुषिकता की ओर बढ़े कदमों का प्रतिकार करती है। कैलाश वानखेड़े, नीलाक्षी सिंह, कैलाश बनवासी इसी की पक्षधरता अपनी कहानियों में करते हैं। इनकी कहानियाँ दलित-जीवन यथार्थ, स्त्री-जीवन यथार्थ, अल्पसंख्यक जीवन यथार्थ, किसान जीवन यथार्थ, मीडिया, यौन शोषण, नयी पीढ़ी की बदलती संवेदना, बदलते मूल्यों, सांप्रदायिकता, आम-जीवन में बढ़ती राजनीतिक दखलंदाजी, भूमंडलीकरण के प्रभावों, मनुष्यों के विस्थापन, पर्यावरण की चिंता, बेरोजगारी, पारंपरिक आजीविकाओं के उन्मूलन, विकास के नाम पर अधिग्रहण, बेदखली, प्रकृति एवं पर्यावरण के विनाश, असमान और असंतुलित विकास से पैदा हुए हालातों में छटपटाते जीवन की महीन शिनाख्त की है।

#### सन्दर्भ :

<sup>1</sup> मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण, 2022, पृष्ठ – 176

<sup>2</sup> [https://www.apnimaati.com/2025/06/blog-post\\_58.html](https://www.apnimaati.com/2025/06/blog-post_58.html)

<sup>3</sup> बिहारी, राकेश, 'केन्द्र में कहानी', शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण- 2013, पृष्ठ- 7

<sup>4</sup> बिहारी, राकेश, 'शब्द हमेशा व्याकरण की कोख से पैदा नहीं होते' (लेख), 2014, [www-jantakapaksh.blogspot.in](http://www-jantakapaksh.blogspot.in)

<sup>5</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 112

<sup>6</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 113

<sup>7</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 118

<sup>8</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 123

<sup>9</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 52

<sup>10</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 17

<sup>11</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 28

- <sup>12</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 30
- <sup>13</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 29
- <sup>14</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 37
- <sup>15</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 39
- <sup>16</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 90
- <sup>17</sup> सत्यापन, कैलाश वानखेड़े, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ – 94
- <sup>18</sup> नीलाक्षी सिंह, जिनकी मुट्टियों में सुराख था..., भारतीय ज्ञानपीठ, प्रथम संस्करण, 2012, पृष्ठ- 50|
- <sup>19</sup> कैलाश बनवासी, पीले कागज की उजली इबारात, पहला संस्करण, 2008, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, (उ.प्र.), पृष्ठ- 40-41
- <sup>20</sup> कैलाश बनवासी, पीले कागज की उजली इबारात, पहला संस्करण, 2008, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, (उ.प्र.), पृष्ठ- 126
- <sup>21</sup> कैलाश बनवासी, पीले कागज की उजली इबारात, पहला संस्करण, 2008, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, (उ.प्र.), पृष्ठ- 91
- <sup>22</sup> कैलाश बनवासी, पीले कागज की उजली इबारात, पहला संस्करण, 2008, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, (उ.प्र.), पृष्ठ- 80

फोन नं. 8076034790, ईमेल. [ajaysinghrawat912@gmail.com](mailto:ajaysinghrawat912@gmail.com)

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी (रजि.)  
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115  
Impact Factor : 8.642

# बोहल शोध मंजूषा



## Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES  
PEER REVIEWED, REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :

[www.bohalshodhmanjusha.com](http://www.bohalshodhmanjusha.com)

Email : [grsbohal@gmail.com](mailto:grsbohal@gmail.com)

Editor :

**Dr. Naresh Sihag, Adv.**  
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान  
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित



ISSN : 2321-8037  
Impact Factor : 7.834

# Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : [www.ginajournal.com](http://www.ginajournal.com)

Email : [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)

Office : 8708822674

Editor :

**Dr. Rekha Soni, Vice Principal**  
Education, Tanta University  
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ

द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639

Impact Factor : 6.521

# SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : <https://ginajournal.com/shodh-samalochan/>

Executive Editor : **Dr. Varsha Rani** M. 9671904323

Managing Editor : **Dr. Mukesh Verma** M. 9627912535

Editor :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**  
M. 8708822674

सानिया प्रकाशन एवं गिना प्रकाशन द्वारा

संयुक्त रूप से नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2394-6458

Impact Factor : 6.500

# RESEARCH JOURNAL OF MEEMANSA

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : <https://ginajournal.com/shodh-samalochan/>

Editor-in-Chief : **Dr. Lata S. Patil**

Managing Editor : **Dr. Jaivir Langyan** M. 9728790909

Editor :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**  
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्स भिवानी से छपवाकर कार्यालय #202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037





# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

हिंदी साहित्य की विकास यात्रा और बदलती  
परिस्थितियां : आदिकाल से वर्तमान काल तक एक  
आलोचनात्मक अध्ययन

*Authored by*

**Siksha**

Student, MAHARAJA AGARSAIN COLLEGE OF  
EDUCATION, DAROLI (HISAR)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 08-13

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

वैश्वीकरण और हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श

*Authored by*

देवेन्द्र कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर जूलाँजी,  
एफ. जी. एम. राजकीय महाविद्यालय आदमपुर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 14-17

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप

*Authored by*

सुचित्रा

विद्यार्थी, राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 18-24

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

बदलते भारतीय साहित्य में वृद्ध विमर्श का उत्कर्ष  
संवेदना से विमर्श तक

*Authored by*

पुष्पा

शोधार्थी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 25-29

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**हिंदी साहित्य और बाल मनोविज्ञान**

*Authored by*

**रमेश कुमार**

गुरु गोरक्षनाथ जी गवर्मेन्ट कॉलेज, हिसार।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 30-33

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

शिक्षा की वर्तमान स्थिति और आगे की राह :  
स्त्री आत्मकथा के संदर्भ में

*Authored by*

पूनम

शोधार्थी, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 34-39

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य का स्वरूप**

*Authored by*

**डॉ. रामकुमार**

हिंदी-विभाग, राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 40-44

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**हिंदी भाषा का वैश्विक प्रभाव**

*Authored by*

**श्रीमती सुनील कुमारी**  
सहायक प्राध्यापिका हिंदी,  
राजकीय महाविद्यालय आदमपुर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 45-51

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**वैश्वीकरण और हिंदी साहित्य में नारी विमर्श**

*Authored by*

**अक्षय कुमार, पीएच0 डी0 शोधार्थी**

**डॉ. सुनीता सिंह, शोध निर्देशिका**

हिंदी विभाग, ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 52-55

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

हनुमानगढ़ जिले के भू आवरण के बदलते स्वरूप पर  
नगरीकरण का प्रभाव : एक भौगोलिक अध्ययन

*Authored by*

भीमसेन मालिया, शोधार्थी,

डॉ. सचिन कुमार, शोध निर्देशक,

भूगोल विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 56-60

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

## **Role of Regional Rural Banks in Financial Inclusion : A Case on Uttar Bihar Gramin Bank**

*Authored by*

**Priti Kumari**, Research Scholar, Department of Commerce,  
B.R.Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur.

**Dr. Niraj Kumar Verma**, Assistant Professor, Dept. of Commerce,  
S.N.S. College, Muzaffarpur, B.R.Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur.

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 61-68

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag**, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**हिंदी साहित्य में संस्कृति का वैश्विक प्रभाव**

*Authored by*

**सुनीता देवी**

सहायक प्राध्यापिका (हिंदी)  
राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 69-76

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

आत्मकथा 'जूठन' में यथार्थ जीवन

*Authored by*

पुनीत भारती

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 77-80

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

भारतीय शिक्षा प्रणाली में कौशल-आधारित शिक्षा की  
आवश्यकता एवं संभावनाएँ तथा ग्रामीण एवं शहरी  
शिक्षा के बीच अंतर : चुनौतियाँ एवं समाधान

*Authored by*

डॉ. पूराराम मेघवाल

Assistant Professor, HoD.Faculty of Education,  
Institute of Advance Studies in Education Gandhi Vidya  
Mandir, Sardarshahar.

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 81-89

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*  
**Unsung Heroines of Resistance : A Historical  
Study of the Personality and Work of Women  
Freedom Fighters of Bihar and Their  
Contemporary Relevance for Young Women**  
*Authored by*

**Vikash Kumar Roushan**

Research Scholar,  
Sona Devi University.

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 90-100

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रसन्नता  
पर आशावादी व निराशावादी अभिवृत्ति के प्रभाव  
का अध्ययन

*Authored by*

सुप्रीति चावला, शोधकर्त्री  
डॉ. प्रीति ग्रोवर, शोध निर्देशिका, प्रोफेसर  
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 101-105

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

## To Study the Impact of Smart Phone Dependency on Social Adjustment of Adolescents

*Authored by*

**Varinder Kaur**, Researcher

**Dr. Sangeeta Agarwal**, Research Guide &  
Associate Professor, Tania University, Sriganaganagar

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 106-110

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag**, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

## Impact of Microplastics on Soil Microfauna — A Review

*Authored by*

**Dr. Bhavna Grover**

Assistant Professor Zoology,  
Dr. B.R. Ambedkar Govt. College, Sriganaganagar.

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 111-116

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag**, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

छत्तीसगढ़ में जल संरक्षण में सरकार द्वारा किए गए  
प्रयासों का अध्ययन

*Authored by*

डॉ. जसवंत सिंह जांगडे

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 117-119

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

स्मृतिशास्त्रसमालोके गार्हस्थ्यश्रमे  
नारीणां भूमिका

*Authored by*

ड.नटवरकयालः

natabarkayal@gmail.com

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 120-124

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

कुमाऊँ के आर्थिक विकास में अल्पसंख्यक समुदाय का  
योगदान : विकास खण्ड भीमताल में स्वनियोजित  
अल्पसंख्यकों का अध्ययन

*Authored by*

**सुनील कुमार**

शोधार्थी, अर्थशास्त्र विभाग

सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 125-131

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

कठोपनिषदः मतानुसारेण आत्मनः स्वरूपम्

*Authored by*

**SHRABANI MANNA**, पी.एच. डी शोधार्थी,

**DR. AJAY KUMAR**, शोध निर्देशक (असिस्टेंट प्रोफेसर)  
डिपार्टमेंट ऑफ संस्कृत, बिनोद विहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 132-135

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag**, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**हिंदी सिनेमा में भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति**

*Authored by*

**रुवेता कंडुलना**

शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग  
सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर, आणंद।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 136-141

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

‘अग्निदाह’ एवं ‘चार बेटों वाली माँ’ कहानियों में  
अभिव्यक्त वृद्ध-विमर्श

*Authored by*

परमार निशाबेन  
शोधार्थी

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 142-145

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

आत्मनिर्भर भारत के संदर्भ में गांधीवादी विचारों की  
प्रासंगिकता

*Authored by*

डॉ. राजेश गुप्ता

सह आचार्य—राजनीति विज्ञान,  
बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर (राजस्थान)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 146-158

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**A study on the Growth of E-commerce in  
India and its future prospects**

*Authored by*

**Ms. Shahin Shaikh**, Research Scholar

**DR. B.L. Patidar**, Research Guide

School of Studies in Commerce, Samrat Vikramaditya  
University Ujjain (M.P.)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 159-169

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag**, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

लोक संस्कृति में इतिहास लेखन-एक दृष्टि

*Authored by*

**डॉ. ज्योति रानी जायसवाल**

असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग,  
आर्य कन्या पी० जी० कालेज, प्रयागराज।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 170-176

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

🌐 <https://ginajournal.com/>

📞 8708822674

📞 9466532152

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL  
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध आयाम

*Authored by*

जयप्रकाश रौशन, शोधार्थी,

डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक,  
हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली (बिहार)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 177-183

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

प्रेमचंद युगीन समाज में नारी उत्पीड़न और  
सामाजिक सुधार : साहित्यिक विश्लेषण

*Authored by*

मनोज कुमार यादव, शोधार्थी,  
डॉ. विनोद कुमार शर्मा, शोध निर्देशक व प्राध्यापक, हिन्दी विभाग  
हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, वैशाली (बिहार)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 184-190

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

वैश्वीकरण के दौर में हिंदी साहित्य में हाशिये के  
समाज की पीड़ा : एक समालोचनात्मक अध्ययन

*Authored by*

**डॉ. नरेश कुमार**

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी  
राजकीय महाविद्यालय, आदमपुर (हिसार)

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 191-195

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

**भगवद्गीता में नेतृत्व एवं प्रबंधन सिद्धांतों का  
अध्ययन**

*Authored by*

**डॉ. रवि देव 'कर्मयोगी'**

पूर्व ए. एम.एच. डी. एस. एस. सी रक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।  
प्रदेश सह संयोजक, शिक्षक प्रकोष्ठ, भारतीय जनता पार्टी, दिल्ली।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 196-204

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

## Artificial Intelligence in Homoeopathy : A New Era of Individualized Prescription

*Authored by*

**Prof. Dr. Vijay Kumar Pushkar<sup>1</sup>, Prof. Dr Ruchi Wadhwa (Biswas)<sup>2</sup>,**

**Prof. Dr. Dileep kumar Sonkar<sup>3</sup>, Prof. Dr. Rinku Bishwas<sup>4</sup>, Dr. Mansi Srivastava<sup>5</sup>**

<sup>1</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom.), Principal -State National Homoeopathic Medical College & Hospital,  
Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>2</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.) (Sch.), Professor & H.O.D. –Dept. of Forensic Medicine & Toxicology -State  
National Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>3</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.), Professor & H.O.D. –Dept. of Physiology & Biochemistry-State National  
Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh

<sup>4</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D(Hom.) (Sc.), H.O.D. and Professor-Department of Pathology & Microbiology, State  
Lalbahadur shastri Homoeopathic Medical College and Hospital, Shantipuram, Prayagraj, Uttar Pradesh

<sup>5</sup>B.H.M.S., M.D.(Hom), Ph.D (Hom.) Assistant Professor –Dept. of Forensic Medicine & Toxicology -State National  
Homoeopathic Medical College & Hospital, Gomti Nagar, Lucknow, Uttar Pradesh.

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 205-210

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunanram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

## Research in Library and Information Science : Historical Development and Current Trends

*Authored by*

**ANIL KANT SAHU**

M.Lib.I.Sc, UGC-NET, Central University Gold Medalist  
Librarian (Guest), Government M.M.R Post Graduate  
College, Chhattisgarh

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,  
Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 211-216

*Rekha*

Director/Editor :

**Dr. Rekha Soni**

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

**Dr. Naresh Sihag, Advocate**

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)



# गीना देवी शोध संस्थान Gina Devi Research Institute



AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY  
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Gunganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

<https://doi.org/10.5281/zenodo.20514526>

*Certificate\* of Publication for the paper titled*

समकालीन कहानियों में भूमंडलोत्तर जीवन यथार्थ  
(कैलाश वानखेड़े, नीलाक्षी सिंह, कैलाश वनवासी की  
कहानियों के सन्दर्भ में)

*Authored by*

अजय सिंह रावत, शोधार्थी,

प्रो. संजीव कुमार दुबे,

हिन्दी अध्ययन विभाग, भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संकाय,  
गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कुंढेला, वड़ोदरा, गुजरात, भारत।

*Published in* **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-5, Page No. 217-226

*Rekha*

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

*Naresh*

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

\*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

📍 202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

📞 8708822674

📞 9466532152

🌐 <https://ginajournal.com/>

✉ [grngobwn@gmail.com](mailto:grngobwn@gmail.com)